व्यतीत किया। उसका लाज़िमी नतीजा था कि उनकी शायरी शोख, रगीन, चुलबुली, बाज़ारी और जवानकी शायरीके अतिरिक्त और कुछ न हो।

१३–१४ वर्षकी उम्रमें किलेमे पहुँचे तो वहाँ भी रगीन फिज़ा मिली। उन दिनो मुगलिया सल्तनतका चराग टिम-टिमा रहा था। बुझनेसे पूर्व टिमटिमाता हुआ दीपक जैसे प्रज्वलित हो उठता है। ठीक उसी स्थितिमें मुगल सल्तनत थी। शमशीरो-सनाके जौहर कभीके समाप्त हो गये थे। मगर ताऊसी-रुबाब तब भी मौजूद थे'। बेगमातके चोचले

१८४४ ई० में भाग्य चमका तो छोटी बेगमको मिर्ज़ा फख़रू (पुत्र बहादुरशाह बादशाह) ने अपने अन्त पुरमे डाल दिया। इनमे १८४५ ई० में मिर्ज़ा खुरशीदआलम पैदा हुए। इस सम्बन्धका नक्शा मौ० मुहम्मद हुसेन आज़ादने यूँ खीचा है––

"शहरमे छोटी बेगम नाम एक हसीन साहिबेजमाल अपने हुनरकी बा-कमाल थी। उम्रकी दोपहर ढल चुकी थी और कितने ही अमीरोको मारकर हजम कर चुकी थी। उस पर भी लडकपनकी कलियाँ चुनती थी। मिर्ज़ा फखरूकी २४–२५ बरसकी उम्र थी। रण्डीको नौकर रखकर गुलाम हो गये।"

किलेमे पहुँचनेपर मिर्जा 'दाग' की भी याद आई, अत वे भी १८४४ में १४ वर्षकी उम्रमें किलेमे बुला लिये गये। १० जुलाई १८५६ ई० को मिर्ज़ा फखरूका देहान्त हो गया। छोटी बेगम इस समय लगभग ४३–४४ वर्षकी थी। १० माहके बाद ग़दर हो गया। इसी ऐय्याममे एक अंग्रेज़ अफसरके साथ छोटी बेगमको ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ी। जिसकी निशानी एक लडकी हुई। जिसका नाम मसीहजान उर्फ बादशाह बेगम और तखल्लुस 'खफी' था।

'सर इकबालके इस शेरकी तरफ इशारा है—

ख़वासोंके नख़रे, मुगलानियोकी शोखियाँ, शहजादियोकी अठखेलियाँ और शहजादोकी रगरेलियाँ निरन्तर १३ वर्ष देखते-सुनते मिर्जा 'दाग' किशोरसे युवा हुए।

मादक नृत्य, सुरीले गान, दौरे-शराब, मद-भरे नैनोकी मारमे मिर्जा 'दाग' भी वही बोल बोलने लगे, जो बोल किलेमे बोले जाते थे। एक तो वह उम्र ही अल्हड और दिल-फेक, फिर उसपर वोह मादक समाँ। किलेकी टकसाली एव रसीली उर्दू, जौक-जैसा जबान और मुहावरोका वादशाह उस्ताद मिला। फिर क्या था 'दाग' का कलाम हवामे गूँजने लगा। रगीन मिजाज उनके कलामको सीनेसे लगाये फिरने लगे। गदरके बाद रामपुर गये तो वहाँ भी वही वातावरण मिला। लखनवी शायरोंके जमघटे, और नवावकी रगीन मिजाजीने और भी हवा दी। 'दाग' का रग उत्तरोत्तर पक्का होता गया, दिन दूना, रात चौगुना निखरता गया।

१८८७ ई० के बाद रामपुर छोडकर हैदराबाद रहना हुआ, तो वहाँका ऐशो-निशात (भोग-विलास) सब पर बाजी ले गया। नवाबके उस्ताद, उच्च पदवियोसे विभूषित, राज्योचित मान-प्रतिष्ठा, शाही ठाट-बाट, १५०० रु० मासिक पेशनके अतिरिक्त जागीर और इनाम इकराम अलग।

दाग़ स्वभावत सौन्दर्योपासक और आशिक मिजाज थे। गाना सुननेका बेहद शौक था। दो-तीन तवायफोको १५०—२०० रु० मासिक

मैं तुमको बताता हूँ तक़दीरे-उमम क्या है ?
"शमशीरो-सना अव्वल, ताऊसो-रुबाब आख़िर" ॥

[मुसलमानके भाग्यकी कुजी यही है कि वह तलवार-तीरको हाथसे न छोडे—सैनिक बना रहे। राज्यसिंहासन और साज-सगीत तो अपने आप मिल जायेंगे] लेकिन उन दिनो किलेमें ठीक इसके विपरीत स्थिति थी।

पर नौकर रखते थे। साडवजान, उम्दाजान, अख्तरजान, और मुन्नीजान 'हिजाव' आदि तवाइफोसे उनके सम्बन्ध थे। वकील नवाव हसनअली खाँ "दागको अच्छी सूरतसे इश्क था और जब कभी किसी हसीनकी सुहबत मयस्सर न आती थी तो उन्हे वहशत-सी होने लगती थी।[1]।"

यही तवाइफे जब इनका दामन झटककर किसी गैरके पहलूको सजाने लगती थी तो 'दाग' इनके गमे-हिज्रमे बेचैन हो उठते थे[2]। उनकी शायरी ऐसी ही औरतोके इश्क-ओ-हिज्रसे लवरेज़ है।

'दाग' का इश्क गो बाज़ारी है, मगर वह अनुभूत है। इसीलिए उनकी शायरीमे जो स्वानुभव व्यक्त हुआ है, वही उनकी शायरीकी सबसे वडी विशेषता है और इसी विशेषताके कारण वे अपने समकालीन शायरोमे श्रेष्ठ और यकता नज़र आते है। उन्होने न तो हाथमें तस्बीह लिये-लिये हुस्नो-इश्ककी नग्मासराई की है, न कावेका तवाफ (परिक्रमा) करते हुए

---

[1]'निगार' जनवरी १९५३ पृ० ११०।

[2]'अख्तरजान' इनकी नौकरी छोडकर एक सेशनजजकी नौकर हो गई। एक दिन दागने अपना मुलाज़िम भेजकर उसे बुलाना चाहा। मुलाज़िमने काफी डोरे डाले, लेकिन वह आनेको तैयार न हुई और आदमीसे कहा कि उनसे कह दे "मेरी वला भी नही आती।" मुलाज़िमने यही जुमला आकर 'दाग' से दोहरा दिया। 'दाग' लुत्फ अन्दोज़ीकी खातिर बार-बार उससे दरियाफ्त करते थे कि उसने क्या कहा, और वह इसी जुमलेको दुहराता जाता था। इसी कैफियतमे उन्होने पासमें बैठे नवाब यारजग बहादुरसे कहा—लिखो—

यह क्या कहा कि मेरी बला भी न आयेगी।
क्या तुम न आओगे तो कज़ा भी न आयेगी॥

यह किस्सा 'दाग' साहवके देहान्तसे कोई १॥। वर्ष पहिलेका है। यानी उस वक्त उनकी उम्र ७४ वर्षके लगभग थी।

सनमखानोकी मदह (प्रशसा) की है, और न वजू करते हुए जाहिदो-शेखकी दस्तार उछाली है। बल्कि कूच-ए-इश्कमे जो अनुभव हुए, उन्हीको जबानकी चाश्नीमे लपेटकर पेश किया है। यही वजह है कि उनके एक-एक शेरपर आज भी लोग सर धुनते है। उनकी तबीयतमे बलाकी शोखी थी, जो मरते दम तक साथ रही, और यही सब उनकी शायरीकी सफलताके कारण है। अल्लामाँ नियाज फतहपुरी लिखते है—

"'दाग' ने अपनी जिस रगकी शायरीसे शोहरत हासिल की, वह सिर्फ 'दाग' के लिए मखसूस (नियत) न था। उस वक्तके तमाम शुअरा एक ही हमामके नहानेवाले थे। लेकिन यह वाकया है कि 'दाग' से ज्यादा कोई दूसरा शायर मकबूल (जन साधारण-प्रिय) न हो सका। कूच-ओ-बाज़ार रक्स-ओ-सरूद (नृत्य-गानकी महफिलो) मे हजरत 'दाग' ही का सिक्का चलता था और उन्हीकी गज़लोपर दुनिया सर धुनती थी। 'दाग' के हम असर (समकालीन) शुअरामे उस वक्त अलावा 'अमीर' के 'मुनीर' शिकोहाबादी, 'जलाल' लखनवी, और 'तसलीम' लखनवी, भी ज़िन्दा थे। लेकिन 'दाग' से ज्यादा कबूले आम (जन-प्रियता) किसीको हासिल न हो सका और उसके कुछ असबाब (कारण) भी थे।

'दाग' के कलाममे ज़बानो-बयान (भाषा और कथन) के लुत्फके अलावा एक चीज़ और भी है, जिसने उसे मशहूर कर दिया और वोह उसका तेवर है। 'दाग' को इस बातमें बड़ा मलका हासिल (अभ्यास) था कि बात ख्वाह कैसी ही मामूली कहे, लेकिन उसमें ऐसी बेतकल्लुफी, ऐसा तेवर और तीखापन होता था कि काफिया जाग उठता था और पूरा शेर सजकर रह जाता था। 'दाग' की एक गज़ल है—'काम नहीं' 'कयाम नहीं' इस जमीनमे कलामका काफिया बिल्कुल सामनेका है, और उसको नज्म करनेकी सूरतें भी मुख्तलिफ (भिन्न-भिन्न) हो सकती है। लेकिन 'दाग' ने उसे जिस पहलूसे सर्फ किया (बान्धा), वह उन्हीका हिस्सा था। लिखते है—

सुनाई जाती है दर-परदा गालियाँ मुझको।
कहूँ जो मैं तो कहे, "आपसे कलाम नहीं" ॥

इस काफियेको नज्म करनेमे 'दाग' का ख़याल महबूबकी जिम तीखी अदाकी तरफ मुन्तकिल हुआ (गया) है। अगर वह असली ज़िन्दगीमे इससे दो-चार न हुआ होता तो कयामततक इस पहलूसे यह काफिया नज्म न कर सकता।. . . 'दाग' की खसूसियत (विशेषता) का पता उस वक्त चलता है, जब एक ही रदीफ-ओ-काफियोमे—दूसरोके अशआरके साथ 'दाग' के अशआरका मुकाबिला किया जाय। एक ज़मीन है—'आहमे, चाहमे'। इसमे निगाहके काफियेको 'दाग' 'अमीर' और 'जलाल' सबने नज्म किया है।

अमीर— आँख अपनी फित्नाहा-ए-कयामतपै क्या पड़े ?
जिसके यह फित्ने है, वोह है अपनी निगाहमें ॥

[दूसरे मिसरेमे 'है' और 'है' के समीप होनेसे बेलुत्फी आगई है]

जलाल— शोख़ी, फरेब, सहर, फसूँ, लाग, शोब्दा।
कितने करिश्मे देखे तेरी इक निगाहमें ॥

शेरमे तकल्लुफ ही तकल्लुफ है। ताहम अमीरके शेरसे अच्छा है। गो कोई ख़ास बात नही।

दाग— दिलमें समा गई है, कयामतकी शोख़ियाँ।
दो-चार दिन रहा था किसीकी निगाहमें ॥

दागने जिस ज़ाविये निगाह (दृष्टिकोण) को सामने रखकर इस काफियेको निबाहा है, वह बिल्कुल नया और अछूता है।

अमीर— उठता नहीं है अब तो कदम मुझ गरीबका।
मंज़िलसे कह दो दौडके ले मुझको राहमें ॥

'अमीर' का ज़ाविये निगाह इस काफियेमे जरूर नया है, लेकिन ख़ुद मंज़िलका दौडकर किसीको राहमे लेना, हकीकतसे मुतबाइद (वास्तविकतासे दूर) और यकसर तकल्लुफ-ओ-तसन्नोह (कृत्रिम) है।

दाग़—

आतो है बात-बात मुझे याद बार-बार।
कहता हूँ दौड़-दौड़के कासिदसे राहमें ॥

पूरा शेर साँचेमें ढाला हुआ है। और एक ऐसे तजरुबेको पेश कर रहा है, जो मुहब्बतमे अक्सर पेश आता है। 'अमीर' को चूंकि मुहब्बत और बेकरारी-ए-मुहब्बतकी सआदत कभी नसीब न हुई थी। इसलिए उनका ज़हन (ध्यान) उस तरफ मुन्तकिल (आकर्षित) हो ही न सका था"।[1]

अब हम मिर्ज़ा 'दाग' के और उनके समकालीन शायरोके चन्द तुलनात्मक अशआर बगैर किसी टिप्पणीके पेश कर रहे हैं, ताकि पाठक स्वय उनकी विशेषताओका अनुमान लगा सके।

जलाल—

सुना जो उसने कि मरते हैं हम, तो ख़ुश होकर।
वोह बख़्शवानेको, क्या अपने सब कसूर आया ॥

तसलीम—

बड़ी उमीद थी महशरमें सामना होगा।
वहाँ भी काम न मेरे, मेरा कसूर आया ॥

अमीर—

शौक़से मैंने जो ख़जरके तले सर रख दिया।
छेड़नेको हाथसे कातिलने ख़ंजर रख दिया ॥

जलाल—

दौड़कर जो हमने उनके पाँवपर सर रख दिया।
बोले ठुकराकर "कहाँ फूटा मुकद्दर रख दिया" ?

दाग़—

ख़ुदाने बख़्श दिये हश्रमें बहुत आशिक।
ख़याले-यारमें कोई न बेकसूर आया ॥

---

[1] निगार जनवरी १९५३ ई०, पृ० ४–६।

दाग़— हमने उनके सामने अव्वल तो ख़ंजर रख दिया।
फिर कलेजा रख दिया, दिल रख दिया, सर रख दिया ॥

———

जलाल— कहते हैं मुर्ग़ेचमन "हमको यहीं ले न उड़े।
शक है झोंके पै सबाके भी कि सैयाद आया" ॥

मुनीर— इस चमनमें हविसे-क़ैद भी निकली न कभी।
पत्ते खड़के जो, मेरे ख़्वाबमें सैयाद आया ॥

दाग़— छूटकर कुजे-क़फ़ससे भी यह खटका न गया।
जब सबा आई तो जाना, वहीं सैयाद आया ॥

———

अमीर— जब वही हूर नहीं, ख़ुल्दमें तो ऐ दावरे-हश्र !
झोंक देता मुझे दोज़ख़में तो अहसाँ होता ॥

दाग़— हश्रके रोज़ तुझे पासे-अदालत होगा।
बख़्श देता जो यहीं जुर्म तो अहसाँ होता ॥

———

जलाल— रात गुज़री थी चमनमें, सुबह होते उठ गया।
आबो-दाना बुलबुलोंका क़तरये-शबनम हुआ ॥

दाग़— बे असर हो तो भी तूफ़ाँ हो, नहीं दरिया तो हो।
हसरत उस आँसूपै है जो कतरये-शबनम हुआ ॥

———

अमीर— लाऊँ मैं उससे दिलमें कदूरत मुहाल है।
यह लाल ख़ाकमें तो मिलाया न जायगा ॥

दाग़— दिल क्या मिलाओगे कि हमें आ गया यक़ीं।
तुमसे तो ख़ाकमें भी मिलाया न जायगा ॥

———

अमीर— आँखोंने जो देखा तो उसे दिलने पुकारा।
"मैंने अभी ऐ जलवये-जानाँ नहीं देखा"॥

दाग़— क्या जौक है, क्या शौक है, सौ मर्तबा देखूं।
फिर भी यह कहूँ जलवये-जानाँ नहीं देखा॥

अमीर— आनेवाला, जानेवाला बेकसीमें कौन था।
हाँ मगर इक दम गरीब आता रहा, जाता रहा॥

दाग— अब कई दिनसे वोह रस्मो-राह भी मौकूफ है।
वरना बरसों नामाबर आता रहा, जाता रहा॥

जलाल— गुनाह बोले जो घबरा गया मैं महशरमें।
"अभी तो पुरसिशे-ऐमाल थी, हिसाब न था॥"

दाग— न पूछ मुझसे मेरे जुर्म दावरे-महशर!
मेरे गुनाहोका दुनियाँमें भी हिसाब न था॥

जलाल— लाख अहसान जनाजेपै गराँबारीके।
दो कदम कूचये-महबूबसे चलने न दिया॥

दाग़— बद गुमानीने न चाहा उसे तनहा छोड़ूँ।
मैंने कासिदको अलग राहमें चलने न दिया॥

अमीर— बहार आई लुँढाते ख़ुम-के-ख़ुम हम बादाख़्वारोंमें।
कहो तौबासे चन्दे जा रहे परहेज़गारोंमें॥

अमीर— जिगर रोता है दिलको, दिल जिगरको, तुर्फा मातम है।
वोह इसके सोगवारोंमें, यह उसके सोगवारोंमें॥

दाग— किसीका दिल तो क्या, शीशा न टूटा बादाख़्वारोंमें।
यह तौबा टूटकर क्यों जा मिली परहेज़गारोंमें॥

जलाल— वोह मातम बज़्मे-शादी है, तुम्हारी जिसमें शिरकत हो।
वोह मरना जिन्दगी है, तुम जहाँ हो सोगवारोंमें॥

दाग़— ख़ुशी मर्गे-उदूकी लाख ग़मसे होगई बदतर।
मेरी आँखोंने देखा है, किसीको सोगवारोंमें॥

अमीर— मस्जिदोंमें है, यह हू-हक़के कहाँ हँगामे।
२ गे-तौहीद उछलता है ख़राबातोंमें॥

दाग़— अबरे-रहमत ही बरसता नज़र आया ज़ाहिद!
ख़ाक उडती कभी देखी न ख़राबातोंमें॥

अमीर— आज़माइशमें जान लेते हैं।
ख़ूब आप इम्तहान लेते हैं॥

दाग़— साफ कब इम्तहान लेते हैं।
वोह तो दम देके, जान लेते हैं॥

अमीर— वोह दिलकी ताक़में जब शौकसे बन ठनके बैठे हैं।
तो सौ ग़मज़ोंसे दिलपर तीर उस चितवनके बैठे हैं॥

दाग़— दिलोंपर सैकडों सिक्के तेरे जोबनके बैठे हैं।
कलेजोंपर हजारो तीर इस चितवनके बैठे हैं॥

जलाल— शौककी बेख़ुदियोंने यह किया गुम मुझको।
ढूँढ़ता हूँ मैं तुम्हें, ढूँढ़ते हो तुम मुझको॥

दाग़— अरसये-हश्रमें अल्लाह करे गुम मुझको।
और फिरो ढूँढ़ते घबराये हुए तुम मुझको॥

अमीर—— मैं जो मर जाऊँ तो ऐ पीरे मुगाँ ! कह देना।
मुगजचे[1] खींचके डाल आयें पसेखुम मुझको॥

जलाल—— या रब ! आबाद रहे जेरे-फलक बादापरस्त।
लाके मैखानेमें गाडा है, तहे-खुम मुझको॥

दाग—— देखना पीरेमुगाँ ! हजरते वाइज तो नहीं।
कोई बैठा नजर आता है, पसेखुम मुझको॥

तसलीम—— वक्ते-आखिर है उन्हें रुखसत करो 'तसलीम' अब।
कौन जाने क्या हो दममें, क्या-से-क्या होने लगे॥

दाग—— गैरके मजकूरपर मेरा बिगडना था बजा।
ठहरो-ठहरो, सम्भलो-सम्भलो, क्या-से-क्या होने लगे॥

तसलीम—— चाहता हूँ इतनी मैं तासीर अपने इश्कमें।
शर्मके उठ जायँ परदे सामना होने लगे॥

अमीर—— इक जरा देख तो क्या कहते हैं मरनेवाले।
ओ गरीबोंके मजारोंपै गुजरनेवाले॥

जलाल—— तेरे सब नाज हैं, गो जिन्दा ही करने वाले।
ढूंढ़ रखते हैं बहाना कोई मरनेवाले॥

मुनीर—— गुजरे जायेंगे यूँही जैसे गुजरनेवाले।
तुम सलामत रहो, जीते रहे मरनेवाले॥

दाग—— 'दाग़' मैं परचा ही लूंगा, बातों-बातोंमें उन्हें।
शर्त ये है मेरा उनका सामना होने लगे॥

---

[1]शराब पिलानेवाले खूबसूरत लडके,

दाग़—
यह तो पूछें मेरे मरकदपै गुज़रनेवाले।
"क्या गुज़रती है तेरी जानपै मरनेवाले" ?

अमीर—
है जवानी ख़ुद जवानीका सिंगार।
सादगी गहना है इस सिनके लिए॥

दाग़—
कुछ निराला है जवानीका बनाव।
शोख़ियाँ जेवर है इस सिनके लिए॥

अमीर—
वस्लका दिन और इतना मुख़्तसर ?
दिन गिने जाते थे इस दिनके लिए॥

दाग़—
फ़ैसला हो आज मेरा आपका।
यह उठा रक्खा है, किस दिनके लिए ?

अमीर—
सारी दुनियाके हैं वोह मेरे सिवा।
मैंने दुनिया छोड़ दी जिनके लिए॥

दाग़—
वोह नहीं सुनते हमारी क्या करें ?
माँगते थे हम दुआ जिनके लिए॥

जलाल—
बाग़से कर लेगया सैयाद मुझको कब असीर ?
जब ख़िज़ाँ जानेको थी, फ़स्ले-बहार आनेको थी॥

तस्लीम—
वाये किस्मत कब किया सैयादने क़ैदे-क़फ़स ?
जब ख़िज़ाँ जानेको थी, फ़स्ले-बहार आनेको थी॥

अमीर—
दिलो-जिगरकी तड़प देखकर वोह कहते हैं।
कि मुद्दईसे भी चालाक यह गवाह मिले॥

दाग़—
बाद मेरे क्यों नवीदे-वस्लेयार आनेको थी।
वोह चमन ही मिट गया जिसमें बहार आनेको थी॥

जलाल— पुकार उठूं जो दुबारा तेरी निगाह मिले।
कि दिलको ले गई आँख उसकी, दो गवाह मिले॥

दाग— कहाँ थे रातको हमसे जरा निगाह मिले।
तलाशमे हो कि झूठा कोई गवाह मिले॥

अमीर— घबरा न हिज्रमें बहुत ऐ जाने मुजतरिब!
थोड़ी-सी रह गई है उसे भी गुजार दे॥

दाग— दिल दे तो इस मिजाजका परवर्दगार दे!
जो रंजकी घड़ी भी खुशीसे गुजार दे॥

अमीर— कहते हैं "आज तो नाखूनसे दी मेरे तशबीह।
कल कहोगे मेरे अबरूसे हिलाल अच्छा है"॥

दाग— या दिखादो मुझे तुम पांवका नाखुन अपना।
या यह कह दो "मेरे नाखुनसे हिलाल अच्छा है"॥

अमीर— न चूक वक्तको पा करके है यह वोह माशूक।
कभी उमीद नहीं जिससे जाके आनेकी॥

जलाल— ठहर रही है जो आँखोमें जाने-वक्त अखीर!
यह मुन्तजिर है किसी बेवफाके आनेकी॥

दाग— बना हूँ मैं नफसे-वापिसीं नकाहतसे।
न आके जानेकी ताकत न जाके आनेकी॥

अमीर— न सुने दर्दे-दिल मेरा न सुने।
मैं कहूँगा वोह सुने या न सुने॥

दाग— मेरी फरियाद दूसरा न सुने।
तुम सुनो ऐ वुतो! खुदा न सुने॥

अमीर—
आहें करना कहीं तू यूँ ऐ दिल !
कोई मेरे तेरे सिवा न सुने ॥

दाग—
हिज्रमें जो दुआएँ मांगी हैं।
कोई अल्लाहके सिवा न सुने ॥

दाग देहलीमे पैदा हुए और वही उनका लालन-पालन हुआ, लेकिन उनकी शायरीको देहलीकी दाखिली शायरीसे दूरका भी वास्ता नही। उन्होने जव कूच-ए-शायरीमे कदम रखा तो वहाँ 'गालिव' और 'मोमिन'—जैसे अमर कलाकार अपना कौशल दिखला रहे थे, परन्तु उनसे वे कोई लाभ नही उठा सके। क्योकि 'दाग' किलेके जिस वातावरणमे परवान चढ रहे थे, और उस्ताद 'ज़ौक' से जिस प्रकारका दर्से-शायरी (कविता-पाठ) ले रहे थे, उससे यह सम्भव ही नही था कि वे 'गालिव' और 'मोमिन' की सुहबतका कुछ लाभ उठा सकते।

'दाग' की शायरीमे हृदयगत भावो, उच्च विचारो और पवित्र प्रेमका अभाव है। उनकी शायरीमे मीर, दर्द, गालिबकी शायरीके तत्व न मिलकर 'जुरअत' और 'इन्शा'-जैसे शोख रग घुले-मिले हैं।

लेकिन जहाँतक 'दाग' के लबोलहजा, तेवर, बाँकपन, शोखिये-बयान, ज़वानके चटखारे और मुहावरोके चुस्त इस्तेमालका सम्बन्ध है[1], उसमे वे अपना जवाव नही रखते।

---

[1]मिर्जा 'ग़ालिब' भी 'दाग' की भाषा और मुहावरोके प्रयोगके प्रशसक थे। मुहम्मद निसारअली 'शुहरत' ने 'आईनयेदाग' में लिखा है—"एक रोज़ मैं मिर्ज़ा गालिबकी खिदमतमे हाजिर हुआ। उसवक़्त आप खानानोश फर्मा रहे थे। मैं बाअदब एक तरफ बैठ गया। आपने एक रगतरा (शतरा) मेरी तरफ फेंका कि इससे शगल कीजिये। चूकि रमज़ानका महीना था और मुझे रोज़ा था। मैंने उस रगतरेको

'दाग' की यही विशेषताये उनके शिष्योको विरासतमे मिली और वे भी सब (इकबाल, सीमाब, जोश मलसियानी के अतिरिक्त) जीवन भर इसी कूचेमे गुलफिशानियाँ करते रहे। गो कभी-कभी जमानेके उलट-फेर और समयके वहावमे इन्होने भी परिवर्त्तन किया, परन्तु मुख्य और प्रिय रग वही रहा जो उस्तादका था। किसी शायरके सम्बन्धमे केवल इस दृष्टिकोणसे अच्छी या बुरी धारणा बना लेना कि वह अश्लील कहता है या पवित्र, उचित नही। नग्न चित्र केवल इसीलिए तिरस्कार योग्य नही हो सकता कि वह नग्न है। यदि वह कलापूर्ण है और चित्रकार उसमे जो भाव व्यक्त करना चाहता था, वे सब उससे व्यक्त हो रहे है,

---

हाथ नही लगाया। आप ताड गये और फर्माते क्या है—"हाँ आप मौलवी हो गये है।" मै हँसा तो आप भी मुसकराने लगे। जब आप खाना नोश फर्मा चुके तो कलमी रिसाला आपके सामने रखा था, उसमे कुछ बनाने (सशोधन करने) लगे। गालिबन इस्लाह दे रहे थे। मैंने गुज़ारिश (प्रार्थना) की—'जनाव क्या इरकाम फर्मा रहे है (लेखन-कार्य कर रहे है!)' तो फर्माने लगे—'इसमे फारसी अल्फाज़ (शब्द) बहुत ठूँस दिये गये है। इसलिए उन्हे निकाल रहा हूँ और शुस्ता (सरल) उर्दू अल्फाज़ इसमें डाल रहा हूँ। मैंने अदबके साथ गुज़ारिश की—'आपका दीवान भी तो फारसी से माला-माल है।' फर्माने लगे—'वे जवानीकी नाजुक खयालियाँ है। बाज़ शेर तो ऐसे अदक (कठिन) मेरे कलमसे निकल गये है कि मै अब उनके मायने खुद नही बयान कर सकता।' फिर फर्माने लगे—'देहली वालो' की जो उर्दू है, उसको ही अशआरमे लिखना चाहिए। आखिर उम्रमे तो हमारी यही राय कायम हुई है।' मैंने अदबके साथ गुज़ारिश की—'दाग' की उर्दू कैसी है? फर्माने लगे—ऐसी उम्दा है कि किसीकी क्या होगी। 'ज़ौक' ने उर्दूको अपनी गोदमें पाला था। 'दाग' उसको न फकत पाल रहा है, बल्कि उसको तालीम दे रहा है।"

[निगार, अप्रैल १९५३, पृ० ३८–३९]

तो वह चित्र उन सैकडो चित्रोके आगे प्रशसनीय है, जो किसी देवताके नाम पर किसी फूहडने बनाये है। शेरकी भी परख इसी दृष्टिकोणसे करनी चाहिए कि, जो शायर कहना चाहता था, उसे वह सलीकेसे कह सकनेमे सफल हुआ है या नही। शायरी भी एक चित्रकला है। चित्रकारोमे कोई प्राकृतिक दृश्योपर मोहित होता है तो कोई पशु-पक्षियोपर तूलिका चलाता है। कोई देवी-देवताओके चित्र बनानेमे महारत रखता है तो कोई दीन-दुखियोमे खोया रहता है। कुछ सौन्दर्योपासक है तो कुछ व्यग चित्र बनाते नही अघाते।

इसीप्रकार बाज शायर उपमाओ-अलकारोकी छटा बखेरते है तो बाज़ शब्दोके रख-रखावकी झडी लगाते है। कुछको हुस्नो-इश्ककी रगीन दास्तान पसन्द है तो कुछको व्यथापूर्ण उद्गार रुचिकर है—

पसन्द अपनी-अपनी नज़र अपनी-अपनी

यही कारण है कि एक ही मिसरेपर शायर अपनी प्रकृति एव स्वभावके अनुसार भिन्न-भिन्न तरीकोसे शेर कहते है। आशा है पाठक इसी दृष्टि-कोणसे हर शायरके कलामका अध्ययन करेगे।

हमारे देखते-देखते बज़्मे-अदबसे कितनी ही विभूतियाँ उठ गई, जो बची है अपनी ज़िन्दगीकी आखिरी मज़िलोमे है। उनका रगे सुखन पुराना हो चुका है, उनकी आवाज़े थक चुकी है। फिर भी उनका दम गनीमत है, उन्होने पुराने लोगोकी आँखे देखी है और अपने सीनेमें वे कीमती इतिहास छुपाये बैठे है। बकौल इकबाल—

न पूछ इन ख़िरक़ापोशोंकी, इरादत हो तो देख इनको।
यदे-बेज़ा लिये बैठे है, अपनी आस्तीनोमें[1]॥

२५ फ़रवरी १९५४ ई०]

---

[1]इन भिक्षुक-से दीखनेवाले फटेहाल व्यक्तियोकी कुछ न पूछिये, बहुत पहुँचे हुए लोग है। यदि जाननेकी अभिलाषा है तो इन्हे श्रद्धापूर्वक समीपसे देखो। तब मालूम होगा कि इनमे कैसे-कैसे चमत्कार छिपे हुए हैं।

शेख आशिकहुसेन साहब 'सीमाब' १८८० ई०मे आगरेमे जन्मे। अरबी-फारसीकी पूर्णरूपेण शिक्षा प्राप्त करनेके अतिरिक्त एफ० ए० तक अग्रेज़ी भी पढी। शायरीका शौक स्वभावत था। स्कूलमें पढते हुए फारसीकी पाठ्य पुस्तकोंके फारसी अशआरको आप उर्दूका रूप देकर अपने शिक्षकको दिखाते रहते थे। यही आपका दैनिक कार्य था। एक बार जब आपने 'बोस्ताँ'की एक कहानी नज्म करके शिक्षकको दिखाई तो उन्होने उसी पृष्ठपर यह शेर लिख दिया—

जब नहीं है शेर कहनेका शऊर।
फिर भला है शेर कहना क्या जरूर ?

लेकिन मुसकराकर यह भी फर्माया कि "कल फिर किसी फारसी नज्मका तर्जुमा उर्दूमे नज्म करके लाना।" इसी तरह आपका धीरे-धीरे अभ्यास बढता गया। पिताके निधनके कारण आपको १७ वर्षकी उम्रमे कालेज छोडना पडा, और आजीविकाके लिए कानपुर जाना पडा। अभीतक आप शायरीमे किसीके बाकायदा शिष्य नही थे। अत' मुशायरोमे गज़ल कहनेका साहस नही होता था। १८९८ ई०में आप मिर्ज़ा

दागके शिष्य हो गये। अभी आपने २-३ गज़ल ही उनके पास सशोधनके लिए भेजी थी कि उस्तादने लिख भेजा कि "अभी आपको मश्ककी जरूरत है।" उस्तादके आदेशानुसार आपने उनके पास गज़लें भेजना बन्द करके खूब अभ्यास किया। कई मासके निरन्तर अभ्यासके बाद उस्तादके पास गजल भेजी तो उस्तादने सशोधनके साथ यह भी लिखा—"आफरीं है, क्या खूब गज़ल कही है।" उस्तादके इन शब्दोसे आपके उत्साहमे दिन-दूनी, रात-चौगनी उन्नति हुई। हौसले बढते गये, झिझक निकलती गई, और नि सकोच मुशायरोमे शिरकत फर्माने लगे। उस्तादके निधनके बाद किसी अन्यको सशोधनके लिए कलाम नही दिखाया। स्वयके अध्यवसायसे शायरीमे यह रुत्बा प्राप्त किया।

आप कानपुर, अजमेर, आगरेमे पहले नौकरी करते रहे, किन्तु जब आपको यह महसूस हुआ कि 'मेरा जन्म साहित्य-सेवाके लिए ही हुआ है' तो आप १९२९में आगरेमे स्थायी रूपसे रहकर जीवन पर्यन्त साहित्य-सृजन करते रहे। 'शायर' मासिक पत्रके प्रकाशनके साथ आपने निम्न-लिखित उपयोगी ग्रन्थ भी लिखे—

१—**कारे-अमरोज़**—१५० नज्मोका पहला सकलन।

२—**साज़ो-आहग**—नज़्मोका दूसरा सकलन।

३—**कलीमे-अज्म**—गज़लोका पहला सकलन।

४—**सदरुलमिन्तहा**—१९३६ से १९४२ तक की गज़लोका दूसरा सकलन।

५—**आलमे-आशोब**—द्वितीय महायुद्ध और तत्कालीन वातावरण-पर १९४०से १९४३ तक कही हुई ३०० रूबाइयाँ।

६—**शेरे-इन्कलाब**—इन्कलाब सबधी नज्मोका सकलन।

७—**दस्तूरउलइस्लाह**
८—**राजेउरूज** } शायरीका व्याकरण।

९—नफोरेग्राम }
१०—सरूदेग्राम } इस्लाम सबधी।

११—इल्हामेमजूम भाग ६—मौलाना रूमके फारसी कलामको उर्दूमे नज्म किया गया है।

हज़ारसे ऊपर आपके शिष्य भारतके कोने-कोनेमे विद्यमान है। भारत-विभाजनके फलस्वरूप आपको भी १६ अगस्त १९४८को भारत छोडकर पाकिस्तान जाना पडा। यह विधिकी कैसी विचित्र लीला है कि जो व्यक्ति अपने देशको स्वतन्त्र देखनेको जीवनभर तडपता रहा, देश-वासियोको गुलामीकी जजीरे तोड फेंकनेके लिए उकसाता रहा, साम्प्र-दायिकोंके गढोपर निरतर हमले करता रहा, मानव-सेवा जिसका दीन और ईमान रहा, उसी व्यक्तिको अपने देशमे समाधिके लिए दो गज़ ज़मीन न मिल सकी। उसे उसी पाकिस्तानमे दफ्न होना पडा, जिसका वह घोर विरोव करता रहा। वीमारीकी हालतमें आपने अपने पुत्र एजाज सिद्दीकीसे फर्माया—

"मसाइब (मुसीबतो)से घबराना नही, खुद एतमादी (आत्म-विश्वास)से काम लेना। मेरे मिशनको जारी रखना, मेरी तहरीको (आन्दोलनो)को आगे वढाना, मेरे तमाम शागिर्दोंको मुत्तहद (सगठित) करना, मेरी वकीया कितावोको मुरत्तव करके छपवाना। तुम .. तुम तुम जिम्मेदार हो। अल्लाह तुम्हारी मदद करे। मैं करॉंचीमे मरना नही चाहता, मुझे आगरा ले चलो।"

मगर अफसोस आप आगरे नही लाये जा सके। ३-४ माह लकवेसे ग्रसित रहकर ३१ जनवरी १९५१ ई० को करॉंचीमें ही समाधि पाई।

मिर्ज़ा दागके तकरीवन दो हजार शिष्य थे। उनमेसे सर 'इकबाल', 'जोश' मलसियानी, 'सीमाब' अकबरावादी तीन ऐसे शिष्य निकले, जिन्होने

उस्तादके पथ-चिह्नोपर न चलकर अपने-अपने लिए नवीन पथ खोज निकाले। 'इकबाल'ने गजल बहुत कम कही। वे नज्मगो शायर थे। इश्किया शायरी न करके शुरू-शुरूमे उन्होने वतनियत और कौमियतके वह राग अलापे कि मुर्दा दिलोमे जीवन-सचार होने लगा। आध्यात्मिकता ओर दार्शनिकताकी वह सुरा पेश की, कि लोग पीकर झूमने लगे। यदि वे साम्प्रदायिक बहावमे न बहे होते तो उर्दूके सर्वश्रेष्ठ, महान और अमर शायर हुए होते।[1]

'जोश' मलसियानीने गज़ल और नज्म दोनोमे तबा आज़माई की। मगर उनका तगज्जुल मिर्ज़ा 'दाग'के रगे-तगज्जुलसे कतई जुदा है[2]।

'सीमाब' गजल और नज्म दोनोके ही कोहनामश्क और श्रेष्ठ शायर है। उन्होने गजलमे नया लबो-लहज़ा अख्तियार किया है। उनके यहाँ विषय-लोलुपता हेय, और पवित्र प्रेम आदरणीय है। मानवता उनका दीन और ईमान है। देशके वे चारण है। सम्प्रदायवादियोके घोर शत्रु है।

'सीमाब'के जीवनका उद्देश्य क्या है? यह उन्हीके ज़बाने-मुबारकसे सुनिये—

ग़फलतमें सोनेवालोकी मैं नींद उडाने आया हूँ।
दुनियाको जगाकर छोड़ूँगा, दुनियाको जगाने आया हूँ॥
जो नाक़िस[3] है वोह दस्तूरे-तदबीर[4] मिटाने आया हूँ।
इन्सानके शायाँ आईने-तकदीर बनाने आया हूँ॥

---

[1]सर इकबाल और उनकी शायरीके लिए देखे 'शेरोशायरी', पृ० ३०७-३४६। [2]जोश मलसियानीका परिचय प्रस्तुत पुस्तकमे दिया जा रहा है। [3]निकम्मा, [4]पुरुषार्थका नियम, (वर्तमान कालीन मजदूर श्रम-समस्यासे तात्पर्य है)।

मैं सोजे-वफाका दुनियाको पैग़ाम सुनाने आया हूँ।
जो आग लगे तो बुझ न सके वोह आग लगाने आया हूँ॥

यह आत्मा ही परमात्मा बन सकता है, मगर कब ?

अगर हद्दे-खुदी-ओ-बेखुदीसे मावरा[1] होता।
तो यह इन्सान फिर इन्सान क्यो होता खुदा होता॥

नेतृत्वकी बागडोर स्वय अपने हाथमे ले, यूँ कबतक किसीके पीछे-पीछे चलता रहेगा ?

इसी रफ्तारे-आवारासे भटकेगा यहाँ कबतक ?
अमीरे-कारवाँ बन जा, गुबारे-कारवाँ कबतक ?

अन्दर-ही-अन्दर सुलगते रहनेकी अपेक्षा हृदय-ज्वालाको प्रज्वलित कर ले —

सुलगना और जीना, यह कोई जीनेमें जीना है।
लगा दे आग अपने दिलमें दीवाने धुआँ कबतक ?

उसकी खोजमे लीन रहनेवालोको मन्दिर और मस्जिदके झमेलोमे पडनेका अवकाश कहाँ ?

जब तू नहीं तो ख़िलवते-दैरोहरम फिजूल।
अब क्या यहाँ परिस्तिशे-दीवारो-दर करें॥

हरम-ओ-दैरके क़ुत्बे वोह देखे, जिसको फुर्सत है।
यहाँ हद्देनज़र तक सिर्फ़ उनवाने-मुहब्बत[2] है॥

---

[1]उच्च, निर्लिप्त, [2]मुहब्बत-ही-मुहब्बत, प्रेमका शीर्षक।

जो दैरोहरम छोड़ दे मंज़िलपै वोह पहुँचे।
है कोई परिस्तारे-सनमख़ानये-मंज़िल ?

त्यागी और लक्ष्मी-उपासककी तुलना क्या ?

कहाँ तू और कहाँ मैं मंजिले-हस्तीमें ऐ मुनअ़म[1] !
कि तू ठोकर है दौलतकी, मेरी ठोकरमें दौलत है ॥

ख़ुदाकी यादमे बार-बार सजदा करनेके क्या मानी ?

वोह सजदा क्या ! रहे अहसास जिसमें सर उठानेका।
इबादत और ब-क़दरे-होश तौहीने-इबादत है ॥

'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' कहना आसान है। मगर इन्कलाब आनेपर डटे रहना हँसी-खेल नही। इन्कलाबकी एक जुम्बिश (द्वितीय महायुद्ध और भारत-विभाजन)को देखकर ही लोग त्राहि-त्राहि कर उठे—

तुझको दीवाने है, नाहक़ इन्तज़ारे-इन्कलाब।
एक करवट भी जो ली दुनियाने, घबरा जायगा ॥

'मनमें राम बगलमें छुरी' इसी भावको 'सीमाब' अपने शायराना अन्दाज़मे यूँ व्यक्त करते हैं—

दमाग़ो-रूह यकसाँ चाहिए इन्साने-कामिलमें।
यह क्या तकसीमे-नाक़िस है, ख़ुदी सरमें ख़ुदा दिलमें ॥

'मानो तो देव नही पत्थर'—आत्मविश्वास बहुत बडी शक्ति है—

हो यक़ीं दिलमें तो, बन जाती है फिर हर शय ख़ुदा।
बुतकदा जुज ऐतबारे-बिरहमन कुछ भी नही ॥

---

[1]धनिक।

जो व्यक्ति अपने देशके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख नही समझता, उस देश-द्रोहीको अपने देशमे मरनेका भी क्या अधिकार है ?

उसको क्या हक़ है कि वोह ख़ाकेवतनमें दफ़न हो।
जिसके दिलमें अज़मते-ख़ाकेवतन कुछ भी नहीं॥

यदि हमारे कारण हमारे देशपर आँच आती है तो हम—

बनायें क्यो न कहीं और जाके घर अपना।
चमन तबाह ब-तक़दीरे-आशियाँ क्यो हो ?

२६ जनवरी १९३०को जब पहले-पहल कॉंग्रेसने स्वतन्त्रता दिवस मनाया तो जी हुज़ूरोने बहुत मजाक उडाया कि "लो भई गुलामके गुलाम रहे और आज़ाद भी हो गये। अगर इसीको स्वराज्य कहते हैं तो यह तो बहुत पहले भी लिया जा सकता था।" मगर उन्हे क्या मालूम कि—

फ़क़त अहसासे-आज़ादीसे आज़ादी इबारत है।
वही दीवार घरकी है, वही दीवार ज़िन्दाँकी॥

अकर्मण्य देशवासियोके प्रति—

ज़रा खुलकर पुकार ऐ सूर[1] ! मजज़ूबाने-उल्फ़तको[2]।
यह दीवाने कहीं बैठे न रह जायें बयाबाँमें॥

ये मज़हबी दूकाने—

वोह दैर-ओ-कलीसा हो, या काबा-ओ-बुतख़ाना।
कुछ परदे है, कुछ धोके, कुछ शोब्दागाहें हैं॥

---

[1]वोह नरसिंह बाजा जो इस्लामधर्मके अनुसार कयामतके दिन हज़रत मुहम्मद बजायेगे, [2]उल्फ़तमे गर्क होने वालोको, प्रेमविभोर व्यक्तियोको।

इश्कमे रोना-बिसूरना तौहीने-इश्क है—

ख़ामोश ऐ असीरेकफस ! यह फुगां, यह शोर !
तौहीन कर रहा है, निशाने-बहारकी ।।

जब दिलपै छा रही हो घटायें मलालकी ।
उस वक्त अपने दिलकी तरफ मुकसराके देख ।।

ऐ गमे-इश्क़ तेरे जर्फमें कुछ आग भी है ?
आंसुओसे तो इलाजे-तपिशेदिल न हुआ ।।

हमारी ख़ाना वीरानी जमानेपर अयां क्यो हो ?
जले जितना नशेमन सुर्ख़ उतना आसमां क्यो हो ?

प्रेमीका स्वाभिमानी होना भी आवश्यक है—

इतना बुलन्द कर नज़रे-जलवाख़्वाहको[१] ।
जलवे ख़ुद आयें ढूंढ़ने तेरी निगाहको ।।

प्रेममे सफलता कैसी ? प्रेम करना है तो हृदयको हानि-लाभके विचारसे स्वच्छ कर लेना चाहिए—

मुहब्बत नाम है लाहासली[२]-ओ-नातमामीका[३] ।
मुहब्बत है तो दिलको फारगे सूदो-जियाँ[४] कर ले ।।

जबतक अपने प्यारेका तसव्वुर दिलमे न हो, नमाज और पूजा सब व्यर्थ है—

तू हो निगाहो-दिलमें तो लुत्फे-नमाज है ।
वरना नमाज सिर्फ जुनूंने-नियाज[५] है ।।

---

[१]जलवा देखनेकी ख़्वाहिशको, [२]असफलता, [३]अपूर्णताका; [४]हानि-लाभके भावसे रहित, [५]उपासनाका उन्माद ।

वह सुख किस कामका, जिसमे ईश्वर याद न रहे। इससे तो दुःख ही अच्छा, जिसमे उसकी याद तो बनी रहती है—

हासिले-ज़ीस्त[1] मसर्रतको समझनेवाले।
यक नफस[2] ग़म भी, कि दमभर तो ख़ुदा याद रहे॥

मानव अपनी ही खीची हुई रेखाओमे घिरकर इतना अशक्त एव निर्बल हो गया है कि उसे अपनी वास्तविक शक्तिका भी ज्ञान नही रहा—

छीन लीं फ़िक्रे-नशेमनने मेरी आज़ादियाँ।
जज़्बये-परवाज़ महदूदे-गुलिस्ताँ हो गया॥

आरज़ी हदबन्दियाँ है, देस क्या परदेस क्या ?
मै हूँ इन्साँ वुसअ़ते-कौनीन[3] है मेरा वतन॥

इस दुनियाकी दुनियादारी देखिये कि जो हमे सबसे अधिक प्रिय है, वही हमे मिट्टीमें मिलाता है, और वही सबसे अधिक अपनेको शोकाकुल प्रकट करता है—

मुझे आता है रोना रस्मे-हमदर्दीपै दुनियाकी।
मिला देगा यही मिट्टीमें जो है नोहाख़्वाँ[4] मेरा॥†

हमारा सबसे प्यारा कौन ? जो मुसीबतमे याद आये—

तुम्हीं उस वक़्त याद आते हो।
जब कोई आसरा नहीं होता॥*

---

[1]सुख-चैनको जीवनकी सफलता समझनेवाले। [2]लमहेभरको दुख भी जरूरी है, [3]समस्त विश्व, [4]मातम करनेवाला।

†सबसे बडा पुत्र ही चितामे आग देता है अथवा कब्रमें सुलाता है।

*असर लखनवीने इसी मज़मूनको क्या खूब बाँधा है—

हम उसीको ख़ुदा समझते है।
जो मुसीबतमें याद आ जाये॥

शख और अज़ानके झगडे व्यर्थ है। दोनोमे उसीकी आवाज़ है—

एक लफ़्ज़े 'हू'[1], सदा[2] करनेके सौ अन्दाज़ है।
नालये-नाक़ूस[3] है गोया अज़ाने-बिरहमन॥

इच्छाये मनको निराकुल नही रहने देती, इच्छाये हटे तो मनसे आकु-
लता भी हटे—

दिलमें कितना सकून[4] होता है।
जब कोई मुद्दआ नहीं होता॥

ज़माना गर मुख़ालिफ है तेरा, बेमुद्दआ हो जा।
न दिलमें मुद्दआ होगा न दुनिया मुद्दई होगी॥

उस दिलपै निसार दोनो आलम।
जिसमें कोई मुद्दआ नहीं है॥

है हसूले-आरज़ूका राज़[5] तर्के-आरज़ू[6]।
मैंने दुनिया छोड दी तो मिल गई दुनिया मुझे॥*

जिसप्रकार आम लू और आँधीके थपेडे खाते-खाते परिपक्व होता है, उसी
तरह आदमी भी असफलताओके चरके खाकर ही आदमी बनता है—

हो न जबतक शिकारे-नाकामी।
आदमी कामका नहीं होता॥

माशूककी कृपा प्राप्त न हुई तो इसका शिकवा क्या ?

---

[1]खुदाका सक्षिप्त नाम, [2]आवाज़, [3]शखध्वनि, [4]चैन-सन्तोष;
[5]इच्छाओकी सफलताका भेद, [6]इच्छाओके त्यागनेमे है।
*इसी भावको स्वामी रामतीर्थने यूँ व्यक्त किया है—

भागती फिरती थी दुनिया, जब तलब करते थे हम।
जब हमें नफरत हुई, वोह बेकरार आनेको है॥

उनसे शिकवा फिजूल है 'सीमाब' !
काबिले-इल्तफात[1] तू ही नहीं ॥

मालूम नही पाठकोका ऐसे दोस्तोसे वास्ता पडा है या नही, जो जिन्दगी भरके किये हुए अहसानोको क्षणभरमे भुला दे, और राई जितनी भूलको पहाड समझकर सदैव याद रखे।

तेरी इस भूलका अहसाँ, तेरी इस यादका शुक्र।
कि मुझे भूल गया मेरे गुनाह याद रहे ॥

और ऐसे हितैषियोको क्या कहिये ?

अजब हमदर्दिये-मुहमिल[2] है, रस्मेचारासाजी[3] भी।
नही है जिसके दिलमें दर्द, वोह आये है दरमाँको[4] ॥

ससारकी सब वस्तुये क्षणिक है, केवल प्रेम ही स्थाई है—

कैसरी[5]-ओ-खुसरवी[6] तो ढलती-फिरती छाँव है।
इश्क ही इक जाविदाँ[7] दौलत है, इन्सानोंके पास ॥

कामुक व्यक्ति और चाहे जो कुछ भी हो, वह प्रेमी कदापि नही—

गर नजरे-हविस[8] तेरी दामने-हुस्न छू गई।
इश्ककी आबरू कहाँ ? नफसकी[9] आबरू गई ॥

जो ईश्वरीय प्रेममे दिन-रात रत हो, उसे प्रकट रूपमे पूजा-उपासनाकी जरूरत नहीं —

---

[1]कृपा-योग्य, [2]निरर्थक सहानुभूति, [3]चिकित्साकी प्रथा, [4]इलाजको, [5].[6]बादशाहत, [7]नष्ट न होनेवाली, स्थाई, [8]कामुक दृष्टि, [9]शारीरिक इन्द्रियोकी, मनकी।

वोह अपनी ज़िन्दगीमें बन्दगी क्यो लाज़िमी समझे ?
जो अपनी ज़िन्दगीको इक मुसलसल[1] बन्दगी समझे ॥

बुतशिकन बुतोको तोडते-फिरते है। मगर उनके दिलमे जो अहकारका सबसे बडा बुत मौजूद है, उसे नही तोडते ?

कर रहे है, दिलमें पिन्दारे-ख़ुदीकी[2] परवरिश।
जिसमें इक सबसे बडा बुत है, वोह है बुतख़ाना हम ॥

सीमाव अपने प्यारेका जलवा सर्वत्र देखते है, मूर्तिमे भी वही उनका प्यारा दृष्टिगोचर है—

बुतमें भी देखता हूँ उसी ख़ुदनुमाको मैं।
अब सजदा बिरहमनको करूँ या ख़ुदाको मैं ॥

प्यारेकी तल्लीनतामें—

आज़ुरदा[3] इस कदर हूँ सराबेख़यालसे[4]।
जी चाहता है तुम भी न आओ ख़यालमें ॥
तग आके तोड़ता हूँ, ख़याले-तिलस्मको।
या मुतमइन[5] करो कि तुम्हीं हो ख़यालमें ॥

आते भी हो तो अभी न आना।
हूँ महवे-तसव्वुर आज़माई ॥

माथेकी आँखे बन्द करके हियेकी आँखोसे देखा जाय तो उसका जलवा दिखाई दे—

---

[1]लगातार, [2]अभिमान और अहमकी, [3]व्यथित, [4]प्रेयसी और चिन्तनरूपी मृगमरीचिकासे, [5]आश्वस्त।

अगर है जौके-तमाशा तो बन्दकर आँखें।
जहाँ निगाह नहीं है, वहाँ हिजाब नहीं॥

मिटाना तो आसान है, निर्माण मुश्किल है—

बताएँ तो मेरी हस्ती बिगाडनेवाले।
बिगाड़कर कोई मुझको बना भी सकता है?

दुनियाकी हाय-हायमे मरनेवाले—

तू हविसमें दुनियाकी जिन्दगी मिटा बैठा।
भूल हो गई गाफिल! जिन्दगी ही दुनिया थी॥

छिद्रान्वेषी दूसरोके छिद्र देखते है अपने नही।

मेरे गुनाहोपै करे, तब्सरा[1] लेकिन—
सिर्फ मै ही तो गुनहगार नहीं॥

अब हम 'सीमाब' साहब और पाठकोके बीचमे अधिक मुखिल नही होना चाहते। पहले आपके खुदके चन्द पसन्दीदा अशआर 'निगार' जनवरी १९४१से साभार दिये जा रहे है[2]—

मेरी रसाईसे दूर है तू, मगर अभी तुझको याद होगा।
कि मैंने ईमनकी वादियोमें उलट दिया था नकाब तेरा॥

खुदबीं[3]-ओ-खुदशनास[4] मिला, खुदनुमा[5] मिला।
इन्साँके भेसमें मुझे अक्सर खुदा मिला[6]॥

---

[1]टीका-टिप्पणी, [2]आपकी नज्मोंके चन्द उदाहरण 'शेरोशायरी'मे दिये जा चुके है। प्रस्तुत पुस्तकमे केवल गज़लोका उल्लेख हुआ है। इसलिए यहाँ आपकी, गज़लोके अशआर ही पेश किये जा रहे है, [3]अपनी आनबान देखनेवाला, अभिमानी, [4]अपनेको जाननेवाला, महत्वाकाक्षी, [5]आत्मविज्ञापन करनेवाला, [6]भाव यह है कि इन्सान इस तरहकी शेखी बघारता है, मानो वही खुदा है।

अल्लाहरे शामेग़म मेरे दिलकी शिकस्तगी।
तारोंका टूटना भी मुझे नागवार था॥

जबींसाईसे[1] तसकीं, न सजदासे तसल्ली।
उठाकर सरमें रख लूं, तुम्हारा नक्शे-पा क्या?

मैं अपने हालसे ख़ुद बेख़बर हूँ।
तुम्हारी कमनिगाहीका गिला क्या॥
दुआ दिलसे जो निकले कारगर हो।
यहाँ दिल ही नहीं दिलसे दुआ क्या॥

यह ज़मीं ख़ुद एक दिन क्या जाने क्या बन जायगी?
गर यूं ही इन्सान पैवन्देज़मीं[2] होता रहा॥

फ़ितरत यही अज़लसे है बर्क़ेजमालकी।
उसने जिसे तबाह किया तूर कर दिया॥

बदल गईं वोह निगाहें वोह हादसा था अख़ीर।
फिर इसके बाद कोई इनक़लाब हो न सका॥

कम-से-कम फ़रिश्तोंको चैन तो मिला दिलका।
आपकी मुहब्बतमें आदमीने क्या पाया?

बन्दगीने हज़ार रुख़ बदले।
जो ख़ुदा था वही ख़ुदा है हनूज़[3]॥

शोरे-हस्ती[4] अभी ज़रा ठहरे।
सुन रहा हूँ ज़मीरकी[5] आवाज़॥

---

[1] मस्तक रगड़नेसे, [2] ज़मीनमें दफ़न, [3] अभीतक। [4] ज़िन्दगीकी चिल्ल-पौं, [5] आत्माकी।

मेरी बेअख्तयारियोकी न पूछ।
न हकीकत[1] ही बसमें है न मजाज[2]॥

दफअतन[3] साजे-दो आलम[4] बेसदा[5] हो जायेगा।
कहते-कहते रुक गये जिस दिन तेरा अफसाना हम॥

तू इन्तजारमें अपने यह मेरा हाल तो देख।
कि अपनी हद्देनजर तक तड़प रहा हूँ मैं॥
जलाले-मशरबेमन्सूर,[6] ऐ मुआजल्ला।
किसीने फिर न कहा आजतक खुदा हूँ मैं॥

मामूरये-फनाकी कोताहियाँ तो देखो।
इक मौतका भी दिन है दो दिनकी जिन्दगीमें॥

तेरे जलवोने मुझे घेर लिया है ऐ दोस्त!
अब तो तनहाईके लमहे भी हसीं होते है॥

तुमने तो अपने हुस्नको महफूज कर लिया।
हम किसके साथ उम्रे-मुहब्बत बसर करें?

उस मरकजे-जमालपर[7] अब है मेरी निगाह।
जलवे भी देख लें तो तवाफे-नजर[8] करें॥

हिजाब अपनी नजरसे तो हम उठा न सके।
उन्हींके हुस्नसे परदे उठाये जाते है॥

कोई तो सुर्खिये-अफसाना यादगार रहे।
हम अपना खून कफसमें लगाये जाते है॥

---

[1]पारलौकिक, [2]इहलौकिक, [3]एकाएक, [4]इस लोक और परलोकका वाद्ययत्र, [5]वेआवाज, [6]मन्सूरके उस कार्यका गौरव तो देखिये कि फिर किसीको उसके वाद अपनेको खुदा कहनेका साहस नही हुआ; [7]सौन्दर्य्य-केन्द्रपर, [8]दृष्टिकी प्रदक्षिणा दें।

है कोई और शय इन्सानियत मेरे तख़ैय्युलमें।
ख़यालोमें कभी तसवीरे-इन्साँ देख लेता हूँ॥

यह दुनिया अगर मेरे काबिल नहीं है।
तेरे पास या रब! जहाँ और भी है?

हक़ीर हूँ, मगर इतना हकीर भी न समझ।
मैं ज़र्रा भी तो नहीं हूँ, जो आफताब नहीं॥

आ और आख़िरी निगहेयास[1] देख जा।
शायद फिर इसके बाद अयादत[2] रवा[3] न हो॥

जवानी और मर्गेइश्क[4]! यह है रक़्सका[5] मौका।
गजलख्वाँ हो मेरे मातममें कोई नौहाख्वाँ[6] क्यो हो॥

तुझे न देख सकूँ मैं तो कुछ मलाल नहीं।
यही बहुत है कि तू मुझको देख सकता है॥

ले लिया क्यो आपने इल्ज़ाम मेरी मौतका
इस तबाहीमें अभी गुंजाइशे-तक़दीर थी॥

इशारोंसे, निगाहोसे बहुत कुछ मना करता हूँ।
क़फस ही पर झुकी पडती है, शाख़े-आशियाँ फिर भी॥

न कली है वजहे-नजर कशी, न कँवलके फ्लसे ताजगी।
फकत एक दिलकी शगुफ़्तगी[7] सबबे-निशाते-बहार[8] है॥

देना मुझे फरेबे-नवोदे-हयात[9] तुम।
जब लोग जा रहे हो जनाज़ा लिये हुए॥

---

[1]निराश दृष्टि [2]-[3]मिज़ाजपुर्सीको आना सम्भव, [4]प्रेम-मरण; [5]नृत्यका; [6]रोये, [7]प्रसन्नता, [8]बहारकी ख़ुशीका कारण, [9]जीनेकी आशाका धोका।

तू अपनी बज़्मेनाज़को देख और अज़लको देख।
आया कहाँसे तेरी तमन्ना लिये हुए॥
थी कसरते-जमालसे[1] तारीक[2] बज़्मेदहर[3]।
आना पडा चरागे-तमन्ना[4] लिये हुए॥

सानअ्को[5] सनअतोपर[6] सौ हुस्न क्यो न बरसें।
अपनी किसी अदाको इन्साँ बना दिया है॥

ख़ुदासे मिल गया है हुस्ने-काफिर।
ख़ुदाईपर हुकूमत हो रही है॥
अभीतक महशरे-इन्सानियतमें।
तलाशे-आदमीयत हो रही है॥

हम आप सैर ही कर आयें बज़्मे-महशरकी।
अभी तो देखनेवाले हिसाब देखेंगे॥

मैं जिया भी दुनियामें और जान भी दे दी।
यह न खुल सका लेकिन, आपकी ख़ुशी क्या थी॥

ज़िन्दगी दरियाए-बेहासिल[7] है और किश्ती खराब।
मैं तो घबराकर दुआ करता हूँ तूफाँके लिए॥

कौन जाने आस्माँसे उनको क्या उम्मीद थी।
मरते-मरते भी जो सूये-आस्माँ देखा किये॥

दीदसे[8] उनकी मतलब है, घर न सही महशर ही सही।
हम दानिस्ता देखेंगे, वोह मजबूरन आयेंगे॥

---

[1]रूपकी प्रचुरताके कारण, [2]अँधेरी, [3]संसाररूपी महफिल; [4]अभिलाषाओका दीपक, [5]कलाकारकी; [6]कलाओपर; [7]असफलताओकी बाढ; [8]देखनेसे।

न फ़रमाओ, "नहीं है आदमीमें तावे-नज़्ज़ारा"।
सँभल जाओ अब उठती है निगाहे-नातवाँ[1] मेरी॥
मेरी हैरतपै वोह तनक़ीदकी[2] तकलीफ करते हैं।
जिन्हें यह भी नहीं मालूम नज़रें हैं कहाँ मेरी॥

बता ऐ वुसअते कौनो-मकाँ[3]! इसको कहाँ रक्खें ?
ज़रा-सा दर्द लेकर आये हैं, हम उनकी महफ़िलसे॥

कुछ वक़्त कट गया था तेरी यादके बग़ैर।
हमपर तमाम उम्र वोह लमहे गराँ[4] रहे॥

यह समझिये है कोई दीवाना दुनियामें उदास।
वेसबब जब बज़्मे-आलमको[5] परेशाँ देखिये॥

यह वहम हो कि हक़ीक़त, सकूँ इसीसे है दिलको।
समझ रहा हूँ कि तू बेकरार मेरे लिए है॥

है कुछ सुनी हुई-सी सदायें[6] फ़िज़ामें[7] आज।
क्या मेरे हमसफ़ीर[8] भी ज़िन्दाँमें[9] आ गये ?

सदाये-सूरसे[10] मैं क़ब्रमें न जागूँगा।
किसी सुनी हुई आवाज़से पुकार मुझे॥

मेरा कुफ़्रे-मुहब्बत है फ़रोग़े-जाद-ए-ईमाँ।
वोह शमयेदैर हूँ मैं रोशनी जिसकी हरमतक है॥

---

[1]निर्बल दृष्टि, [2]आलोचनाकी, [3]ससारके व्यापक क्षेत्र, [4]भारी; [5]ससाररूपी महफ़िलको, [6]आवाज़ें, [7]वायुमे, [8]साथी; [9]कैदमें; [10]नरसिंहा बाजेसे।

जितने सितम किये थे किसीने अताबमें ।
वोह भी मिला लिये करमे-बेहिसाबमें ।।
हर चीजपर बहार, हरइक शय पै हुस्न था ।
दुनिया जवान थी मेरे अहदे-शबाबमें ।।

विसालेदोस्त और मैं, इत्तफाकाते मुहब्बत हैं ।
यह है वोह चीज जो शायद न थी मेरे मुकद्दरमें ।।

तुझको दर-परदा समझकर हो रहा हूँ बेकरार ।
क्या तमाशा हो जो कोई दूसरा परदेमें हो ।।

क्यो हँसी तू ऐ अजल ! फानी अगर समझा मुझे ।
एक दिन सबको फ़ना है क्या तुझे और क्या मुझे ।।

कितने दीवाने मुहब्बतमें मिटे हैं 'सीमाब' !
जमा की जाय जो खाक उनकी तो वीराना बने ।।

अब मुझको है करार तो सबको करार है ।
दिल क्या ठहर गया कि जमाना ठहर गया ।।

यूँ ही हम-तुम घड़ी भरको मिला करते तो बहतर था ।
यह दोनो वक़्त जैसे रोज मिलते हैं, जुदा होकर ।।

ऐ परदादार ! अब तो निकल आ कि हश्र है ।
दुनिया खडी हुई है तेरे इन्तजारमें ।।

किसी मर्देवफाका कूच है फिर अपने मस्कनसे ।
उदासी मॉगने आई है दुनिया मेरे मदफनसे ।।

हमें तो यूँ भी न जलवे तेरे नजर आये ।
न था हिजाब तो आँखोमें अश्क भर आये ।।

वोह आलमे-शकिस्तगीये-नाज अलअमां ।
जब हुस्न खुद किसीके असरसे तबाह हो ।।

हाय ! 'सीमाब' उसकी मजबूरी ।
जिसने की हो शबाबमें तोबा ।।

कातिलका नाम लिख दिया क्यों मेरी कब्रपर ?
लेते हैं राहगीर भी बोसे मजारके ।।

अब हम आपकी १९३६ से १९४२ तककी कही हुई गज़लोके द्वितीय दीवान 'सदरुल मिन्तहा'से अशआर चुनकर पेशकर रहे हैं । अशआरसे पहले सन् दे दिया गया है ताकि गज़लोके कहनेके समयका पता चल सके ।

१९३६ ई०—

जो जौक़े-इश्क[1] दुनियामें न हिम्मत आजमा होता ।
यह सारा कारवाने-जिन्दगी[2] गाफिल पड़ा होता ।।
खमोशीपर मेरी, दुनियामें शोरिश है कयामतकी ।
ख़ुदा-ना-ख़्वास्ता लब खुल गये होते तो क्या होता ?
शुआरे-हुस्न पाबन्दी, मिजाजे-इश्क़ आजादी ।
जो ख़ुद अपना ही बन्दा है, वोह क्या मेरा ख़ुदा होता ?
ख़ुदाने खैर की, थी राहेइश्क ऐसी ही पेचीदा ।
कि मेरे साथ मेरा रहनुमा भी खो गया होता ।।
उड़ा दीं मैंने आख़िर धज्जियाँ दामाने-हस्तीकी ।
गरेबाँ ही के दो तारोसे क्या जोर-आजमा होता ?
कहाँ यह दहरे[3]-कुहना[4] और कहाँ जौके-जवाँ मेरा ।
कोई दुनिया नई होती, कोई आलम नया होता ।।

---

[1]प्रेमका शौक, [2]जीवनरूपी यात्रीदल; [3]ससार; [4]पुराना ।

किया इक सजदा मैंने हुस्नको तो हो गया काफ़िर।
अगर सर काटकर कदमोपै रख देता तो क्या होता ?

फिज़ा पैदा नहीं करती, कहीं दीवाना बरसोंसे।
नहीं उठता कोई पैगम्बरे-वीराना बरसोंसे॥

रहेगा मुब्तलाये-कश-म-कश इन्साँ यहाँ कबतक ?
यह मुश्तेख़ाकपर जगे-ज़मीनो-आसमाँ कबतक ?
यह आवाज़ेदरा,[1] बाँगेजरस,[2] मुहमिल-से[3] नग़मे हैं।
चलेगा इन इशारोंके सहारे कारवाँ[4] कबतक ?
मैं अपना राज़ ख़ुद कहकर न क्यों ख़ामोश हो जाऊँ ?
बदल जाती है दुनिया, ऐतबारे-राज़दाँ कबतक ?
ब-क़दरे[5]-यक-नफ़सगम[6] माँग ले और मुतमइन[7] हो जा।
भिखारी! यह मनाज़ाते-निशाते-जाविदाँ[8] कबतक ?

जलवोंकी तो आदत है, महबूबे-नज़र रहना।
कुछ तुझमें भी जुरअत है ऐ चश्मे-तमाशाई!

तेरे ही लिए शायद हैं मेरी नमाज़ें भी।
जब मैंने किया सजदा काफ़िर तेरी याद आई॥

चलते हुए दो काबा, फिरते हुए दो मन्दिर।
चमकी तेरे कदमोंपर तकदीरे-जबींसाई॥

परिस्तारे-मुहब्बतकी मुहब्बत ही शरीअत है।
किसीको याद करके आह कर लेना इबादत है॥

---

[1]-[2]घंटीकी आवाज, [3]निरर्थक-से, [4]यात्रीदल, [5]किसी क़दर; [6]जीभरका गम, [7]शान्त, सन्तोषी, [8]स्थाई भोगविलासके लिए कबतक गिड़गिड़ाता रहेगा ?

जहाँ दिल है, वहाँ वोह है, जहाँ वोह है, वहाँ सब कुछ।
मगर पहले मुक़ामे-दिल समझनेकी ज़रूरत है॥
बहुत मुश्किल है क़ैदे-ज़िन्दगीमें मुतमईन होना।
चमन भी इक मुसीबत था, क़फ़स भी इक मुसीबत है॥
मेरी दीवानगीपर होशवाले बहस फ़र्मायें।
मगर पहले उन्हे दीवाना बननेकी ज़रूरत है॥
शगुफ़्ते-दिलकी मुहलत उम्रभर मुझको न दी ग़मने।
कलीको रातभरमें फूल बन जानेकी फ़ुर्सत है॥

है चाके-गरेबांके तेवरमें शिकन अबतक।
कल आलमे-वहशतमें किसने मुझे छेड़ा था?

जब कोई तामीर बेतख़रीब[1] हो सकती नहीं।
ख़ुद मुझे अपने लिए बरबाद होना चाहिए॥

यह हजूमेग़म है, महदूदे-हद्दे-ज़िन्दगी।
आदमी आया है तनहा और तनहा जायगा॥

संगेदर सरपै है, दरपर नहीं अब सर मेरा।
अहले-काबा मेरे सजदोका सलीका देखें॥

हमनशीं[2]! क्या मैं तुझे दावते मयनोशी दूँ?
अश्क-ही-अश्क भरे है मेरे पैमानेमें॥

मुक़ाम इक इन्तहाये-इश्क़में ऐसा भी आता है।
ज़मानेकी नज़र अपनी नज़र मालूम होती है॥
कोई उलफ़तका दीवाना, कोई मतलबका दीवाना।
यह दुनिया सिर्फ़ दीवानोका घर मालूम होती है॥

---

[1]बरबादीके बिना, [2]पड़ौसी।

जो मुमकिन हो,जगह दिलमें न दे दर्दे-मुहब्बतको ।
घडी भरकी खलिश फिर उम्रभर मालूम होती है ।।

जबाँबन्दीसे खुश हो, खुश रहो, लेकिन यह सुन रक्खो ।
खमोशी भी मेरी अफसाना बन जायेगी महफिलमें ।।

दिल और तूफानेगम, घबराके मैं तो मर चुका होता ।
मगर इक यह सहारा है कि तुम मौजूद हो दिलमें ।।
न जाने मौज क्या आई कि जब दरियासे मैं निकला ।
तो दरिया भी सिमटकर आ गया आगोशे-साहिलमें[1] ।।

लफ़्ज़ोके परिस्तार खबर ही तुझे क्या है ?
जब दिलसे लगी हो तो ख़मोशी भी दुआ है ।।
दीवानेको तहकीरसे क्यो देख रहा है ।
दीवाना मुहब्बतकी ख़ुदाईका ख़ुदा है ।।

जो कुछ है वोह, है अपनी ही रफ़्तारे-अमलसे ।
बुत है जो बुलाऊँ, जो खुद आये तो ख़ुदा है ।।

यूँ उठा करती है सावनकी घटा ।
जैसे उठती हो जवानी झूमके ।।
जिस जगहसे ले चला था राहबर[2] ।
हम वहीं फिर आ गये है घूमके ।।
आ गया 'सीमाब' जाने क्या खयाल ?
ताकमे रख दी सुराही चूमके ।।

१९३७ ई०—

खराब होती न यूँ ख़ाके-शमा-ओ-परवाना ।
नही कुछ और तो इनसान ही बना करते ।।

---

[1]किनारेकी गोदमे, [2]पथ-प्रदर्शक ।

मिज़ाजे-इश्क़में होता अगर सलीक़येनाज़ ।
तो आज इसके क़दमपर भी सर झुका करते ॥
यह क्या किया कि चले आये मुद्दआ बनकर ।
हम आज हौसलये-तर्के-मुद्दआ करते ॥
कोई यह शिकवा-सरायाने-जौरसे[1] पूछे ।
वफ़ा भी हुस्न ही करता तो आप क्या करते ?
ग़ज़ल ही कह ली सुनानेको हश्रमें 'सीमाब' !
पड़े-पडे यूँ ही तनहा लहदमें[2] क्या करते ?

मनशाये-इलाहीपै यक़ीं आ ही चला है ।
ऐ चारागरो[3]! ज़हमते-दरमाँ[4] कोई दिन और ॥

अपना सजदा ख़ुद गराँ महसूस होता है मुझे ।
जैसे पाये-नाज़पर इक बोझ-सा रखता हूँ मैं ॥

ख़ुदा और नाख़ुदा मिलकर डुबो दें यह तो मुमकिन है ।
मेरी वजहे-तबाही सिर्फ़ तूफ़ाँ हो नहीं सकता ॥
दुआ जाइज़, ख़ुदा बरहक़, मगर माँगूँ तो क्या माँगूँ ?
समझता हूँ कि मैं, दुनिया बदामाँ हो नहीं सकता ॥

ज़मीनो-आसमाँसे तग है तो छोड़ दे उनको ।
मगर पहले नये पैदा ज़मीनो-आस्माँ कर ले ॥

गुनाहोपर वही इन्सानको मजबूर करती है ।
जो इक बेनाम-सी फ़ानी-सी लज़्ज़त है गुनाहोमें ॥

---

[1]अत्याचारोकी शिकायत करनेवालोसे, [2]क़ब्रमे, [3]चिकित्सको; [4]इलाजकी तकलीफ़ ।

न जाने कौन है गुमराह, कौन आगाहे-मंजिल है।
हजारो कारवां हैं जिन्दगीकी शाहराहोमें॥
रहे-मंजिलमें सब गुम है, मगर अफ़सोस तो ये है।
अमीरे-कारवां भी है, उन्ही गुमकरदा राहोमें॥

१९३८ ई०—

कफसमें खींच ले जाये मुकद्दर या नशेमनमें।
हमें परवाजसे मतलब है, चलती हो हवा कोई॥
वफा करके मैं यूं बैठा हूं फैलाये हुए दामन।
कि जैसे बांटता फिरता है इनआमे-वफा कोई॥

मैं सुपुर्दे-खुदफरामोशी हूँ तू महवे-खुदी।
तेरी हुशयारीसे अच्छा है मेरा दीवानापन॥
गाफिलोपर गर न हो फितरतको मुर्दोंका यकीं।
रातको दुनियापै डाला जाय क्यो काला कफन?
फर्शसे ता-अर्श मुमकिन है तरक्की-ओ-उरूज।
फिर फरिश्ता भी बना लेंगे तुझे, इन्सां तो बन॥

कुछ मुहब्बत ही से है जिद सबको।
वरना दुनियामें क्या नहीं होता॥

१९३९ ई०—

अपने ही हाथसे दे-दे जो तुझे देना है।
मेरी तशहीर न फरमा[1] मुझे साइल[2] न बना॥

खुदासे हश्रमें काफिर! तेरी फरियाद क्या करते?
अकीदत उम्रभरकी दफअतन बरबाद क्या करते?

---

[1]मेरा ढिंढोरा न पीट, [2]भिक्षुक।

कफस क्या, हमने बुनियादे-कफसको भी हिला डाला।
तकल्लुफ बरबिनाये-फितरते-आजाद क्या करते॥
बहुत मुहताज रहकर लुत्फ उठाये उम्रेफानीके।
जरा-सी जिन्दगी जी खोलकर बरबाद क्या करते?
शबेगम आहे-जेरेलबमें सब कुछ कह लिया उनसे।
जमानेको सुनानेके लिए फरियाद क्या करते?

मेरे उठे हुए हाथोंको कोई क्या समझे?
दुआसे हाथ उठाता हूँ, या दुआके लिए॥

कुछ हाथ उठाके माँग न कुछ हाथ उठाके देख।
फिर अख्तियार खातिरे-बेमुद्दआके देख॥

तजहीको[1]-इल्तफातमें[2] रहने दे इम्तयाज[3]।
यूँ मुसकरा न देखके, हाँ मुसकराके देख॥

तू हुस्नकी नजरको समझता है बेपनाह।
अपनी निगाहको भी कभी आजमाके देख॥
परदे तमाम उठाके न मायूसे-जलवा हो।
उठ और अपने दिलकी भी चिलमन[4] उठाके देख॥

आशियाँमें न कोई जहमत न कफसमें तकलीफ।
सब बराबर है तबीयत अगर आजाद रहे॥
१९४० ई०—

गाफिल कुछ और कर दिया गमबेमजारने।
आया था मैं तो नशये-हस्ती उतारने॥

---

[1]-[2]हँसी उडाने और महरबानीमे, [3]अन्तर। [4]चिक, परदा।

हँसता है क्या बुझी हुई शमये-हयातपर ।
देखी है सुबह भी तो मेरी लालाज़ारने ।।

उजड़ा और ऐसी शानसे उजडा मेरा चमन ।
यह भी पता नहीं कि बनाया था घर कहाँ ?

निज़ामे[1]-सुबहोशामे-दहर[2] है जिसके इशारोंपर ।
मेरी गफलत तो देखो मैं उसे गाफिल समझता हूँ ।।

कहाँकी बज़्मे-आलम ? यह तो मेरी तगफहमी है ।
कि मैं इक चलती-फिरती छाँवको महफिल समझता हूँ ।।

मुहब्बतमें नियाज़[3] और हुस्न महवेनाज़[4] क्या मानी ?
मैं इस दस्तूरको तरमीमके[5] काबिल समझता हूँ ।।

बेकफन ही दफ्न कर दी जायें दीवानोकी नाश ।
धज्जियाँ तो है अभी महफूज़ वीरानोके पास ।।

अब क्या छुपा सकेंगी उरयानियाँ-हविसकी[6] ?
काँधोसे पिंडलियोतक लटकी हुई कबायें[7] ।।
वक्ते-विदाये-गुलशन नज़दीक आ रहा है ।
अब आशियाँ उजाड़ें या आशियाँ बनायें ।।

उनकी खुशीपै जान दूँ, मेरी खुशी-खुशी नही ।
जैसे वही तो है खुदा, मैं कोई चीज़ ही नहीं ।।
उनको पसन्द है नियाज, तर्के-नियाज़ क्या करूँ ?
कोशिशे-बन्दगी में हूँ, आदते-बन्दगी नही ।।

---

[1]-[2]ससारकी सुबह शामकी व्यवस्था, [3]नम्रता, [4]अभिमानमें लीन, [5]परिवर्त्तनके योग्य, [6]कामुकताकी नग्नता, [7]लम्बा चोग़ा ।

उम्मीदे-अमन क्या हो यारानें-गुलिस्तांसे ।
दीवाने खेलते हैं अपने ही आशियांसे ॥
बिजली कहा किसीने, कोई शरार[1] समझा ।
इक लौ निकल गई थी, दाग़ेग़मे-निहांसे[2] ॥

नाक़ूस[3] बनके मैंने चौंका दिया हरमको[4] ।
पत्थर सनमकदेके[5] जागे मेरी अज़ांसे ॥

मदारे-हर अमले-नेकोबद है नीयतपर ।
अगर गुनाहकी नीयत न हो गुनाह नहीं ॥
नक़ाब उलट दिया मूसाने तूरपर उनका ।
अगर गुनाह सलीक़ेसे हो, गुनाह नहीं ॥

ऐसे भी हमने देखे हैं दुनियामें इनकलाब ।
पहले जहाँ कफ़स था, वहीं आशियाँ बना ॥
सारे चमनको मैं तो समझता हूँ अपना घर ।
तू आशियाँपरस्त है, जा, आशियाँ बना ॥

वोह भी अताये-दोस्त है, यह भी उसीकी देन है ।
ऐशमें कहक़हे लगा, तैशमें मुसकराये जा ॥
यादपै तेरी मुन्हसिर है, यह हयाते-मुख़्तसिर ।
मुझको न यादकर मगर, तू मुझे याद आये जा ॥

हज़ार दर्दमन्द हूँ मगर मुझे नहीं जुनूँ ।
शिकायत उससे क्या करूँ जिसे ख़याल भी न हो ॥

---

[1]चिनगारी, [2]छुपे हुए ग़मके दाग़से; [3]शंख, [4]काबेको; [5]मन्दिरोके पत्थर ।

पैकरे-ख़ाकको[1] बदनाम न कर आलममें।
कि तेरा नाम इसी ख़ाकके पैकरसे चला॥

मुहब्बत ही फनाके बाद भी बरुरूयेकार आई।
न मुझको दीन रास आया, न दुनिया साजगार आई॥
अँधेरा हो गया, दिल बुझ गया, सूनी हुई दुनिया।
बडी वीरानियोंके बाद शामे-इन्तज़ार आई॥
न आई पायेइस्तग़नामें[2] इक हल्की-सी लग़ज़िश भी।
मेरे रस्तेमें ठोकर बनके, दुनिया बार-बार आई॥

क्या जाने यह रहगीर[3] है, रहबर[4] है कि रहज़न[5]?
हम भीड़ सरेराहगुज़र देख रहे हैं॥
पहले तो नशेमनकी तबाहीपै नज़र थी।
अब हौसलये-बर्क़ो-शरर-देख रहे हैं॥
पूछो मेरी परवाज़का अन्दाज़ उन्हींसे।
यह लोग जो टूटे हुए पर देख रहे हैं॥

जवानी ख्वाबकी-सी बात है दुनियाये-फ़ानीमें।
मगर यह बात किसको याद रहती है जवानीमें॥

१९४२ ई०—

मैं हूँ कलीमेहिन्द, हिमालय है मेरा तूर।
है इन्तज़ारे-दावते-जलवागरी मुझे॥

मैं ऐ 'सीमाब'[1] सूरज बनके चमका हूँ अँधेरोंमें।
न होनेसे मेरे महसूस दुनियामें कमी होगी॥

---

[1]मिट्टीके पुतलेको, [2]सन्तोष और सब्रके पाँवोंमें, [3]यात्री; [4]मार्गदर्शक, [5]लुटेरे।

देकर खुदी बना दिया इन्सानको खुदा।
फितरत खुद अपने दिलमें पशेमाँ है आजकल ॥

जब तवज्जह तेरी नहीं होती।
जिन्दगी-जिन्दगी नहीं होती ॥
पहरो रहती थी गुफ़्तगू जिनसे।
उनसे अब बात भी नही होती ॥
उनकी तसवीरमें है क्या 'सीमाब'!
कि नजर सैर ही नहीं होती ॥

खामोश हूँ मुद्दतसे नाले है न आहे है।
मेरी ही तरफ़ फिर भी दुनियाकी निगाहे है ॥
'सीमाब' गुजरगाहे-उल्फत को भी देख आये।
बिगडे हुए रस्ते है, उलझी हुई राहें है ॥

मुझे गमसे कितनी ही अफसुर्दगी हो।
तेरे सामने मुसकराना पडेगा ॥

गुम कर दिया इन्साँको यहाँ लाके किसीने।
समझे ही नहीं शोब्दे दुनियाके किसीने ॥
जब जोशे-तमन्नाको न रुकते हुए देखा।
आगोश में ले ही लिया घबराके किसीने ॥

इश्क है सहल, मगर हम है वोह दुश्वार-पसन्द।
कारे-आसांको भी दुशवार बना लेते है ॥
वोह खुद भी समझते नही मुझको सायल।
कुछ इस शानसे गोद फैला रहा हूँ ॥

२० जून १९५२ ई०]

उर्दू पुस्तके खरीदते हुए 'वादये-सर-जोश'को मैने शायरे-इन्कलाब हजरते 'जोश' मलीहाबादीकी नवीन रचना समझकर उठाया, तो उसमें रचयिताका नाम प० लम्भूराम 'जोश' मलसियानी पढकर हैरत-सी हुई। या अल्लाह! कोई नकली 'जोश' भी पैदा कर दिया तूने? खीझकर वरक पलटता हूँ तो जिस कलामपर भी नज़र पडी, पडी रह गई। अब ये आलम है कि पुस्तक-विक्रेता पुस्तकोका ढेर लगाये जा रहा है और मैं हूँ कि 'वादये-सर-जोश'से सरशार हूँ।

माशा अल्लाह! नाम भी अजीव दकियानूसी और तसवीर भी एक देहाती पजावी-जैसी! दिलको यकीन न हुआ कि श्रीमान्‌जी भी शायर हो सकते है। हिन्दी कवि ऐसी वेष-भूषा और नामके निकल आयें तो कोई अचम्भा नही, मगर जिस उर्दू-अदवके तकल्लुफ, सलीके, तौर-तरीके, नफासत-लताफत ही रूहेरवाँ (प्राण) हो, उसका दिलदादा भी ऐसी पुरानी वज़अ्-क़तअ्का हो सकता है, कुछ समझमे न आया! मगर हाथकगनको आरसी क्या? पूरी किताव पढे वगैर जी न माना।

'जोश' साहव कस्वा मलसियाँ, ज़िला जालन्धरके रहनेवाले है। आप १ फरवरी १८८२ ई०मे उत्पन्न हुए। १४ वर्षकी आयुमें ही आपके

सरसे पिताका साया उठ गया। घरेलू-स्थिति ऐसी न थी कि अंग्रेज़ी जैसी खर्चीली शिक्षा जारी रखते। फिर भी आपने मुशीफाज़िल और अदीब-फाजिल दो परीक्षाएँ पास की और एक हाई स्कूलमे फारसीके शिक्षक हुए। देहातका जीवन और पारिवारिक वातावरण शायरीके अनुकूल नही था। फिर भी प्रकृतिका खेल देखिए कि आपको शायरीका चसका ऐसा लगा कि आज उस्तादोमे आपका शुमार है। बचपनसे ही ज़हीन थे। सहपाठी नही चाहते थे कि क्लासमे आप अव्वल रहे। उन्होंने शायरी का चस्का इस नीयतसे लगाया कि हज़रत कहीके न रहेगे। मगर आपने शिक्षा भी आवश्यकतानुसार प्राप्त की और फन्ने-शायरीमे भी कमाल हासिल किया।

चमकीली आँखे, चौडी पेशानी, खसखसी सफेद दाढी, वेसँवरी मूँछे, वन्द गलेके कोटमे मलबूस सरपर देहाती पजावी पगडी लगाये जो सजीदगीसे वैठे है, वही है हज़रते 'जोश' मलसियानी।

वर्त्तमानमे जो अच्छे नज्म-निगार है, उन्होने पहले गज़लकी मश्क की, वादमे नज्म लिखना शुरू किया। मगर जोश साहबने शुरू-शुरूमे नज्मे लिखी, वादमे गज़लगोईकी तरफ माईल हो गये। १९०२मे नवाव-मिर्ज़ा दागके शिष्यत्वका गौरव प्राप्त किया, किन्तु १९०६मे दागके परलोक सिधारनेके बाद स्वय धीरे-धीरे कलामकी मश्क इस खूबीसे की, कि आज वे स्वयं एक अच्छे उस्ताद है।

'जोश' साहबका १९४०मे प्रकाशित सकलन 'बादये-सर-जोश' हमारे सामने है। भूमिका जोशके गुरु-भाई हज़रत 'नूह' नारवीने लिखी है। सकलनमें २३ नज्मे, ८५ गज़लें, ८ रुबाइयाँ और चन्द मनोरजक शेर है। 'जोश' साहब छन्द और व्याकरणके नियमोका इतना ध्यान रखते है कि सकलनके प्रारम्भमें ४२ ऐसी बातोकी सूची दे दी है, जिनसे आपने अपने कलामको अछूता रखा है। इस सूचीसे अनेक उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त होती है।

'असद' मुलतानीके शब्दोमे—"जोशके यहाँ कोई खास निज़ामे-फिक्र (व्यवस्थित विचार-धारा) या पैगामे-हयात (जीवन-सदेश) नही। वे न शायरे-इन्कलाव (युग परिवर्त्तनकारी) है, न शायरे-तखरीब (विध्वस-कारी)। वस शायर है, सिर्फ शायर। पहलूमे एक हिसास दिल (भावुक हृदय) रखते है, और मुँहमे एक सुलझी हुई जवान। जिस वातसे मुतास्सिर (प्रभावित) होते है, सीधे-साधे अल्फाज और दिलनशी अन्दाज़से शेरमे ढाल देते है। उन्होने अपने लिए कोई नया असलूवे-सुखन (नवीन ढग) नही निकाला। लेकिन यही ज़ौके-शेरी (कविता-अभिरुचि)के साथ ज़वानके गहरे मतायले (गम्भीर अध्ययन) और उसूलेफन (छन्द-शास्त्र) की पूरी पावन्दीसे उन्होने रस्मी शायरीके अन्दर अपने लिए एक इनफरादी रग (पृथक् ढग) पैदा कर लिया है। उनके यहाँ अल्फाज़की ज़ाहिरी शानो-शौकत, वयानकी मसनूई (वनावटी) रगीनी और मज़ामीनकी पेचीदगी मुतलक (लेशमात्र) नही पाई जाती। वल्कि खयालकी लता-फत और ज़वानकी सलासत (भाषाका प्रवाह) उनकी शायरीकी नुमायाँ खसूसियत है।"[१]

प्रारम्भमे 'जोश' साहवकी २३ नज्मोमेंसे दो नज़्मोके चन्द शेर वतौर नमूना मुलाहिजा फरमाये—

---

[१]आजकल, उर्दू, १५ मार्च १९४५ ई०, पृ० ५।

गरीबोंकी दुनिया

. . . .

गरीबोके घरमें मसर्रत[1] भी गम है,
गरीबोंके दिलमें ख़ुशी भी अलम[2] है।
गरीबोकी गर्दन है, तेग़े-सितम[3] है:
गरीबोकी हस्ती[4] अदम[5] है, अदम है।
गरीबोकी दुनियामे राहत[6] न ढूंढ़ो॥

. . . .

ख़ता हो किसीकी ख़तावार[7] ये है,
कुसूर औरका हो, गुनहगार[8] ये है।
शफ़ा[9] जिनसे भागे, वे बीमार ये है,
नहीं जिसका चारा[10], वे लाचार ये है।
ग़रीबोकी दुनियामें राहत न ढूंढ़ो॥

. . . . . .

वतन

तमाशा देखनेको आग ख़ुद घरमें लगा ली है।
मेरे अहले-वतनकी दीपमाला क्या निराली है!

'वादये सरजोश' में 'जोश' साहबकी २३ अत्यन्त सफल नज्मे है, किन्तु उनका कवित्व पूर्णरूपसे गज़लोमें ही चमक पाया है। अत उनकी ८५ गज़लोमेसे ७६ अशआर चुनकर दिये जा रहे है—

---

[1]प्रसन्नता, ख़ुशी; [2]रज, [3]अत्याचारकी तलवार, [4]अस्तित्व; [5]मनहूस, [6]सुख-चैन, [7]अपराधी, [8]पापी, मुजरिम, [9]आरोग्यता, [10]उपाय।

ना-शगुफ़्ता[1] ही रही दिलकी कली।
मौसमे-गुल[2] बार-हा[3] आता रहा॥
जौर[4] तो ऐ 'जोश'! आख़िर जौर थे।
लुत्फ़[5] भी उनका सितम ढाता रहा॥

अल्लाह! अल्लाह!! मंज़रेबर्क़े-जमाल[6]।
देखती है आँख, लब ख़ामोश है॥

आबे-कौसर[7] 'जोश' हो जिसपर फ़िदा[8]।
वह मेरा अश्के-नदामत[9] कोश है॥

जीते जी मैं किस तरह आज़ाद हूँ।
आप अपनी क़ैदकी मीयाद हूँ॥
बूए-गुल[10] बनकर हुआ क्या फ़ायदा?
हाय! अब भी ख़ानुमाँ[11] बरबाद हूँ॥
और भी इस शर्मने मारा मुझे।
आपका बन्दा हूँ, फिर नाशाद[12] हूँ॥*

सोज़े-ग़ममें[13] दीदयेतर[14] काम आ सकता नहीं।
यह वह आतिश[15] है, जिसे पानी बुझा सकता नहीं॥

---

[1]अनखिली, [2]बहार, [3]सदैव, बार-बार, [4]अत्याचार, [5]कृपा, आनन्द, [6]सौन्दर्यरूपी बिजलीका दृश्य; [7]बहिश्तमें बहनेवाली शराबकी नहरका मद्य, [8]न्योछावर, [9]प्रायश्चितरूपी आँसू [10]फूलकी सुगन्ध, [11]बे-घरबार, [12]पीडित, बेचैन, [13]रजो-मुसीबतकी आगमें; [14]आँसू भरे नेत्र, [15]आग।

*जिन्दगी अपनी जब इस शक्लसे गुज़री या रब!
हम भी क्या याद रखेंगे कि ख़ुदा रखते थे॥

—ग़ालिब

मंज़रे-तस्वीर[1] दर्दे-दिल मिटा सकता नहीं।
आइना पानी तो रखता है, पिला सकता नहीं॥
मेरी रुसवाईका[2] आलम[3] दावरे-महशर[4] न पूछ।
मैं भरी महफ़िलमें यह क़िस्सा सुना सकता नहीं॥

इक मैं कि इन्तज़ारमें[5] घड़ियाँ गिना करूँ।
इक तुम कि मुझसे आँख बचाकर चले गये॥

दाद[6] देता हूँ तुझे या रब[7]! मैं इस तख़सीमकी[8]।
मेहरबाँ सबके लिए, नामेहरबाँ मेरे लिए॥
मौसमे-गुल[9] ही पै थी, मौकूफ़ फ़िक्रे-आशियाँ[10]।
अब तो हर उजड़ा चमन है आशियाँ मेरे लिए॥

इतना गुमराह न कर नासिहेनादाँ[11]! मुझको।
बढ़के ईमाँसे है वह दुश्मने-ईमाँ[12] मुझको॥
घर बयाबाँमें[13] बनाया तो यह रुतबा पाया।
सरपै देते हैं जगह ख़ारे-मुग़ीलाँ[14] मुझको॥
आज वे शाने-करीमी[15] हैं दिखानेवाले।
कहीं रुसवा[16] न करे तंगिये-दामाँ[17] मुझको॥
उसके चक्करमें दुबारा तो मैं आनेका नहीं।
ढूँढ़ती फिरती है क्यो गर्दिशे-दौराँ[18] मुझको॥

---

[1]चित्र-अवलोकन, [2]बदनामीका, [3]कारण, [4]स्वर्गके न्यायाधीश; [5]प्रतीक्षामें, [6]अभिनन्दन करता हूँ, [7]हे ईश्वर! [8]विशेपताकी, [9]फूलोकी बहार, [10]घोसला बनानेकी चिन्ता, [11]मूर्ख उपदेशक, [12]ईमानका दुश्मन, प्रेयसी, [13]उजाड जगलमे, [14]कीकरके कॉटे, [15]ईश्वरीय कृपालुताका रूप, [16]बदनाम, [17]मेरा ओछा दामन, (कही उनके दानके लिए मेरा वस्त्र ही छोटा न पड जाये) ; [18]सासारिक आपत्तियाँ।

हश्रमें[1] था नामये-ऐमाल[2] सबके हाथमें।
मेरे हाथोमें मेरा टूटा हुआ पैमाना था।।

छीन ली क्यो आपने मुझसे मताए-सब्रो-होश[3] ?
क्या सजाए-कैदे-गमके साथ कुछ जुर्माना था ?

सितमको[4] भी करम[5] समझा, जफाको[6] भी वफा[7] समझा
मगर उसपर भी उनकी चीने-पेशानी[8] नहीं जाती।।
वही रिन्दी[9] है जिसके साथ शाने-पारसाई[10] है।
वह मय क्या दामने-तकवामें[11] जो छानी नहीं जाती।।

ऐ दिलेमर्ग-आश्ना[12] ! खतका जवाव सुन लिया!
और तू वेकरार हो, और तू इन्तजार कर!!

कहूँ शरहे-जुनूँ[13] क्योकर खिरदमन्दोकी[14] महफिलमें।
यह वोह नुक्ते है जिनको अहले-दानिश[15] कम समझते है।।
शवे-तारीके-गममें[16] जिन्दगीका है यकीं किसको ?
सफे-अंजुमको[17] हम अपनी सफे-मातम[18] समझते है।।
हमारे इश्कने मफहूम[19] लफ्जोका वदल डाला।
कि जो दमपर वना दे हम उसे हमदम[20] समझते है।।
हुए जो खूगरेगम,[21] ऐशका उनपर असर क्या हो ?
खुशीको वोह खुशी समझें जो गमको ग़म समझते हैं।।

---

[1]स्वर्गमें न्यायके दिन, [2]करनीका लेखा, [3]सब्र और होशकी दौलत, [4]अत्याचारोको, [5]मेहरवानी, [6]जुल्मोको; [7]नेकी; [8]माथेकी त्यौरी, [9]शरावीपन, [10]सदाचारकी आन, [11]ईश्वरीय भय, सयमरूपी वस्त्रमे, [12]प्रेयसीपर मिटा हुआ हृदय, [13]उन्मादका भाष्य, [14]अक्लमन्दोकी, [15]चतुर, समझदार, [16]आपदाकी अँधेरी रातमें; [17]सितारो के समूहको, [18]शोक-सभा, [19]तात्पर्य्य; [20]जीवन-साथी, [21]आपत्तियोंसे परिचित।

निगहे-नाज़पै[1] क़ुर्बान[2] है ख़लकत[3] कैसी !
हर जगह होती है इस चोरकी इज्ज़त कैसी !
मुझपै दुनियामें रही रोज़ कयामत[4] बरपा[5]।
और ऐ दावरे-महशर[6] ! यह कयामत कैसी !
जान देकर भी रसाईकी[7] नहीं है उम्मीद।
हाय ! दुशवार है यह मंज़िले-उल्फत कैसी !

इश्कने हमको ज़ियारत-गाहे-आलम[8] कर दिया।
गर्दे-ग़मसे हो गया तामीर काबा एक और ॥
बहरे-ग़मकी[9] गोद ख़ाली हमने देखी ही नहीं।
एक अगर मँझधारसे निकला, तो डूबा एक और ॥

यह तेरी किस्मतने काँटे बो दिये, ऐ अन्दलीब[10]!
बेतरह उलझा हुआ है तेरा दामन फूलमें ॥
इनमें जो अच्छा है चुन ले, ऐ निगाहे-इन्तख़ाब[11] !
एक गुलशन ख़ारमें है, एक गुलशन फूलमें ॥
ऐ ख़िज़ाँ[12]! अब ख़ारोख़समे[13] भी जगह पाता नहीं।
आह ! वोह तायर[14] कि था जिसका नशेमन[15] फूलमें ॥

हयाते-जाविदाँ[16] आई है जाँबाज़ोंके[17] हिस्सेमें।
हमेशा जीनेवाले हैं यह जितने मरनेवाले हैं ॥

निकम्मा हो गया मैं इस क़दर मसरूफ़े-ग़म[18] होकर।
मेरे ऐमालके कातिब[19] भी अब बेकार बैठे हैं ॥

---

[1]प्रेयसीकी चितवनपर; [2]न्योछावर, [3]जनता, [4]प्रलय, [5]आती रही; [6]प्रलयके बाद न्याय करनेवाले, [7]पहुँचकी, मुलाकातकी; [8]दुनियाके लिए उपास्य; [9]रंजोके समन्दरकी; [10]बुलबुल, [11]पारखी दृष्टि, [12]पतझड, [13]काँटोमें; [14]पक्षी; [15]घोसला; [16]अमर जीवन, [17]वीरोके। [18]विपत्तियोमें व्यस्त; [19]भाग्य-रेखा लिखनेवाले।

खुदा जाने सबा[1] हर रोज क्या पैगाम[2] लाती है।
कि पहरो काँपते रहते है तिनके आशियानोमें ॥
बस अब दो-चार ताइर[3] जो है, ऐ सैय्याद! रहने दे।
इन्हे इनकी कजा खुद ढूँढ लेगी आशियानोमें ॥

दहरमें[4] जिन्सेवफाका[5] कोई गाहक न मिला।
हमीं घाटेमें रहे मोल यह झगडा लेकर ॥
ऐ अजल[6]! तेरे गिरायेसे अगर गिर भी गये।
दोशे-अहबाबका[7] उठ्ठेंगे सहारा लेकर ॥

कफेअफसोस[8] ही मलता मेरी बरबादीपर।
कोई पत्ता भी तो अब शाखे-नशेमनमें[9] नही ॥
इस कदर रहती है नादीदा[10] बलाओकी[11] हविस[12]।
गरदन उस तौकमें है तौक जो गरदनमे नहीं ॥

रजे-दुनिया, खौफे-उकबा,[13] बारे-ग़म[14] फिक्रे-मआश[15]।
एक जाने-नातवाँपर[16] सौ अजाबे-जिन्दगी ॥

उठ गये महशर-खरामीके[17] फिदाई,[18] उठ गये।
अब ज़रा चलना ज़मानेकी हवाको देखकर ॥
बदगुमानीने मेरी वहशत बढा दी और भी।
और भी गुम हो गया मै रहनुमाको देखकर ॥

---

[1]हवा, [2]सन्देश, [3]पक्षी, [4]दुनियामे, [5]भलाई-रूपी वस्तुका; [6]मृत्यु, [7]इष्ट-मित्रोके कन्धेका, [8]अफसोससे हाथ, [9]घोसलकी शाखमें, [10]अनदेखी, [11]मुसीबतोकी [12]तृष्णा, [13]परलोक-भय, [14]मुसीबतोका बोझ, [15]आजीविकाकी चिन्ता, [16]निर्बल प्राणोपर, [17-18]कयामत-की चालपर आसक्त।

आलमे-हैरत ही मेरी मंज़िले-मक़सूद थी।
नक्शे-पा ख़ुद बन गया हूँ नक्शे-पाको देखकर ॥

इक फक़त मैं ही तो नाकाम न आया ज़ालिम
ख़ाक उड़ाती तेरे कूचे से, सबा भी आई !!

मौतकी ज़दसे बच गया जो कोई।
उसको उम्रे-दराज़ने[1] मारा ॥

नक़्शे-उल्फत मिट गया तो दाग़े-उल्फत हैं बहुत।
शुक्र कर, ऐ दिल ! कि तेरे घरकी दौलत घरमें है ॥
नज़अ़में[2] पेशे-नज़र है उम्र भरके वाक़ियात।
सारी दुनियाका मुरक्का[3] आख़िरी मज़रमें है ॥

कामिलकी[4] जो पूछो तो नहीं ख़िज़्र[5] भी कामिल।
जीना उसे आता है तो मरना नहीं आता ॥
ना-अह्ल[6] है वह अह्ले-सियासतकी[7] नज़रमें।
वादेसे कभी जिसको मुकरना नहीं आता ॥

यह जवानी ? यह तर्के-सुहबते-मय !
आपकी अक़्लको हुआ क्या है ?
आप बेवजह मुद्दई क्यो है ?
आपका इससे मुद्दआ क्या है ?

हुस्न और महरबानी ! इश्क और शादमानी !!
ऐसा कभी न होगा, ऐसा कभी हुआ है ?

---

[1]लम्बी उम्रने, [2]मृत्युके समयमें, [3]चित्र ; [4]सिद्धहस्तकी ; [5]भूले-भटकोको मार्ग बतानेवाला एक फरिश्ता, [6]मूर्ख, [7]राजनीतिज्ञोकी दृष्टिमें ।

बिजलीने किया खाक चमन जिसका जलाकर ।
आँधी भी उसी सोख्ता-सामांके लिए है ।।

ग़म जो खाता हूँ तो मुझको खाये जाता है यह ग़म--
"खाऊँगा फिर क्या मैं दुनिया भरका गम खानेके बाद ?"

माहे-नौपर[1] भी उठी है हर तरफसे उँगलियाँ ।
जो कोई दुनियामें आया उसकी रुसवाई हुई ।।

तेरे अन्दाजपर उम्रे-रवाँ कुछ शक गुजरता है ।
लिये जाती है तू मुझको किधर आहिस्ता-आहिस्ता ।।

नाकामे-तमन्ना[2] हूँ मैं उस अश्ककी[3] मानिन्द ।
मरते हुए आशिककी जो आँखोमें रुका हो ।।

मेरे दिलकी तडपने जान तक छोडी न कालिबमें ।
बुझा डाला चरागे-उम्र इस पखेने हिल-हिलकर ।।*

जिन्दा-दिलीके कुछ नमूने—

अहले-मगरिबके[4] फरेबाबादमें[5] ।
सुलहका चर्चा पयामे-जग है ।।

दिल लेके कहते है कि "नविश्त इसकी दीजिये ।
ऐसा न हो कि बादमें झगडा करे कोई ।।"

---

[1]दूजके चाँदपर, [2]असफल अभिलाषी, [3]आँसूकी, [4]पश्चिमी देशोके, [5]झूठ फरेब-रूपी देशमे,

*जो उखडी साँस तो बीमारेगम सँभल न सका ।
हवा थी तेज, चरागे-हयात जल न सका ।।

चरागे-हुस्न तेरा, और मेरा चरागे-दिल ।
वह जलके बुझ न सका और यह बुझके जल न सका ।। --'नानक' लखनवी

रोज़के मिलनेमें यह डर है उन्हे।
दिलवरी नौकरी न हो जाये॥

राहे-अदममें चोर ही इतना करम करे।
चुपके-से ले उड़े मेरी गठरी गुनाहकी॥

हाथसे कासा[1] गदाईका[2] न छूटा एक दिन।
और मुँहसे ताजे-शाहीके है दावेदार हम॥

आइये हर नौजवाँके दोशपर।
तन्दुरुस्तीका जनाज़ा देखिये॥
दुश्मनोंकी दुश्मनीका ज़िक्र क्या?
दोस्तोंमें जौरे-बेजा देखिये॥

मुनहसिर क़ुव्वते-बाज़ूपै है दौलतमन्दी।
देख लो ज़ोरमें मौजूद है ज़र दो-बटे-तीन॥
मलिक-उल्-मौतसे दुनियामें हिरासाँ नहीं कौन?
जिसको कहते है निडर उसमें है डर दो-बटे-तीन॥
ज़ालिमो! ख़ौफ़ करो आह को समझो न हक़ीर।
लफ़्ज़-अल्लाहमें है इसका असर दो-बटे-तीन॥

'जोश' साहबको शतरंजका भी अच्छा शौक है। खेलते तो खूब है ही, उस पर कभी-कभी कहते भी खूब है—

मुझ-से जाँबाज़को गुरबत[3] है बिसाते-शतरंज।
जो न पलटे कभी वापिस वह पियादा मै हूँ॥

समझते खूब थे हम शातिरे-गरदूँकी चालोंको।
मगर नक़्शा पड़ा ऐसा कि बाज़ी हार बैठे है॥

---

[1]पात्र, बर्तन, [2]फक़ीरीका; [3]भ्रमण।

'जोश'! बिसाते-शौक़में मर्ग है अस्ल जिन्दगी।
बाज़िये-इश्क जीत ले बाज़िए-उम्र हारकर॥

जोश साहबका उक्त परिचय एव कलाम हमने ११ मई १९४९को पूर्ण किया था। जो मार्च १९५२की कल्पनामे प्रकाशित हुआ था। इसके बाद हमारी प्रार्थनाको मान देकर स्वय जोश साहबने ९ जून १९५२को अपने दस्तेमुबारकसे ताज़ा कलाम इनायत फ़र्माया। जिसे हम तबर्रुकन यहाँ दे रहे है—

ऐ शेख़ अगर ख़ुल्दकी[1] तारीफ यही है।
मै इसका तलबगार[2] कभी हो नही सकता॥
ऐमालकी[3] पुरसिश[4] न कर ऐ दावरे-महशर[5]!
मजबूर तो मुख़्तार कभी हो नहीं सकता॥
मुमकिन है फरिश्तोसे कोई सहव[6] हुआ हो।
मै इतना गुनहगार कभी हो नहीं सकता॥

ना-करदा गुनाहोमें[7] गिरफ़्तार हुआ हूँ।
अब देखिये इस जुर्मकी मिलती है सजा क्या?
महफिलसे निकालो हमें कुछ सोच-समझकर।
जब हम न रहे आपकी महफिलमें रहा क्या?
यह हर्फ़े-तसल्ली भी सितमसे नहीं ख़ाली।
कहते हैं—"सितम कोई हुआ भी तो हुआ क्या?"
क्या दाद मुझे गिरयए-पैहमकी[8] मिली है।
कहते हैं कि—"आता है तुम्हें इसके सिवा क्या?"

---

[1]जन्नतकी, [2]इच्छुक, [3]कृत्योकी, [4]जाँच, [5]महशरके न्यायाधीश। [6]भूल-चूक, [7]बिना किये हुए पापोमे; [8]निरन्तर रोते रहनेकी।

बात रिन्दीकी मुझको आती है।
पारसाईकी पारसा जाने ॥

हरमसे कुछ आगे बढे हम तो देखा।
जबींके लिए आस्ताँ और भी हैं॥
बना दी मेरे दमपर एक आस्माँने।
गजब है कि छह आस्माँ और भी हैं॥

चुनेंगे एक मुझीको वोह हर सितमके लिए।
ख़ता करे नजरे-इन्तख़ाब क्या मानी?
हदे-शुमारसे बाहर है जब गुनाह मेरे।
हिसाबके लिए यौमे-हिसाब क्या मानी?

नातवानी भी तेरे कूचेमें।
पाये रफ्तार हुई जाती है॥

तेरे गममें सोजे-दिल्की[1] वोह शररफिशानियाँ[2] हैं।
कि असर भी जल गया है, मेरी गरमिये-फुगाँसे[3]॥
तुझे देखनेका सौदा[4] तो जहानमें है सबको।
मगर आँख देखनेकी कोई लायगा कहाँसे?

ला और भी इक जाम कि आई हैं घटायें।
ऐ साकिए-मैख़ाना! तेरी दूर बलायें॥
पीलोगे तो ऐ शेख़! जरा गर्म रहोगे।
ठंडा ही न कर दें कहीं जन्नतकी हवायें॥
दो-चार जगह ख़त्तेजलीमें[5] जो लिखी हैं।
वोह दफ़्तरेइसियाँमें[6] हैं मेरी ही ख़तायें॥

---

[1]दग्धहृदयकी, [2]आगकी लपटें, [3]आहकी गरमीसे, [4]उन्माद; [5]बडे-बडे और आकर्षक अक्षरोंमें, [6]पाप-पुण्यके कार्यालय मे।

कुमरीकी हो फरियाद कि बुलबुलका हो नग़मा।
दोनो हैं मेरे साज़े-मुहब्बतकी सदायें॥

उनसे हम तर्के-तगाफुलका तकाजा न करे।
इसका मतलब है कि जीनेकी तमन्ना न करें॥
वादा करके वोह अगर वादेका ईफा न करें।
उससे बहतर तो यही है कोई वादा न करें॥
उनसे तौक़ीरे-मुहब्बत नहीं होती न सही।
इतनी तहकीरे-मुहब्बत भी ख़ुदारा न करें॥
यह तो है शर्ते-मुहब्बत कोई इसाफ़ नही।
हम तमन्ना तो करें अज़-तमन्ना न करें॥

क्यो फलसफीको गुर्रा अपने कमालपर है।
जितना वोह बाख़बर है, उतना ही बेख़बर है॥

ऐ शेख़! किस जगहको तेरा मुकाम समझें।
तू कुछ ज़मीनपर है, कुछ आसमानपर है॥
थोडा-सा और सुन लो अफसानये-मुहब्बत!
दो हिचकियोमें अब तो किस्सा ही मुख़्तसर है॥

हूरो-ग़िलमांसे मुहब्बत मुझे मज़ूर नही।
तेरा कूचा हो तो जन्नत मुझे मज़ूर नही॥

आप क्या पूछते है क़िस्मते-ख़ुद्दारियेदिल?
सारी दुनियाकी भी दौलत मुझे मंज़ूर नहीं॥
क्यो मेरे जज्बये-मासूमको देता है फरेब!
साफ कह दे कि मुहब्बत मुझे मंज़ूर नहीं॥
तर्के-दुनिया भी करूँ, तर्के-तमन्ना भी करूँ।
तौबा-तौबा यह मुसीबत मुझे मंज़ूर नहीं॥

अब इस शिकवेसे क्या हासिल कि "रहबर ख़ुदगरज़ निकला।"
पराई आस जो तकते हैं अक्सर ख्वार होते हैं ।।

अक़्लसे क्या पूछता आफतको सरपर देखकर ।
वह तो ख़ुद चकरा गई क़िस्मतका चक्कर देखकर ।।

सरगुज़श्ते-अहले-महफ़िल है बहुत नागुफ़्तनी ।
शमअ़को मालूम है सब कुछ मगर ख़ामोश है ।।

दिनको तारे तो मुक़द्दरने दिखाये मुझको ।
फिर भी आती है सदायें—"अभी देखा क्या है ?"

न दुनियामें निभी अपनी, न रास आया अदम हमको ।
कभी इस घरसे निकले है, कभी उस घरसे निकले हैं ।।

या रहें इसमें अपने घरकी तरह ।
या मेरे दिलमें आप घर न करें ।।

सूफ़ियाना कलाम

नज़र-नज़रमें तमाशे दिखा दिये ऐसे ।
मुझे भी एक तमाशा बना गया कोई ।।
दिखाके शोख़निगाहीका जलवये-बेताब ।
मेरी नज़रको तड़पना सिखा गया कोई ।।
नमूदेहुस्नको[1] ख़िलवतमें[2] था करार कहाँ ?
तअ़य्युनातकी[3] दुनियामें आ गया कोई ।।
दिया वोह दर्द कि थी जिसमें एक लज़्ज़ते-ख़ास ।
सितममें शाने-करम[4] भी दिखा गया कोई ।।

---

[1]रूपके जलवेको, [2]एकान्तमे, [3]आलोचकोकी, [4]दयालुताकी शान ।

यह मोजज़ा[1] है कि जिन्दा है अब मेरे अरमाँ।
मरे हुओंको भी जीना सिखा गया कोई॥

नकाब रुख़से उठा दी मगर कमाल यह है।
मेरी नज़रका भी परदा उठा गया कोई॥

वतन (नज़्म)

हर इक शमअ़ है अंजुमनके लिए।
सब अहले-वतन हैं वतनके लिए॥

न रख पास कौड़ी कफनके लिए।
खज़ाने लुटा दे वतनके लिए॥

वही नब्ज़ है जिन्दगीका निशाँ।
तड़पती रहे जो वतनके लिए॥

वतनकी ग़रीबीपै नालाँ न हो।
खज़ाना है तू खुद वतनके लिए॥

ढलक आये हैं आँखोंसे कुछ अश्केग़म।
यह मोती हैं तोहफा वतनके लिए॥

मुसीबत है तेरा यह ख्वाबेगराँ।
न हो बारेखातिर वतनके लिए॥

इसी मौतमें हैं मसीहाइयाँ।
मुबारक है मरना वतनके लिए॥

अगर तेग रखते नहीं 'जोश' तुम।
क़लम हाथमें लो वतनके लिए॥

---

[1] चमत्कार।

रुबाइयात

क्यों तर्के-मएनाब गवारा कर लूँ ?
क्यों ख़ूने-रगे-हयात ठंडा कर लूँ ?
ताइब ही अगर निजातके क़ाबिल हूँ।
बहतर है कि तौबा ही से तौबा कर लूँ ॥

दुनियाको हुनर, विकार खोकर न दिखा।
जौहर अपना ज़लील होकर न दिखा ॥
आलमको दिखा तो आबदारी अपनी।
लेकिन कभी आबरू डुबोकर न दिखा ॥

अब नाचने-गानेमें बुराई न रही।
उरयानिए-ज़न, यह जग हँसाई न रही ॥
आवारगिये तबकेसे नफरत तो कुजा।
ज़ाहिर कोई अंगुश्त-नुमाई न रही ॥

कुछ अपनी करामात दिखा दे साकी !
जो खोल दे आँख वोह पिला दे साकी !
हुशयारको दीवाना बनाया भी तो क्या,
दीवानेको हुशयार बना दे साकी !

अबुल्हसन 'नातिक'के पिता ज़हीरुद्दीनको भी शेर कहनेका शौक था। आपके पूर्वज अहमदशाह अब्दालीके साथ भारत आये थे। आप गुलावठी ज़ि० मेरठके रहनेवाले हैं। व्यापारके सिलसिलेमे अर्सेसे नागपुरमे निवास करते हैं।

११नवम्बर १८८६ ई०को आपका जन्म हुआ। १८५७के विप्लवमे आपके बडोकी समस्त जायदाद लुट गई थी, साथ ही आपके एक ताया (ताऊ) विद्रोही होनेके कारण फाँसी चढा दिये गये थे।

नातिकने देवबन्दके प्रसिद्ध इस्लामिया स्कूलसे अरबीकी सनद हासिल की। १९०० ई०मे आपने शायरी प्रारम्भ की और १९०४ ई०मे मिर्ज़ा 'दाग़'के शिष्य हुए। अभी ५-६ गज़लोपर ही इस्लाह लेने पाये थे कि 'दाग़'का इन्तकाल हो गया। फिर आपने अन्य किसीसे इस्लाह नही ली। आपके शिष्योमे अब्दुल्बारी 'आसी' जैसे मशहूर शायर भी हैं।

मेरे सब्रने भी गजब किया कि उदूकी जानपै बन गई ।
यह कहाँकी चोट कहाँ लगी, यह कहाँका दर्द कहाँ उठा ।।

ले जा रहे हैं दोस्त मुझे, आ रहा है दोस्त ।
क्या मौतको भी आज ही मरना जरूर था ?

जिसकी हसरत थी, उसे पा भी चुके खो भी चुके ।
अब किसी चीज़का हमको नही अरमाँ होता ।।

बेख़ुदी आई थी उनके बाद बज़्मेनाज़में ।
फिर नहीं मालूम हमको, कौन आया किसके बाद ।।

जिन्दगीका सुबूत नालयेज़ार ?
वह भी क्या इक मरी हुई आवाज़ !

सहराये-जिन्दगीसे न माँगूं तो क्या करूँ ?
आख़िर कहाँतक उसमें भटकता फिरा करूँ ।।
बाकी नहीं जहाँमें कोई माँगनेकी चीज ।
अब हाथ भी उठाऊँ तो मैं क्या दुआ करूँ ।।

शामेग़मको तो अभी देर है आनेके लिए ।
दो घड़ी दिनसे न हम कूचका सामाँ करदें ।।

चारागर ! मस्तकी दुनिया है ज़मानेसे जुदा ।
होशमें आ कि जहाँ हम है, वहाँ होश नहीं ।।

याद करनेकी तो बातें हैं बहुत-सी 'नातिक' !
पहले वोह भूल तो जाऊँ जो फ़रामोश नहीं ।।

अभी हम जान देकर सोये हैं, दम लेके उट्ठेंगे ।
न छेड़ ऐ शोरेमहशर ! हट जरा आराम लेते हैं ।।

कहते हैं जिसे वहशत, वोह बात कहाँ साहब !
क्या कहते हो? मजनूं है देखा हुआ दीवाना ।।

हाँ आग लगानेके लिए मेरे घर आये ।
कासिद ! वोह इसी वास्ते आये, मगर आये ।।

उद्रूसे वादा किया, वादा करके टाल गये ।
चलो वोह अब भी बहुत बातको सम्भाल गये ।।
हलाल कर गये कहकर कि अब न आयेंगे ।
वोह जाते-जाते तड़पते पै हाथ डाल गये ।।

साथ भी छोड़ा तो कब, जब सब बुरे दिन कट गये ।
जिन्दगी तूने यहाँ आकर दिया धोका मुझे ।।

हिचकियोंमें हो रहा है जिन्दगीका राग खत्म ।
झटके देकर तार तोड़े जा रहे हैं साजके ।।

क्या इरादे हैं वहशते-दिलके ?
किससे मिलना है, खाकमें मिलके ?
ऐ दिले शिकवासंज ! क्या गुजरी ?
किस लिए होंट रह गये सिलके ?

खत्म होती है कहीं मंजिले-आलाम अभी ।
पूछता क्या है चलाचल दिले-नाकाम अभी ।।

यह मुद्दत हस्तीकी आखिर यूँ भी तो गुजर ही जायेगी ।
दो दिनके लिए मैं किससे कहूँ आसान मेरी मुश्किल करदे ।।

कौन आये मरनेको, वोह् हमारी बस्ती है।
जिन्दगी जहाँ आकर मौतको तरसती है॥

गये है जबसे वोह्, अपने भी आये गैर भी आये।
सब आये भी गये भी, घरकी वीरानी नहीं जानी॥

वोह् गये, हिम्मत गई, रुख़सत शकेबाई हुई।
रफ़्ता-रफ़्ता अपनी दुनिया ही गई-आई हुई॥

अपनी रुसवाईका गम था, जब हमें, वोह् दिन गये।
अब तो यह ग़म है कि ऐसी फिर न रुसवाई हुई॥

उनका हरीमेनाज, मेरा परदये-निगाह्।
छुपते है इस अदासे कि देखा करे कोई॥

मेरे ग़मकी उन्हे किसने खबर की।
गई क्यो घरसे बाहर बात घरकी?
गये थे पूछने अपना पता आज।
हमें उसने बता दी राह घरकी॥
बताऊँ क्या वोह् दिल लेते हें क्योंकर।
जरा-सी इक सफाई है नज़रकी॥

या दुनिया हमपर हँसती थी, या हम हँसते है दुनियापर।
जब हम रो बैठें दुनियाको तो दुनिया हमको रोती है॥

लाता सनमकदेसे, थी क्या मजाले वाइज़?
जी हाँ, हमें उठाता? हम राहमें पडे थे?

१८ मई १९५२ ई०]   निगार जनवरी १९४१ ई०

नवाब 'साइल' देहलवी

[१८६७ ..... ई०]

नवाब सिराजुद्दीनख़ाँ 'साइल' १८६७ ई०मे उत्पन्न हुए। आपके जन्मकी खुशीमे मिर्ज़ा 'ग़ालिब'ने सात अशआरका किता लिखा था। आप मिर्ज़ा शहाबुद्दीन अहमदख़ाँ 'साकिब'के पुत्र और नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ 'नैयर दरख़्शाँ' जागीरदार लोहारूके पौत्र थे। मिर्ज़ा 'ग़ालिब' ज़ियाउद्दीनके बहनोई होते थे। यानी नवाब 'साइल'के पिताके रिश्तेमे मिर्ज़ा 'ग़ालिब' फूफा लगते थे।

नवाब 'साइल' अभी चार वर्षके ही हुए थे कि आपके सरसे आपके पिताका साया उठ गया। १४ वर्षकी उम्रतक अरबी-फ़ारसीकी शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद कूचये-शायरीमे क़दम रक्खा। आप मिर्ज़ा दागके प्रिय शिष्य थे, और उनकी सुपुत्रीको पत्नी बनानेका भी आपको सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुद्दतो उस्तादकी ख़िदमतमे रहकर शायरीकी बारीकियो और देहलीकी टकसाली ज़बान सीखनेका आपको फ़ख्र हासिल हुआ। आपके वास्ते कोई उपयुक्त और मौज़ूं तख़ल्लुसकी तलाश थी कि एक रोज़ एक शरीफ़ और सवाली सूरतने आकर सलाम किया। आनेका सबब पूछनेपर उसने कहा कि साइल (भिक्षुक) हूँ। तख़ल्लुसके लिए मौज़ूं शब्दकी चरचा चल ही रही थी कि एक शरीफ़ इन्सानके मुँहसे 'साइल' शब्द

सुना तो उस्तादको वह इतना भाया कि उसी रोज़से आप 'साइल' कहलाने लगे। यह भी कुदरतकी सितम जरीफी ही समझिये कि जिसका पांच वशोंसे नवाबका ख़िताब चला आ रहा हो, जो शक्लो-शबाहतमें नवाबों, बादशाहोको दूर बिठाता हो, जिसका व्यक्तित्व इतना आकर्षित हो, वह 'साइल' नामसे ख्याति पाये। दोस्तोके छेड़नेपर तख़ल्लुसके सम्बन्धमें आपने फरमाया था—

रफीक[1] करते है ईराद[2] क्यो तख़ल्लुसपर[3] ?
हुनरको[4] छोडके निस्बतसे[5] बा-विकार हूँ[6] मै ॥
'जहीर'-ओ-'ग़ालिब'-ओ-'अरशद' का हूँ जिगरगोशा[7]।
जनाब 'दाग'का तलमीज़[8]-ओ-दामाद हूँ मै ॥

अमीर करते है इज्जत मेरी वोह 'साइल'[9] हूँ।
गुलोके पहलूमें रहता हूँ ऐसा ख़ार[10] हूँ मै ॥

तख़ल्लुसमें मुआनीका अगर कुछ परतवा होता।
तो 'साइल' आपमें यह शान, यह शौकत कहाँ होती ?

'साइल'को तुम न चश्मे-हिकारतसे देखना।
नव्वाब पाँच पुश्तसे उसका ख़िताब है॥

नवाब 'साइल'के सम्बन्धमे यह बात मशहूर थी कि जिसने मिर्ज़ा 'ग़ालिब'को न देखा हो, वह आपको देख ले। लम्बा कद, भरा हुआ गोरा-चिट्टा जिस्म, सुर्ख़-ओ-सफेद किताबी चेहरा, बडी-बडी कटीली आँखे, रेशम-

---

[1]मित्र, [2]एतराज़, [3]उपनामपर, [4]शायरीके अतिरिक्त, [5]वशसे [6]प्रतिष्ठित, [7]कलेजेका टुकडा, [8]शिष्य, [9]भिक्षुक; [10]कॉटा।

सी मुलायम सुफेद दाढी। पाँच पी०के लठ्ठेका चूडीदार पायजामा, तनज़ेब अथवा रफलका अगरखा पहनकर अपने हाथकी सिली हुई मख़मली चौगोशिया टोपी जब सरपर रखते थे, तब देखते ही बनता था। आँखोमे बारीक सुर्मा, मुँहमे पान, सुनेहरी चश्मा, उनको खूब फबते थे।

मुझे उनको पहले-पहल १९२४मे रायबहादुर पारसदासके मुशायरेमें देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तकरीबन उस वक्त उनकी उम्र साठके लगभग होगी, लेकिन बुढापेका कोई खास हमला नही हुआ था। वही चौडा-चकला सीना, वही जवानोकी तरह चाल, वही बातचीतका तरीका, वही आवाज़। हाँ बाल ज़रूर सुफेद हो गये थे, जो कि उनके व्यक्तित्वको और भी प्रतिष्ठित कर रहे थे। बहुत ही वज़अ-कतअके बुजुर्ग थे। उनको देखनेसे आभास मिलता था कि यही पोशाक-ओ-लिबास कभी अहले देहलीका रहा होगा।

मुशायरोमे शिरकत फरमानेको तशरीफ लाते थे तो मुशायरोके संयोजक और श्रोता बहुत ही उत्सुकतापूर्वक उनकी बाट जोहते रहते थे, और जब आनेकी सूचना मिलती थी तो, संयोजक, मित्र-अहबाब, मुख्य-मुख्य शिष्य उनको लिवा लानेके लिए दरवाज़ेतक दौड पडते थे। अन्दर तशरीफ लानेपर प्राय. सभी शायर बा-अदब खड़े हो जाते थे, और आप मुसकराते हुए, अभिवादनोका जवाब देते हुए, अपनेसे उम्रमे बडोको सलाम करते हुए सलीकेसे अपनी नियत जगहपर बैठ जाते थे। आप बहुत ही आकर्षक ढगसे तरन्नुममे गजल पढते थे और कहते है कि मुशायरोमे सबसे पहले आप ही ने तरन्नुममे पढनेका श्रीगणेश किया। आपका एक खास किस्मका तरन्नुम था, जो कि आपका ही तर्जेखास समझा जाता था।

नवाब 'साइल'को पचासो मुशायरोमे देखने-सुननेके अतिरिक्त मुझे आपके दौलतखानेपर हमकलाम होनेका भी फख्र हासिल हुआ है। आपने स्वप्नमे श्रीकृष्णको देखा तो श्रद्धा-भक्तिमे ओत-प्रोत होकर उनकी शानमे मसनवी लिखी थी। उस मसनवीके चन्द शेर मुझे सुनाये, दो-तीन मेहरे

और चन्द गज़लोके अशआर भी। और सबसे बडी स्मरण रखने योग्य बात तो यह हुई कि उनकी बेगम जो मिर्ज़ा 'दाग'की लाडली बेटी थीं, उनके चन्द फिकरे परदेमेंसे ही सही, सुननेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। उर्दू ज़बान उनके घरकी लौण्डी थी, और वे आकाये-ज़बान थे।

जीवनके अन्तिम दिनोमे वृद्धावस्थाके कारण चलने-फिरनेमे दिक्कत होती थी। उस लाचारीका बयान आपने कितने करुणाभरे शब्दोंमें किया है—

रखा है तख़ल्लुस व-मजबूर 'साइल' हुई इतनी जब अहतयाजोकी मुश्किल।
मिले दाना खानेको जब दाना मांगूं, मयस्सर हो पीनेको पानी कहो तो॥

इस लाचारीके बावजूद भी वज़अदारीका यह आलम था कि जिन इष्ट-मित्रोकी मिज़ाज-पुर्सीके लिए जाना आप आवश्यक समझते थे, रिक्शामें बैठकर उनके यहाँ हो आते थे। मृत्युसे एक रोज़ पूर्व आप पाटोदी रियासतसे शामको दिल्ली आये थे। आते ही रिक्शामे सवार हुए और उन इष्ट-मित्रोसे मिल आये, जिनसे वे रोज़ाना मिला करते थे। यह किसीको क्या मालूम था कि नवाब 'साइल'का देहलीके गली-कूचोमें यह अन्तिम फेरा है।

७८ वर्षकी आयुमे १५ सितम्बर १९४५को दिनके दस बजे जन्नत नशीन हुए। आपकी मृत्युपर कितने ही शायरोने नौहे और तारीखे कही। सैकडो आपने शिष्य छोडे हैं।

नवाब 'साइल'ने गजलोके छ दीवान और एक मसनवीका दीवान छोडा है। इन दीवानोमें अनुमानत एक लाख शेर होगे। खेद है कि अभीतक एक भी प्रकाशित नही हुआ है। यहाँ हम उनके चन्द अशआर दे रहे हैं—

कल शवको वज्मे-मयमें उदू मेहमाँ न था ?
बिगड़ो नहीं, खफा न हो, जाने दो, हाँ न था ॥
मूसासे क्यो खुला वोह, किया हमसे क्यो हिजाव ?
जौके-जमाले-यार यहाँ था, वहाँ न था ॥

खामोशीमें है अर्जेहाल क्या-क्या ।
कोई समझे हमारा मुद्दआ क्या ॥

दिलमें है दर्द, दाग कलेजेमे, लवपै आह ।
'साइल'को जो नसीबसे मिलता गया, लिया ॥

वादा किया था आपने और फिर मुकर गये ।
दमभरका तजकरा है, यह आधी घड़ीकी वात ॥
मैं पीके वाज सुनता हूँ, हुरमत[1] जरूर है ।
मशरवके[2] गो खिलाफ सही शेखजीकी वात ॥

वोह आशोबे-तजल्ली हँस रहा है गो पसेपरदा ।
मगर अक्से तबस्सुम आ पडा है सारा चिलमनपर ॥
हमेशा खूने-दिल रोया हूँ मैं, लेकिन सलीकेसे ।
न कतरा आस्तींपर है, न धब्बा जेबो-दामनपर ॥

जो हम हैं शौकसे बेताव, तो वोह शोखीसे ।
करारसे न वहाँ हैं न हैं करारसे हम ॥

गलत है नामये-एमाल सब यह दावरे-हश्र !
हम अपनी नासियतोका[3] शुमार रखते हैं ॥

---

[1] इज्जत, [2] धर्मके, [3] अपराधोका ।

ख़ुदाजोई है जाहिदमें, ख़ुदासाजी विरहमनमें।
है दो रिश्ते तआल्लुकके पडे दोनोकी गरदनमें ॥

शेख ! मैखानेमें हुश्यार जरा चलियेगा।
मुँहके बल गिरते है, जब पैर रिपट जाते हैं ॥

नज़ाकतपर यह दावा हैं कि हम तलवार मारेंगे।
तुम ओछे हो, तुम्हारा हाथ भी लाखोमें ओछा है ॥

सरेवालीं खडे हैं अपने बीमारे-मुहब्बतकी।
नजर है लाशपर और हाथ है आमादा मातमको ॥

यह भी कोई रोना है, कि दो अश्क भर आये।
आँखोमें लहू बनके दिल आये, जिगर आये ॥

आया भी रहम तुझको किसी खस्ता हालपर ?
तूने कभी सुनी भी किसी दादख्वाहकी ?

आसान नजर आये हरइक मुश्किले-दुनिया।
दे साथ अगर हिम्मते-मर्दाना किसीका ॥

मालूम नहीं किससे कहानी मेरी सुन ली।
भाता ही नहीं अब उन्हे अफसाना किसीका ॥

उम्र भरमें एक तो पहचान हमको हो गई।
उसको आशिक जान लेना, जिसको हैरां देखना ॥

"हर्फ़-मतलब सुनके 'साइल'का शरारतसे कहा—
इनकी सूरत, इनकी जुरअत, इनका अरमां, देखना ॥"

इस कदर लुत्फ असीरीका मिला है सैयाद !
याद मुतलक न रहा, मकसदे-परवाज मुझे ॥

'साइल' सवाल करके न खोना तुम आबरू।
दुनियामें एक चीज़ है, बस आदमीकी बात॥

साकीने बादा-ख्वारको दी मैं न शेख़को।
उसने कहा मुझे मिले, उसने कहा मुझे॥

परवाने मिट रहे हैं, तेरी शमए-बज़्मपर।
यह अंजुमन इक और तेरी अंजुमनमें है॥

अमल सब जुहदोतकवाके धरे रह जायें ऐ 'ज़ाहिद'!
कोई कामिल अगर मिल जाय तो कपड़े उतरवा ले॥

न कीजो एतबारे-जुब्बह-ओ-दस्तार ऐ साकी!
शराबे-नाब पीछे दीजो, पहले दाम धरवा ले॥

बन गये 'साइल' तो क्या शाने-इमारत मिट गई।
देखनेवाले नहीं खाते हैं धोखा नामसे॥

——खुमखानयेजावेद भाग चार

सुना भी कभी माजरा दर्दे-गमका, किसी दिल जलेकी जबानी, कहो तो?
निकल आयें आँसू कलेजा पकड़ लो, करूँ अर्ज़ अपनी कहानी, कहो तो?
वफापेशा आशिक नहीं देखा तुमने, मुझे देख लो, जाँच लो, आज़मा लो।
तुम्हारे इशारेपै कुर्बान कर दूँ, अभी मायये-जिन्दगानी[1], कहो तो?
करमकी[2] उम्मीदोंपै बीमारे-उल्फत, बताओ जिये रोज़ मर-मरके कबतक?
किया जाये दशनेसे[3] या ज़हरसे खुद-मदावाये-दर्दे-निहानी[4] कहो तो॥

---

[1]जीवन-धन, [2]कृपाओंकी, [3]खंजरसे, [4]छुपे दर्दकी दवा।

मिले ग़ैरोंसे मुझसे रंज, ग़म यूँ भी है और यूँ भी।
वफ़ा दुश्मन जफ़ाजूका, सितम यूँ भी है और यूँ भी॥
शबेवादा वोह आ जायें, न आयें मुझको बुलवालें।
इनायत यूँ भी और यूँ भी, करम यूँ भी है और यूँ भी॥

किये जाइयो ऐशो इशरतमें हा-हू, न कीजो नज़र बावफ़ाकी तरफ़ तू।
तुझे क्या ख़बर ऐ सितमगर जफ़ाजू! कि दम मरनेवालेने क्योंकर दिया है?
मेरादाग़ दिलका चमकता जो देखा, तो पूछा सितमगरने—"है चीज़ यह क्या"?
कहा जोड़कर हाथ मैंने, बस इतना—"तुम्हींने यह ऐ बन्दापरवर! दिया है"॥

दिले-नाकामको उम्मीदे-करम है तो सही।
देखनेको सूयेदर,[1] आँखोंमें दम है तो सही॥
हो परिस्तारको[2] क्या तेरे, तमन्नाये-बहिश्त?
हूरेपैकर[3] तेरा घर, रश्केइरम्[4] है तो सही॥
किस बिनापर हो शकोशुबह, ग़लतगोई का।
उनके हर क़ौलमें पैवन्देक़सम है तो सही॥

नाम 'साइल' है मगर, चश्मेतमअ़से[5] उसने।
कभी देखी ही नहीं, साहबे-ज़रकी[6] सूरत॥

मज़ा यह दाग़े-उल्फ़तका है, दिलमें हज़रते 'साइल'!
उभरकर आबला हो, बैठकर नासूर हो जाये॥

रखनी है बरकरार अगर आबरूये-दिल।
गोश आशनाये ग़ैर न हो आरज़ूये-दिल॥

---

[1]द्वारकी तरफ़, [2]आसक्तको, [3]परीका शरीर; [4]स्वर्गसे बढ़कर; [5]अभिलाषा दृष्टसे; [6]धनिककी।

सितमगारीकी तालीमें उन्हे दी है, यह कह-कहकर ।
कि रोता जिस किसीको देख लेना, मुसकरा देना ॥

सरे बज़्मे-सुख़न 'सायल'के चर्चे हो चले देखो—
"जनाबे दाग़के दामाद है, यह दिल्लीवाले है ॥"

यही ख़त उसके मुँहपर मार दीजो, बेधड़क कासिद !
अगर तुझको कड़ी नज़रोसे, उसका पासबाँ देखे ॥
फरेबे-दामोदानासे[1] बचा ले दम[2], अगर बुलबुल ।
तो रोशन आँधियोमे भी, चराग़े आशियाँ देखे ॥

२६ मई १९५२ ई०]

आशियाँ

---

[1]जाल और चुग्गेके जालसे, [2]स्वयको ।

आग़ा 'शाइर' क़िज़िलबाश
[१८७१-१९४० ई०]

आगा मुज़फ्फरवेग 'शाइर' दिल्लीमे १८७१ ई०मे उत्पन्न हुए थे और मिर्ज़ा दागके प्रिय शिष्योमेसे थे, और वर्षों उस्तादकी सेवामे हैदरावाद रहे थे। आपने वडे अदवके साथ अपने लेखोमे उस्तादका उल्लेख किया है और यह भी वताया है कि हम कितने डरते हुए इस्लाहके लिए उस्तादके पास जाया करते थे और उस्ताद कितनी मेहनत और लगनसे गज़लोका सशोधन किया करते थे।[1] आपके सैकडो शिष्य थे। मुशी महाराज वहादुर 'वर्क' और प० जिनेश्वरदास 'माइल'-जैसे सुयोग्य शायर आप ही के शिष्य थे।

मैने आपको कई मुशायरोमे देखा है। गज़ल पढनेका ढग इतना आकर्षक और मोहक होता था कि श्रोता मत्रमुग्धसे हो जाते थे। शेर पढते हुए स्वय शेर वन जाते थे, और व्यथापूर्ण शेर पढते हुए अक्सर रो पडते थे। वह गज़ल तो मुझे अव याद नही, हाँ वह दृश्य अव भी ज्यो-का-त्यो आँखोमे घूम रहा है। 'वोह आ रहे है' शेरका कुछ ऐसा मतलव था कि आपने शेर पढते हुए कुछ इस अदासे दाहिने दरवाज़ेकी तरफ देखा कि

---

[1] शेरोसुखन प्रथम भागमे मिर्ज़ा दागके परिचयमे इस तरहके १-२ अवतरण दिये गये है।

तमाम श्रोता गर्दन फेर-फेरकर उधर देखने लगे, जैसे कि कोई सचमुच आ रहे हैं, और जब आपने इसी मिसरेको पढते हुए बायें दरवाज़ेकी ओर संकेत किया तो दर्शक उधर देखने लगे थे। उनकी समूची गजलका अन्दाज यही होता था।

आपका रगे-शायरी वही 'दाग' स्कूलका है। आप शायर होनेके अतिरिक्त बहुत अच्छे गद्य-लेखक और अनुवादक थे। आपके साहित्यिक और आलोचनात्मक ३७ लेखोका संकलन 'खुमारिस्तान' प्रकाशित हो चुका है। उमर खैयामकी फारसी रुबाइयोको उर्दू रुबाइयो-का रूप इस सलीकेसे दिया है कि उमर खैयामकी अस्ल रुबाइयाँ मालूम होती हैं। आपने कितने ही उपन्यास और नाटक भी लिखे थे।

मझोला कद, जिस्म दुहेरा गुदाज था। चेहरा गोल, आँखे बडी-बडी चमकदार और रसीली। सरपर पठानी ढगका साफा, आवाज दर्दीली और पाटदार। १२ मार्च १९४०को आपका निधन हुआ तो दिल्लीके एक अखबारने लिखा—"दिल्लीका जवानदाँ, हिन्दु-मुस्लिम इत्तहादका सच्चा आशिक चल बसा"। दूसरे अखबारने लिखा—

मर गया नाविक फिगन मारेगा दिलपर तीर कौन ?

आपकी कब्रपर जो कुतबा लगा हुआ है, उसमे एक मिसरा यह भी है—

आख़िरी शायर जहाँनाबादका खामोश है

आगा शाइर सहृदय और कोमल स्वभावके थे। नफीस और नाजुक तबीयत पाई थी। अपनी पोशाकको इत्रोमें बसाये रखते थे, वही आगा शाइर अपने इस शेरके अनुसार मिट्टीके नीचे दबे पडे है—

लहदमें उनके जिस्मे-नाजनीपर क्या गुजरती है।
सहरतक[1] जिनको बेचैनी रही हो चीनेबिस्तरकी[2] ॥

---

[1]प्रात काल तक; [2]बिस्तरकी सिलवटकी।

आगाशाइर साहबका पहला दीवान 'तीरोनश्तर' १६०६मे प्रकाशित हमारे सामने है। जिसमे नज्मो, कसीदोके अतिरिक्त १०० पृष्ठोमें २०० गज़लें है। तीरो-नश्तरसे और कुछ पत्र-पत्रिकाओसे चन्द अशआर चुनकर यहाँ दिये जा रहे है—

क्या बात है कि आँखमें सुर्मा नही है आज।
ख़ाली धरा हुआ है तमचा चला हुआ॥
उसको ही अद-बदाके मिलाया है ख़ाकमें।
देखा है जिसको चर्ख़ने फूला-फला हुआ॥

कहा जो मैंने कि "पहले तो सीधे-सादे थे।
यह बांकपन न था, इस तरह पेचोताब न था॥
ख़मोश रहते थे गोया ज़बाँ न थी मुँहमें।
यह शोख़ियाँ, यह तलव्वन, यह इज़्तराब न था॥
हमेशा फिरते थे बेपरदा सामने मेरे।
खुले थे बन्देकबा और कुछ हिजाब न था॥
यकायक ऐसा हुआ क्या, यह इनकलाब न था।
कि परदे लग गये और कोई बारयाब न था॥"
तो मुसकराके कहा—"दूर अक़्लके दुश्मन!
समझ ले इतना कि जब आलमे-शबाब न था।"

सर काटकर न आँखोसे लड़ियाँ बहाइये।
हमको वफाका लुत्फ जफा ही में आ गया॥

पहले इसमें इक अदा थी, नाज था, अन्दाज था।
रूठना अब तो तेरी आदतमें दाखिल हो गया॥

यह किसने रोजने-दीवारसे हँसकर मुझे झाँका?
कि शोला फिर गया आँखोंमें मेरी वर्कसोजाँका॥

नब्ज़ देखी, हाल पूछा, उठ चले ।
बैठिये साहब, भला यह आये क्या ?

किस तरह जवानीमें चलूँ, राहपर नासेह !
यह उम्र ही ऐसी है, सुझाई नही देता ।।

जवानी भी अजब शै है कि जब तक है नशा उसका ।
मज़ा है सादे पानीमें शरावे-अर्गवानीका ।।

तंग आकर जब कहा मैंने—"नहीं मिलनेके तुम ?"
हँसके बोले—"बस यही फ़िक़रा जवाबी हो गया ।।"

हाय इस कहनेके सदके क्यो न मर जाये कोई ।
"मर मिटा कोई तो फिर अहसान हमपर क्या हुआ ?"

जीते-जी तो लाख झगडे थे वतानेके लिए ।
यह किसीने भी न समझाया कि मरकर क्या हुआ ।।

किस अदासे पूछते है, मेरी सूरत देखकर—
"यह तेरा क्या हाल है, दो दिनमें कैसा हो गया ?"

जिस ख़ाकमें हो चाँदके टुकडे हज़ार-हा ।
निसबत है आसमानको फिर उस ज़मींसे क्या ?

जब कहा महशरमें—"सच्चा चाहनेवाला है कौन ?"
उफरे शोख़ी मुझको उँगलीसे बताकर रह गया ।।

पहन लें कफन अब यह नौबत है अपनी ।
मगर है वही हमसे परदा तुम्हारा ।।

कहा जलके यह ज़िक्रे-मर्गे-उदूपर।
"उठाते हैं चलकर जनाज़ा तुम्हारा॥"

आँखे नशीली, बाल खुले, मुसकराहटें।
इस वक़्त यह नशा है तुम्हे किस बहारका ?

किसीके रुख़पै है जुल्फें कि आफताबमें साँप।
खुदाकी शान है रहने लगे नक़ाबमें साँप॥

दो इजाजत तो कलेजेसे लगा लूँ रुख़सार।
सेंक लूँ चोट जिगरकी, इन्हीं अगारोंपर॥

लाखमें एक कोई निकलेगा।
कौन करता है, मुफलिसीमें लिहाज़ ?

'शाइर' किसे दिखाऊँ गजल हाय क्या करूँ ?
मेरे तो दिलसे जा नहीं सकता है दाग़े 'दाग़'॥

न क्यो गालियाँ खाके होंट उसके चूमूं।
कि देती है तल्ख़ी शराब अव्वल-अव्वल॥
वोह भी न चैनसे कहीं दमभरको रह सका।
दुनियामें जिसने आके सताये पराये दिल॥

पहले यह हुक्म था आवाज़ न निकले मुँहसे।
अब यह ज़िद है कि तड़पते हुए फरियाद करें॥

जब कभी हमने बुलाया उनको।
यही कहते हैं—"कहो आते हैं॥"

मिलना न मिलना यह तो मुकद्दरकी बात है।
तुम खुश रहो, रहो मेरे प्यारे, जहां कहीं॥
मैंकश हूँ वोह कि पूछता हूँ उठके हश्रमें—
"क्यो जी शराबकी हैं दुकानें यहाँ कहीं?"

माना कि देखनेसे भी जीता है आदमी।
वोह क्या करे जिसे तेरे दरतक गुजर न हो॥

हुस्ने-रफ्ताका अब मलाल ही क्या?
आरज़ो चीज़ थी रही-न-रही॥

देखना उनकी शरारत कि उदूकी खातिर।
मेरे मरनेकी ख़बर झूठ उड़ा रक्खी है॥

तुम कहाँ, वस्ल कहाँ, वस्लकी उम्मीद कहाँ?
दिलके बहलानेको इक बात बना रक्खी है॥

पामाल करके पूछते हैं किस अदासे वोह—
"इस दिलमें आग थी? मेरे तलवे झुलस गये॥

बहुत सुन ली बस अब आपेमें रहिये।
निकल जाये न कुछ मेरी ज़बांसे॥

हमारी दास्तानेगम सुनी, सुनकर यह फ़र्माया—
"जिसे तुम कह रहे हो क्यो जी यह किस्सा कहांतक है?"

क्यो कर गया, मिला न मिला, उसने क्या कहा?
ऐ नामाबर! सिरेसे सुना, दास्तां मुझे॥

ख़ुदाकी शान क्या तकदीर आई है विगडनेपर।
हमारी बात भी जब तुमको गाली होती जाती है॥

दरवाज़ेपै उस बुतके सौ बार हमें जाना।
अपना तो यही काबा, अपना तो यही हज है॥
ऐ अबरूए जानाँ! तू, इतना तो बता हमको।
किस रुख़से करें सजदा क़िब्लेमें ज़रा कज है॥

न छेड़ो अब शिकिस्ता ख़ातिरोंको।
कोई गमज़े उठायेगा कहाँतक॥

बस चलो हो चुका इतना नहीं बनते तौबा।
देखना रात गुज़र जाय न सामानोंमें॥
माशा अल्लाह रक़ीबोंका यह जमघट आहा।
आज तो शमअ बने बैठे हो परवानोंमें॥

ग़रीबोंके मरकदको ठुकरानेवाले।
सँभल जानेवाले, सँभल जानेवाले॥

ख़याले-अबरुये-पुरख़मसे इक तसवीर पैदा है।
ज़रा तुम सामने आना कि हमने चाँद देखा है॥

उधर जो देखता है, वोह इधर भी देख लेता है।
तेरी तसवीर बनकर हम तेरी महफिलमें रहते हैं॥

यह चमनका है तसव्वुर कि क़फसमें पहरो।
डालियाँ झूमती हैं मुर्गे-गिरफ़्तारके पास॥

दम न निकला सुबहतक शामे-अलम।
हसरतोंने रातभर पहरा दिया॥

काबेसे दैर, दैरसे काबा।
मार डालेगी राहकी गर्दिश ॥

तुम क्या सुनोगे, वाह सितमगरसे क्या कहे ?
हाँ कोई अहले-दर्द हो, पत्थरसे क्या कहे ?

सिधारें भला आप क्या देखते हैं ?
जनाजा किसीका, तमाशा किसीका ॥

आदमी-आदमीसे मिलता है।
बात करनी तो कुछ गुनाह नहीं ॥

रोज फ़र्माते हैं—"हम चाहे तो मिट जाओ अभी।"
देखना क्या मेरी तकदीर बने बैठे हैं ॥

इनकारे-गिरियाएं मेरे किस नाजसे कहा—
"आंसू नहीं तो पूछते हो आस्तींसे क्या ?"

लो आओ मैं बताऊँ तिलस्मे-जहांका राज।
जो कुछ है सब खयालकी मुट्ठीमें बन्द है ॥

बुरे हालसे या भले हालसे।
तुम्हे क्या ? हमारी बसर हो गई ॥

जो बर्कोबादपै कादिर वह इस कदर मजबूर।
कि एक सांस बढानेका अख्तियार नहीं ॥

हम जिलाये गये हैं मरनेको।
इस करमकी सहार कौन करे ?

हश्रमें इन्साफ होगा, बस यही सुनते रहो।
कुछ यहाँ होता रहा है, कुछ वहाँ हो जायगा॥

फिर मेरे सरकी क़सम खाकर चले।
फिर मुझे सरकारने धोका दिया॥

कोसते हैं सतानेवालेको।
आपसे तो कोई ख़िताब नहीं॥

तुम भला कौन थे दिलमें मेरे आनेवाले।
देखना जान-न-पहचान चले आते हैं॥

तिनकेकी तरह सैले-हवादस लिये फिरा।
तूफान लेके आये थे हम जिन्दगीके साथ॥

उफ़री शबनम इस कदर नादारियाँ।
मोतियोको घासपै फैला दिया॥

ऐ शमअ़! हमसे सोज़े-मुहब्बतके ज़ब्त सीख।
कम्बख़्त एक रातमें सारी पिघल गई॥

बर्क़े-ख़िरमन सोज़! अब रखना ज़रा चश्मेकरम।
चार तिनके फिर जुड़े हैं, आशियानेके लिए॥

लो हम बतायें ग़ुंच-ओ-गुलमें है फर्क क्या?
इक बात है कही हुई, इक बे-कही हुई॥

९ जून १९५२]

हाजी सैयद वहीदुद्दीन अहमद 'वेखुद' १८६० ई०में भरतपुरमें उत्पन्न हुए, और दो माहके वाद ही आपके पिता अपने वतन दिल्ली ले आये। ४ वर्षकी आयुसे शिक्षा प्रारम्भ हुई।

फारसीका अभ्यास तो पूर्णरूपेण हो सका, किन्तु शायरीके चस्केके कारण अरवी-शिक्षा अधूरी रह गई। १२ वर्षकी उम्रसे आपने शेर कहना शुरू कर दिया था। आपने जो पहले-पहल शेर कहा वह यह था—

दिलसे निकल गया कि जिगरसे निकल गया॥
तीरे-निगाहे-यार किधरसे निकल गया॥

आपके वावा 'सालिक' उपनामसे शायरी करते थे और मिर्ज़ा गालिवके शिष्य थे। आपके पिता भी 'सालम' उपनाममें शायरी करते थे। और आपके दो चाचा—'मौजूँ' और 'फर्द' भी शायर थे। आपके मामा 'शैदा' उपनाम फर्माते थे और 'आज़ुर्दा' आपकी माताके फूफा थे। गोया यूँ कहना चाहिए कि—

पुश्तें गुज़री हैं इसी दश्तकी सैयाहीमें[1]।

---

[1]इसी मार्गकी यात्रामें।

श्रापके शेर कहनेका यह आलम था कि रोज़ाना १-२ गजल कह लेते थे, और रोज़ाना फाड डालते थे। इस तरह आपने तकरीवन एक दीवानके योग्य गज़ले स्वयं ही नष्ट कर डाली।

एक रोज आपके चचा 'मौजूँ' साहव गज़ल कह रहे थे। आपने दरियाफ्त फर्माया कि—"आप क्या लिख रहे है"? जवाव मिला—"गज़ल कह रहा हूँ।" आपने फर्माया कि—"इजाज़त दे तो मै भी इस ज़मीनमे तवअ आजमाई करूँ।" चचा वोले—"तुम क्या कहोगे"?

यह वात आपको नागवार हुई! अदवसे चुप हो रहे, कुछ जवाव न दिया। लेकिन दिलमें कहा—"हम गज़ल ज़रूर कहेगे।" उस वक्त आप १४ वर्षके थे। फिर क्या था, आपने इस फनमे वोह महारत हासिल की, कि इस घटनाके २५ वर्ष वाद आपके वही चचा साहव अपनी गज़लोका सशोधन आपसे कराने लगे।

एक दिन आपके मामा 'रसा' साहव—'हाल कव', 'खाल कव'—काफिया-रदीफपर गज़ल कह रहे थे, रसा साहवने यह किता कहा—

देखो तो आईना ज़रा ऐ हज़रते 'रसा'!
चेहरेसे आश्कार[1] था, रंजो-मलाल कव?
हमने न कह दिया था कि अच्छा नहीं है इश्क।
कव तुम थे वेकरार, हुआ था यह हाल कव?

'वेखुद' भी पास ही वैठे थे, आपने तुरन्त ये मिसरे लगाये—

मेरी ख़ता मुआफ हो, है शर्मकी यह जा।
यह हाले-ज़ार, और हो हज़रत-सा पारसा॥

---

[1]प्रकट।

बेखुदकी शक्लको भी तो दिलसे भुला दिया।
देखो तो आईना जरा ऐ हजरते 'रसा'!
चेहरे-से आश्कार था रंजो-मलाल कब?

था कौल आपका तो कि गरदूं नशीं है इश्क।
या कहते हो कि मौतसे बदतर कहीं है इश्क।।
क्यो है जबांपे दुश्मने-दुनिया-ओ-दीं है इश्क।
हमने न कह दिया था कि अच्छा नहीं है इश्क।।
कब तुम थे बेकरार, हुआ था यह हाल कब?

हजरत 'हाली' उन दिनो आपको 'गालिब'का फारसी दीवान पढाया करते थे। उन्हे जब ये मिसरे सुनाये गये तो बहुत खुश हुए और उन्होने आपको हज़रत दागका शिष्य होनेका मशविरा दिया। मौलवी 'बेदिल' साहब आपको 'दाग'की खिदतममे ले गये और आपकी तरफ इशारा करके बोले—"इनको अपना शागिर्द कीजिये।" हज़रत 'दाग'ने बेखुदसे अपनी कोई गजल पढनेको कहा। आपने जब यह शेर पढा—

जब आंख पडी अपनी, इक बात नई पाई।
इन देखनेवालोने तुझको अभी क्या देखा?

शेर सुना तो दाग फड़क गये। बहुत तारीफ की और मौलवी साहबसे फर्माया कि—"कोहना मश्क (पुराने अभ्यासी) मालूम होते है।" आखिर आपको बताना पडा कि १२ वर्षकी उम्रसे रोजाना गज़ल कहता हूँ और फाड डालता हूँ। हजरत 'दाग' आपसे बहुत प्रसन्न हुए और पूरी तवज्जहके साथ आपकी गजलोका संशोधन करने लगे।

बेखुद छ माह उस्तादके पास हैदराबाद भी रहे और बहुत शीघ्र आप संशोधन करानेके बन्धनसे मुक्त कर दिये गये।

आपकी ज़बान देहलीकी टकसाली जबान है, और आपका भी विश्वास है कि आपको उस्तादकी जबान अता हुई है। फर्माते है—

ज़बाँ उस्तादकी 'बेख़ुद' तेरे हिस्सेमें आई है।
फिर इतना भी नहीं कोई, ख़ुदा रक्खे तेरे दमको ॥

और उर्दू-ज़बान आपको इस कदर प्रिय है कि उसके समक्ष फारसीको हेच समझते हैं—

बोलनी आ गई जिसे उर्दू।
सामने उसके फारसी क्या है?

आप अपने उस्ताद 'दाग़'के रगमें ही शेर कहते हैं। वही शोख़ी, वही छेड-छाड, वही ताने-शिकवे, वही हरजाई माशूक जो 'दाग़'के यहाँ है, वही आपके कलाममे घुले-मिले है। 'दाग़'की शायरीका युग लद गया। दर्जनो इन्कलाब सरसे गुज़र गये। नज़मको तो छोडिये गज़लकी कायापलट हो गई। मगर आप अपने उसी रगमें बेख़ुद हैं।

आप 'दाग़'के प्रसिद्ध शिष्योमें-से है, और उनके शायरीमे उत्तराधिकारी समझे जाते हैं। ३००के लगभग आपके शिष्य हैं। कई मुशायरोमे मुझे भी आपका कलाम सुननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मेरी शादीपर आपने सेहरा लिखकर अता फर्माया था। बडे दबदबेके पुरानी वज़अ-कतअके बुज़ुर्ग हैं। देहलीकी पुरानी यादगारोमे आपका दम ग़नीमत है।

जनवरी १९३८मे मुद्रित ३३८ पृष्ठका आपकी गज़लोका सग्रह 'गुफ्तारे बेख़ुद' हमारे सामने है, उसमें-से आपका चुना हुआ कलाम पेश किया जाता है—

जो तमाशा नज़र आया उसे देखा समझा।
जब समझ आ गई दुनियाको तमाशा समझा॥
ग़ैरियत तक था परेशानि-ओ-फ़ुरकतका गिला।
कुछ शिकायत ही न थी, जब उसे अपना समझा॥

क्या हूँ मैं? मेरे समझनेको समझ है दरकार।
ख़ाक समझा जो मुझे ख़ाकका पुतला समझा॥
एक वोह है, जिन्हे दुनियाकी बहारें है नसीब।
एक मैं हूँ, कफ़से-तंगको दुनिया समझा॥

यह दिल कभी न मुहब्बतमें कामयाब हुआ।
मुझे ख़राब किया, आप भी ख़राब हुआ॥
अज़लमें, जीस्तमें, तुरबतमें, हश्रमें, ज़ालिम!
तेरे सितमके लिए मैं ही इन्तख़ाब हुआ॥
निगाहे-मस्तको साक़ीको कौन दे इलज़ाम?
मेरा नसीब कि रुसवा मेरा शबाब हुआ॥
हमारे इश्ककी दस-बीसने भी दाद न दी।
किसीका हुस्न ज़मानेमें इन्तख़ाब हुआ॥
फ़नाका दावा हज़ारोंको था ज़मानेमें।
हबाबने[1] मुझे देखा, तो आब-आब[2] हुआ॥

खा के आये हो क़सम आज किसीकी झूठी।
लबे-रंगीमें वोह शीरीनिये-गुफ़्तार नहीं॥
मेरे मसकनका[3] पता, तुझको यही काफ़ी है।
वोह मेरा घर है जहां दर नहीं, दीवार नहीं॥

---

[1]बुलबुलेने, [2]पानी-पानी, [3]घरका।

सांस गिनता हूँ, तेरी यादमें कितने गुज़रे।
रात-दिन काममें मसरूफ हूँ, बेकार नहीं॥

अदा सीखो, अदा लानेके दिन हैं।
अभी तो दूर शरमानेके दिन हैं॥

तुम्हें राजे-मुहब्बत क्या बतायें?
तुम्हारे खेलने-खानेके दिन हैं॥
छुपाओ मुंह नकाब उठने न पाये।
कि रंगे-रुख़ निखर जानेके दिन हैं॥

कहें किस मुँहसे अपना आईना-बरदार[1] रहने दें।
तमन्ना है गुलामीमें हमें सरकार रहने दें॥

यह परदेकी निराली तर्ज़ ऐ परदानशीं निकली।
जब आँखें बन्द होती हैं नज़र आता है तू मुझको॥
जनाबे शेख़की दावत भी हो, रोज़ा-कुशाई भी।
कहींसे हाथ आ जाये, अगर बेरंगो-बू मुझको॥
शराबे-इश्क़से मदहोश रहता हूँ मगर 'बेख़ुद'!
फरिश्ता भी तो छू सकता नहीं है बेवज़ू मुझको॥

काबा-ओ-दैरकी राहें तो खुली हैं हर-सू।
कोई इतना नहीं, जो दश्ते-मुहब्बतमें रहे॥
हमसे दुनियाका न सुलझेगा यह गोरखधन्धा।
कौन इस ग़ममें फँसे, कौन मुसीबतमें रहे॥
बे-ख़लिश जिन्दगिए-इश्क मज़ा देती है।
कामयाबीकी न उम्मीद मुहब्बतमें रहे॥

---

[1]दर्पण थामनेवाला।

वाये[1] वोह आँख जिसे दीदये-मुश्ताक[2] कहे।
हाय वोह दिल जो गिरफ़्तार मुहब्बतमें रहे॥

लड़ना था अगर मुझसे ख़िलवतमें[3] लड़े होते।
महफ़िलमें जो तुम बिगड़े दुश्मनकी बन आई थी॥

वोह बन्देका ख़ुदा है, उससे बन्दा छुट नहीं सकता।
ज़रा-सी बातपर इन्सांको इन्सां छोड़ सकता है॥

ख़ामोश हूँ मैं और वोह कुछ पूछ रहे हैं।
माथेपै शिकन भी है, इनायतकी नज़र भी॥

कुरबान उस ज़बानके, सदके बयानके।
नासेहकी बात ही नहीं, जो बेतुकी न हो॥

ख़ाक भी हम तो न ऐ नासहे-नादाँ समझे।
जाके समझा तू उसे जो तुझे इन्सां समझे॥

चार दाग़ोंपै न अहसान जताओ इतना।
कौन-से बख़्श दिये तुमने खज़ाने हमको?

बिगड़ना उसका गुस्सेमें भी शोख़ीसे नहीं ख़ाली।
मज़ेकी बात कह जाता है, ज़ालिम बेमज़ा होकर॥

अब नाम भी वफ़ाका न लूँगा तमाम उम्र।
मुझसे ख़ता हुई, मुझे बख़्शो किसी तरह॥

हिजाब दूर तुम्हारा शबाब कर देगा।
यह वोह नशा है, तुम्हे बे-हिजाब कर देगा॥

---

[1] हाय, [2] देखनेकी अभिलाषी, [3] एकान्तमें।

दम है बाक़ी, न तगाफुलका गिला है बाकी ।
कहरकी आंखसे यह किसने इधर देख लिया ?

'हाँ'को इतना खींचते क्यों हो ख़ुदाके वास्ते ?
फिर तो इस वादेका मतलब दूसरा हो जायगा ।।

जो बात न कहनी थी गुस्सेने उगलवा दी ।
शरमाये बहुत दिलमें, वोह मुझपै ख़फा होकर ।।

सोगवारोंमें मेरे हुस्ने-अदा भी हो शरीक ।
आईना देखके ज़ुल्फोंको परेशाँ करना ।।

हमें तुरबतमें आई नींद यह उनकी इनायत है ।
कफनमें सरके नीचे अपनी खाके-आस्ताँ[1] रख दी ।।
हमें पीनेसे मतलब है, जगहकी कैद क्या 'बेख़ुद' !
उसीका नाम काबा रख दिया बोतल जहाँ रख दी ।।

तुम कहते हो "दिलमें न कोई मेरे सिवा आये"
क्या टाल दूँ उसको भी मुहब्बत अगर आये ?

बेकसीमें था तो ले-देके सहारा उसका था ।
मौत भी आकर कफे अफ़सोस मुझपर मल गई ।।

वही 'बेख़ुद' हूँ मैं समझे हो बेख़ुद जिसको तुम अपना ।
तुम्हारी याद कैसी मैं तो ख़ुद अपनेसे ग़ाफिल हूँ ।।

नाम 'बेख़ुद' है तो मैख़्वार भी होगा वोह जरूर ।
पारसा हम तो समझते नहीं, कहता है वही ।।

---

[1]चौखटकी मिट्टी ।

उनसे कहदे यह कोई, दिलको अलग दफ़्न करें।
क्यो कयामतका यह फ़ित्ना मेरी तुरबतमें रहे॥

ग़ैरके साथ जो वोह फूल चढाने आये।
हट गया अपनी जगह छोड़के मदफन मेरा॥

तू-ही-तू हो, जिस तरफ देखें उठाकर आँख हम।
तेरे जलवेके सिवा पेशेनज़र कुछ भी न हो॥

अभी यह जलवानुमाई, अभी कुछ ख़ाक नहीं।
बुल-बुला पानीका इन्सानकी हस्ती कर दी॥

गुज़र जाते है दो-दो दिन हमें बेदाना-पानीके।
कफसमें कौन खाये बैठकर सैयादके टुकड़े ?

ख़ाकमें मिलके भी दावा है मुहब्बतका मुझे।
नहीं मिटती है मिटायेसे भी हैरत तेरी॥

नज़ाकत आईना तक अक्सको जाने नहीं देती।
यही नक़्शा है तो बस खिच चुकी तसवीर रहने दो॥

ऐ काश मेरी आहमें इतना असर तो हो।
मेरा ख़याल उसको, मुझे देखकर तो हो॥
यह क्या कि आज कुछ है तो कल कुछ ज़बानपर।
शिकवा हो या हो शुक्र, मगर उम्रभर तो हो॥

ना-उमीदीने मिटा दी 'आरज़ू'।
काम यूं निकले दिले नाकामके॥

फ़र्क़ कुछ आलमे-ईजादसे पहले तो न था।
एक ही रग था, उस वक्त तो मेरा-तेरा॥

गुस्ताख़ो-बेअदबकी नज़रसे निहाँ है आप।
इतना तो चश्मेगैरसे परदा ज़रूर था॥

वही हम है, वही रातें, वही है जुस्तजू तेरी।
वही आँखोकी हालत है, इधर देखा, उधर देखा॥

शमएमज़ार थी न कोई सोगवार था।
तुम जिसपै रो रहे थे, वोह किसका मज़ार था?

सौदाये-इश्क़ और है वहशत कुछ और चीज़।
'मजनूँ'का कोई दोस्त फसानानिगार था॥
जादू है या तिलस्म तुम्हारी ज़बानपै।
तुम झूठ कह रहे थे, मुझे एतबार था॥

क्या-क्या हमारे सजदेकी रुसवाइयाँ हुई।
नक़्शे-कदम किसीका सरे रहगुज़ार था॥

जवाब सोचकर वोह दिलमें मुसकराते है।
अभी ज़बानपै मेरा सवाल भी तो न था॥

बाग़े-आलमके तमाशाई मुझे भी देख लें।
मैं भी इस गुलशनका हूँ एक फूल कुम्हलाया हुआ॥

या तो है देखनेमें नज़रका मेरी कुसूर।
या कुछ बदल गया है, ज़मानेका हाल अब॥

फिर बेवफासे अहदेवफा ले रहे है हम।
बेएतबारियोका नहीं एतबार आज॥

हम उसे देखा किये जबतक हमें गफलत रही।
पड गया आँखोपै परदा होश आ जानेके बाद॥

मैं हकीकत-आशना[1] हूँ हस्तिये-मोहूमका[2]।
देखता हूँ गौरसे फूलोको मुरझानेके बाद ॥
राहमें बैठा हूँ मैं, तुम संगेरह[3] समझो मुझे।
आदमी बन जाऊँगा कुछ ठोकरें खानेके बाद ॥

चोट खाकर ही तो इन्सान बना करता है।
दिल था बेकार अगर दर्द न होता पैदा ॥

जबाँपर राजकी बातें हैं 'बेखुद'!
कहींसे आज भी आया है तू क्या?

तुमसे खुलने नहीं देता दिले-बदजन[4] मेरा।
मेरे पहलूमें छुपा बैठा है दुश्मन मेरा ॥

छुपकर मेरे दिलमें, सुनो कानोंसे मेरे तुम।
कहता है जमाना सरेबाजार तुम्हें क्या ॥

वही है बेखुदे-नाकाम तुम समझ लेना।
शराबखानेसे जो होशयार आयेगा ॥

आप ही के तो इशारेसे हरइक काम हुआ।
छुप गये आप तो मैं मुफ़्तमें बदनाम हुआ ॥

मशरिक़की[5] सिम्त[6] क्यो शबेवादा[7] है रोशनी।
निकलेगा आज रातको भी आफताब[8] क्या?

---

[1]वास्तविकताका पुजारी, [2]कल्पित जीवनका, [3]मार्गका रोड़ा, पत्थर, [4]अविश्वासी हृदय, [5]पूर्वकी, [6]तरफ; [7]वायदेकी रात्रि, [8]सूर्य।

दमभरके बाद तुम मुझे पहचानते नहीं।
अब इससे बढकर और मिटेगा शबाब क्या?
बैठे हुए हैं सामने सूरत तो देखिये।
'बेख़ुद' हैं नामके ये पियेंगे शराब क्या॥

तुम्हारे बाद सुना है मेरी अजल आई।
तुम्हारे साथ सुना था मेरा शबाब गया॥

गिनती मुसीबतोकी शबेगम न पूछिये।
ऐसा हजूम था कि मेरा दम उलट गया।
दामन किसीका खींच रहा था खयालमें।
अब देखता हूँ मेरा गरेबान फट गया॥

मुझे किस तरह बावर हो, कि वोह तशरीफ लाते हैं।
कलेजेमें न टीस उठ्ठी न दिलमें इज्तराब आया॥
तुम्हारी एक महफिल, उसमें यह दो रंग कैसे हैं?
कहीं आँखोमें अश्क आये, कहीं जामेशराब आया॥

तेरे दीदारसे बढ़कर नहीं कोई ख़ुशी हमको।
हिलालेईद[1] भी हमने तेरा मुँह देखकर देखा॥
मुहब्बत दिलमें लाये थे, मुहब्बतसे ग़रज़ रक्खी।
ग़रज़ यह है यही इक ख़्वाब हमने उम्रभर देखा॥

जफायें तुम किये जाओ, वफायें मैं किये जाऊँ।
तुम अपने फनमें कामिल हो, मैं अपने फ़नमें यकता हूँ॥
अजलने मुँहपै मँह रखकर दमे आख़िर कहा मुझसे—
"इधर तो देख, आँखें खोल, मैं तेरी तमन्ना हूँ॥"

---

[1]ईदका चाँद।

गाफिल है वोह मुझसे, मुझे किस तरह यकीं हो।
आंखोमें फिरा करता है हर वक़्त कहीं हो॥
जब अर्शपै[1] रहते थे, तो अब दिलके मकीं[2] हो।
पहचान लिया मैंने तुम्हीं थे वोह, तुम्हीं हो॥

क्या आग लगाये कोई नालेके असरको।
पहलूमें वोह बैठे हैं झुकाये हुए सरको॥
मैं चश्मे-इनायतका भरोसा न करूँगा।
सौ रंग बदलते हुए देखा है नज़रको॥

मिला होगा न मुझ-सा कद्रदाँ दर्दे-मुहब्बतको!
निकल जाता है दम मेरा अगर तस्कीन[3] दमभर हो॥

हाथसे ज़िबह करो, उठ नहीं सकती जो छुरी।
हम तो बेमौत भी मौजूद हैं मरजानेको॥

चौंक उठता हूँ कि दुनियासे सफर करना है।
कोई तैयार जो होता है कहीं जानेको॥
कई मैदान तो ऐसे हैं जो तड़पा देंगे।
खत्मतक कौन सुनेगा मेरे अफसानेको॥

तुम्हें ग़रज़ जो दिले-दाग़दारको देखो।
तुम अपने हुस्नको, अपनी वहारको देखो॥

पहले तो मुंह-ही-मुंहमें खुदा जाने क्या कहा?
अब मुझपै यह अताब है, तूने सुना नहीं॥

---

[1]आकाशमे, [2]वासी, [3]चैन।

ख़िलवत[1] समझ रहा हूँ तेरी बज़्मे नाज़को[2]।
मैं क्या करूँ कि ग़ैर मुझे सूझता नहीं॥

मेरे मदफ़नपै[3] क्यों रोते हो आशिक़ मर नहीं सकता।
यह मर जाना नहीं है, सब्र आना इसको कहते हैं॥

ज़मानेकी अदावतका सबब थी दोस्ती जिनकी।
अब उनको दुश्मनी है हमसे, दुनिया इसको कहते हैं॥

ग़ैरकी बज़्मसे आये थे अयादतके[4] लिए।
याद है, याद है, वोह आपका अहसाँ मुझको॥

दरे-मस्जिद ही पै मयख़ाना है 'बेख़ुद'! अफ़सोस।
मुझको बदनाम मेरे नक़्शे-क़दम करते हैं॥

२ जून १९५२]

---

[1]एकान्त, [2]प्रेयसीकी महफ़िलको, [3]क़ब्रपर; [4]मिज़ाज-पुर्सीको।

'बेख़ुद' बदायूनी

[१८५७ — १९२६ ई०]

मौलवी अब्दुलहई 'बेखुद' १७ सितम्बर १८५७ ई०मे बदायूँमे उत्पन्न हुए। आपके पिताका नाम मौ० गुलाम सरूर था। अरबी-फारसीकी शिक्षाके लिए कई उस्ताद नियुक्त किये गये, किन्तु पूर्णरूपेण शिक्षा प्राप्त नही कर सके। इसकी वजह स्वयं फर्माते हैं—"आँखे-हुस्नतलब, दिल-दर्द आश्ना, तबीयत-नफासत-पसन्द और मिजाज आज़ादीजू था। १४-१५ बरसकी उम्रसे शेर कहने लगे।"

जब तबीयतका यह हाल हो, तब पढ़ना-लिखना क्या खाक होता? फिर भी आश्चर्य है कि १८७५ ई०मे आपने वकालत पास कर ली। कुछ दिनो शाहजहाँपुरमे वकालत करनेके बाद राजस्थानकी सरोदी रियासतमे जुडीशियल आफीसर हो गये। वहाँसे रिटायर होकर जोधपुरमे स्पेशल मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए और मृत्युपर्यन्त १९२६ ई० तक वही रहे।

प्रारम्भमे आपने 'हाली'से मशवरये-सुखन लिया। बादमे आप दागके शिष्य हो गये, और उनकी सेवामे रहनेका भी आपको सौभाग्य मिला। जब ३६ वर्ष निरन्तर शायरी करते हुए हो गये और एक भी शेर आपने किसी पत्र-पत्रिकामे छपने नही भेजा। तब आपके इष्ट-मित्रोने किसी तरह आपसे कलाम लेकर प्रकाशित कराया। ब-मुश्किल ५३ वर्षकी आयु होनेपर आपका पहला दीवान प्रकाशित हुआ। खेद है कि

हमे आपका दीवान दस्तयाब नही हो सका। यहाँ हम बहार कोटी द्वारा सकलित 'शायर' जून १६४४मे प्रकाशित अशआरमेसे चन्द शेर दे रहे है—

असर दुआका न हो, जहरकी तो हो तासीर।
कोई सबील तो निकले कजाके आनेकी॥

दिल दिया, दर्द दिया, दर्दमें लज़्ज़त दी है।
मेरे अल्लाहने क्या-क्या मुझे दौलत दी है॥

दी क़सम वस्लमें उस बुतको ख़ुदाकी तो कहा—
"तुझको आता है ख़ुदा याद हमारे होते?"

सच है 'बेख़ुद'से क्या मिले कोई।
आदमी-आदमीसे मिलता है॥

हमीं ने मसलहतन की तलबमें कोताही।
असर तो दौड़के आता जो हम दुआ करते॥

शेर अच्छा ही सही, 'बेख़ुद' निकम्मा ही सही।
आप ऐसा ही समझते हैं तो ऐसा ही सही॥

नाज़ाँ है इसपै वोह कि बड़े बे-वफा हैं हम।
अब बेवफाइयोका गिला कोई क्या करे?

किस आजिज़ीसे हमने कहा—"बेकरार हैं"।
किस बेरुख़ीसे उनने कहा "कोई क्या करे?"

क्या हश्र किया है, निगहे-शर्मने बरपा।
इतना तो कोई आँख उठाकर जरा देखे॥

रज हो, दर्द हो, वहशत हो, जुनूँ हो, कुछ हो।
आप जिस हालसे खुश हो, वही हाल अच्छा है ॥

उदूसे वज़्ममें तुम तो इशारा कर बैठे।
हमारे मुँहसे भी नाले अगर निकल जाते ?

७ जून १९५२ ई०]
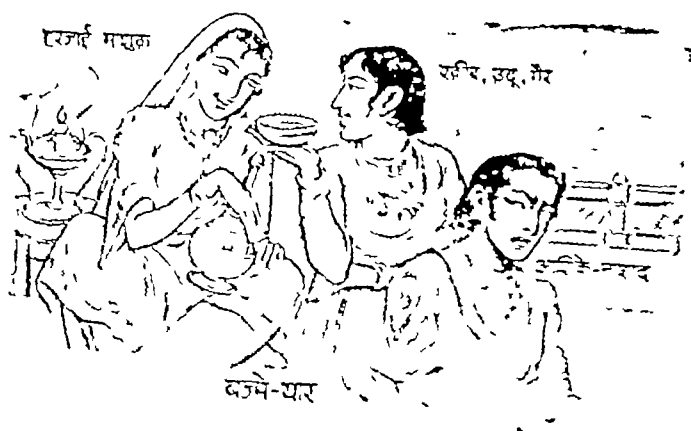
नूह साहव मिर्ज़ा दागके ख्यातिप्राप्त शिष्योमें-से है, उन्हीके रंगमें शेर कहते है। वही टकसाली, चुस्त और मुहावरेदार भापा, वही रगीनी और शोखी, वही वातमे वात पैदा करनेका हुनर, वही परम्परागत भाव, जो दाग़ स्कूलकी विशेपता है, आपके कलाममें पाई जाती है। आपके 'सफीनये-नूह' और 'तूफाने-नूह' दो दीवान प्रकाशित हो चुके है। तीसरा दीवान मुद्रणकी प्रतीक्षामें है। आपके ४००के लगभग शिष्य है।

उनमेंसे कितने ही शिष्योके कलाम प्रकाशित हो चुके है और वे भी अनेक शिष्योंके उस्ताद है। गोया 'नूह' साहव सैकड़ो शायरोंके दादा उस्ताद है। श्री सुखदेवप्रसाद 'विस्मिल' इलाहावादी आपके ही योग्य शिष्योमें-से है।

'नूह' साहव मुद्दतो उस्तादके पास हैदरावाद रहे है, और अपनेको उनका जाँनशीन कहते है।

आपका जन्म १८ सितम्वर १८७९ ई०में हुआ। इलाहावाद ज़िलेके नारागाँवके आप रईस है। यह गांव १८५७ ई०के विप्लवमें खैरख्वाही करनेके एवज़में अंग्रेज़ी सरकारसे आपके पिताको मिला था। वार्षिक आय दस हज़ार रु० है। आपने अरवी-फारसीके अतिरिक्त अंग्रेज़ी शिक्षा भी प्राप्त की है।

'नूह'की आँखोंसे निकले सैकड़ों तूफाने-अश्क।
उसका रोना भी है तो दरियादिलीके साथ है॥

फलकके पार होती है, कलेजेमें उतरती है।
हमारी एक-इक फरियाद दो-दो काम करती है॥
हमारा दिल हो या उनकी जबाँ, दोनो ही आफत हैं।
यह सब कुछ कर गुजरता है, वह सब कुछ कह गुज़रती है॥

बयानेग़मका कोई कद्रदाँ नहीं मिलता।
मुझीको लोग सुनाते हैं दास्ताँ मेरी॥

निगाहे-ग़ौरसे सैयाद उसको देखते हैं।
हिलाले-ईद है, क्या शाखे-आशियाँ मेरी ?

ख़ारे-सहरा खुद कफ़े-पासे अलग हो जायेंगे।
आप वोह काँटा निकालें जो हमारे दिलमें है॥

बाद मरनेके भी दिल लाखों तरहके ग़ममें है।
हम नहीं दुनियामें लेकिन एक दुनिया हममें है॥

जो न दिनको पास आया, जो न ठहरा रातको।
है उसीका ज़िक्र, उसीकी याद सोते-जागते॥

खुदाके डरसे तुमको हम, खुदा तो कह नहीं सकते।
मगर लुत्फ़े-खुदा, कहरे-खुदा, शाने-खुदा, तुम हो॥

गुजरती है बशरकी जिन्दगी किस-किस तवह्हुममें।
जो ऐसे हो तो ऐसा हो, जो ऐसा हो तो, ऐसा हो॥

तुम्हारे वादयेफरदापै क्योंकर एतबार आये ?
कभी कुछ हो, कभी कुछ हो, कभी क्या हो, कभी क्या हो॥

हज़ारो शोख़ियां, फिर शोख़ियोंमें सैकडो ग़मज़े।
तुम्हे दुनियासे क्या मतलब कि तुम ख़ुद एक दुनिया हो ॥

मेरी तदवीरने मुझको मेरी तक़दीरपै टाला।
मगर अब देखिये तक़दीर क्या तदवीर करती है ॥

उसे सौ तरहका ख़याल है, हमें सौ तरहका लिहाज़ है।
कहीं आये क्यो, कहीं जाये क्यो ? कहीं आयें क्या, कहीं जायें क्या ?

तुम्हारी तमन्ना भी क्या दिलनशीं है ?
वहीं थी जहां है, जहां थी वहीं है ॥

वोह लिये जाते है दिलको अपने साथ।
देखता जाता है मेरा दिल मुझे ॥

नब्ज़ साकित, सर्द जिस्म, अहबाव चुप, हैरां तबीब।
अब मेरे अल्लाहको कुछ और ही मंज़ूर है ॥*

लडखड़ाकर कभी क़दमोपै जो साक़ीके गिरे।
फेंककर जामो-सुबू, उसने सम्भाला हमको ॥

और तो उल्फत न निभनेका सबब कोई नहीं।
या बुराई आपमें है या बुराई हममें है ॥

ब ज़ाहिर तो हमारे इश्ककी तारीफ होती है।
समझते है वोह जैसा दिलमें, उसको हम समझते है ॥

---

*उन्हे हिजाब, उदू शादमां, अज़ीज़ निढाल।
मेरा जनाज़ा भी कोई उठायगा कि नही ?
—सीमाब अकबराबादी

शमअ़के सर भी मुसीबत आई परवानेके साथ।
कर दिया दोनोको उसने अपनी महफ़िलसे अलग॥

आजकल १ नवम्बर १९४५ ई०

वफ़ा-ओ-मेहरके[1] बाद आपका मग़रूर[2] हो जाना।
यह ऐसा है कि जैसे पास होकर दूर हो जाना॥

क्योंकर बसर हुई शबेफ़ुरक़त न पूछिये।
सब मुझसे पूछिये, यह हक़ीक़त न पूछिये॥*

असीराने-क़फ़सको वास्ता क्या इन झमेलोंसे।
चमनमें कब ख़िज़ाँ आई, चमनमें कब बहार आई॥

आप हैं, हम हैं, मय है, साक़ी है।
यह भी एक अम्र[3] इत्तफ़ाक़ी है॥
हो गईं ख़त्म हिज्रकी घड़ियाँ।
और थोड़ी-सी रात बाक़ी है॥

दिल है तो उसीका है, जिगर है तो उसीका।
अपनेको रहे-इश्क़में बरबाद जो कर दे॥

यह मैं तस्लीम करता हूँ कि इससे तुमको नफ़रत है।
मगर इतना समझ रक्खो मुहब्बत फिर मुहब्बत है॥

---

[1] नेकी और कृपाके, [2] अभिमानी, [3] घटना।

* इसी क़ाफ़िये और बहरमें नसीम करेंगोने क्या ख़ूब शेर कहा है—

कुछ और पूछिये यह हक़ीक़त न पूछिये।
क्यों आपसे है मुझको मुहब्बत, न पूछिये॥

हजारो शोखियां, फिर शोखियोमें सैकडो गमजे।
तुम्हे दुनियासे क्या मतलब कि तुम खुद एक दुनिया हो॥

मेरी तदबीरने मुझको मेरी तकदीरपै टाला।
मगर अब देखिये तकदीर क्या तदबीर करती है॥

उसे सौ तरहका खयाल है, हमें सौ तरहका लिहाज है।
कहीं आये क्यो, कहीं जाये क्यो ? कहीं आयें क्या, कहीं जायें क्या ?

तुम्हारी तमन्ना भी क्या दिलनशीं है ?
वहीं थी जहां है, जहां थी वहीं है॥

वोह लिये जाते है दिलको अपने साथ।
देखता जाता है मेरा दिल मुझे॥

नब्ज साकित, सर्द जिस्म, अहबाब चुप, हैरां तबीब।
अब मेरे अल्लाहको कुछ और ही मंजूर है॥*

लडखड़ाकर कभी क़दमोपै जो साकीके गिरे।
फेंककर जामो-सुबू, उसने सम्भाला हमको॥

और तो उल्फत न निभनेका सबब कोई नहीं।
या बुराई आपमें है या बुराई हममें है॥

ब जाहिर तो हमारे इश्ककी तारीफ होती है।
समझते है वोह जैसा दिलमें, उसको हम समझते है॥

---

*उन्हे हिजाब, उदू शादमां, अजीज निढाल।
मेरा जनाजा भी कोई उठायगा कि नही ?
—सीमाब अकबराबादी

शमअके सर भी मुसीबत आई परवानेके साथ।
कर दिया दोनोंको उसने अपनी महफ़िलसे अलग॥

आजकल १ नवम्बर १९४५ ई०

वफ़ा-ओ-मेहरके[1] बाद आपका मग़रूर[2] हो जाना।
यह ऐसा है कि जैसे पास होकर दूर हो जाना॥

क्योंकर बसर हुई शबेफ़ुरक़त न पूछिये।
सब मुझसे पूछिये, यह हक़ीक़त न पूछिये॥*

असीराने-क़फ़सको वास्ता क्या इन झमेलोंसे।
चमनमें कब ख़िज़ाँ आई, चमनमें कब बहार आई॥

आप हैं, हम हैं, मय है, साक़ी है।
यह भी एक अम्र[3] इत्तफ़ाक़ी है॥
हो गईं ख़त्म हिज्रकी घड़ियाँ।
और थोड़ी-सी रात बाक़ी है॥

दिल है तो उसीका है, जिगर है तो उसीका।
अपनेको रहे-इश्क़में बरबाद जो कर दे॥

यह मैं तस्लीम करता हूँ कि इससे तुमको नफ़रत है।
मगर इतना समझ रक्खो मुहब्बत फिर मुहब्बत है॥

---

[1]नेकी और कृपाके, [2]अभिमानी, [3]घटना।

*इसी काफ़िये और बहरमें तस्कीन कुरैशीने क्या ख़ूब शेर कहा है—

कुछ और पूछिये यह हक़ीक़त न पूछिये।
क्यों आपसे है मुझको मुहब्बत, न पूछिये॥

हम उनसे क्यों कहें आजारे-दुनिया[1] मुल्तवी कर दो।
तबीयत रफ़्ता-रफ़्ता खूगरे-ग़म[2] होती जाती है।।

हर सदाये-इश्कमें एक राज है।
नालये-दिल ग़ैबकी पहचान है।।

कुछ न कहना भी किसीके सामने।
इक तरहका इंकशाफ़े-राज[3] है।।
इश्कने दिलको पुकारा इस तरह।
मैं यह समझा आपकी आवाज है।।
उनसे मिलकर मैं उन्हींमें खो गया।
और जो कुछ है, वह आगे राज[4] है।।
हुस्नके जलवोको अपने दिलमें देख।
लनतरानी दूरकी आवाज है।।

कब्रोंके मनाज़िरने करवट न कभी बदली।
अन्दर वही आबादी, बाहर वही वीराना।।

वोह नादिम[5] हुए कत्ल करनेके बाद।
मिली जिन्दगी मुझको मरनेके बाद।।
रहा जिन्दादरगोर[6] मरनेसे कब्ल[7]।
खुदा जाने क्या होगा मरनेके बाद।।

अब और इससे सिवा हालेजार क्या होगा?
वोह मुझको देखने आये, मगर न देख सके।।

---

[1]ससारके दुख, [2]दुखोकी अभ्यस्त, [3]भेदका प्रकट करना; [4]भेद। [5]शर्मिन्दा, [6]जीवित ही मृतकके समान, [7]पूर्व।

हम बड़ी देरसे यह देखते हैं।
इस तरफ़ कोई देखता भी नहीं॥

—निगार जनवरी १९४१ ई०

सिवा इसके दुनियामें क्या हो रहा है।
कोई हँस रहा है, कोई रो रहा है॥
अरे चौंक यह ख़्वाबे गफलत कहाँतक ?
सहर हो गई और तू सो रहा है॥

सितम अपने ही अहले-इश्को-वफापर।
यह क्या कर रहे हो, यह क्या हो रहा है ?
मुझी तक नहीं ज़ुल्म महदूद तेरा।
मेरे साथ सारा जहाँ रो रहा है॥

—आजकल १५ अगस्त १९४९ ई०

कुछ मज़ाक़िया कलाम—

अहले मशरिकसे नहीं करते वोह बात !
अहले मग़रिबकी यही पहचान है॥
रोज़के चन्दोंसे आजिज़ आ गये।
लीजिये हाज़िर हमारी जान है॥

रेलपर कुर्बान, होटलपर निसार।
बाप-दादाकी कमाई हो गई॥
पास आयाके जो मैं आया-गया।
खानसामासे लड़ाई हो गई॥

शेर-ओ-सुखन

पहले लेते थे खबर अखबारसे।
अब वोह लेते हैं खबर अखबारकी॥
हैटको मिलने लगी सरपर जगह।
खैर मांगो शेखजी दस्तारकी॥

--आजकल १ नवम्बर १९४५ ई०

२ मई १९५२]

सैयद अलीहसन, मारहरह जिला एटा निवासी थे। आपका जन्म ई० स० १८७६मे और निधन ३० अगस्त १९४०मे हुआ। १८९४ ई०में आप मिर्ज़ा 'दाग'के शिष्य हुए। प्रारम्भमे पत्र-व्यवहारद्वारा अपना कलाम सशोधन कराते रहे, वादमे उस्तादके चरणोमे रहनेका भी काफी अर्से सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उस्तादके पास हैदरावादमे रहते हुए, आपने उस्तादका जीवन-चरित्र "जलवये दाग" लिखा। उस्तादकी मृत्युके वाद आप वहाँसे चले आये। 'कुलियातेवली' और 'तारीख़ेनस्रे उर्दू' आपके दो ग्रथ प्रकाशित हो चुके है। आपने अत्यन्त परिश्रम करके उस्तादके वृहत चारो दीवानोका सक्षिप्त सकलन किया था। खेद है कि वह आपके जीवनकालमे प्रकाशित न होकर एक वर्ष वाद प्रकाशित हुआ।

आपका सरमायये-कलाम और शिष्य वहुत है। अफसोस है कि अभीतक आपका दीवान प्रकाशित नही हुआ। 'मुन्तखिवेदाग'में आपके १५०के करीव अशआर परिचयके साथ दिये हुए है। उन्हीमेंसे चन्द यहाँ दिये जा रहे है।

अहसन पुराने उस्तादोमें-से थे, मगर कलाम वही दाग स्कूलके नमूने-

का पुराने ढर्रेका है। हम उनका कलाम सनवार दे रहे हैं, इससे मालूम होगा कि उनके कलाममे उत्तरोत्तर विकास और परिवर्तन होता गया है।

१८९५ से १९०५ ई० तकके प्रारम्भिक चन्द शेर—

ऐसे दीदारमें मज़ा क्या था?
न सुना कुछ, न कुछ कलाम किया।
उस तरफ आँखने उसे देखा।
इस तरफ़ दिलने अपना काम किया॥
वस्लकी शबका इन्तज़ार न पूछ।
हमने मर-मरके दिन तमाम किया॥

१९१०के लगभगका कलाम—

न दफ़्तर खोल तू ऐ नामावर! इतना बता मुझको।
गया था जिस ग़रज़से तू वहाँ वोह बात भी ठहरी॥
क़यामत भी उसी दिन 'अहसन' अपना सर उठायेगी।
हमारी साँस जिस दिन चलते-चलते इक घड़ी ठहरी॥

दिल गया है ज़रूर उनके साथ।
क्यों गया यह ख़बर नहीं मुझको॥
क़ब्रमें भी तो मरके पहुँचा हूँ।
रास कोई सफ़र नहीं मुझको॥

बहुत बढ़-चढ़के दावे चौदहवींका चाँद करता है।
तुम्हें मेरी क़सम उठना, ज़रा तुम भी सँवर जाना॥
कलाई जिनकी शाख़े-गुल है, वोह क्या तेग़ उठायेंगे।
उठायें भी तो क्या उन फूलकी छड़ियोंसे डर जाना?

क्या करे उम्रे-दोरोज़ापै कोई सैरे-जहाँ?
खेल है ख़त्म ख़ुद अपना ही, तमाशा किसका?

आये तो तेरा ज़िक्र किसीकी जबानपर।
हो गैर भी तो चूम लूं मुंह इस बयानपर॥

१९२३का कलाम—

संगेदर[1] बनकर भी क्या हसरत[2] मेरे दिलमें नहीं।
तेरे कदमोंमें हूं लेकिन, तेरी महफिलमें नहीं॥

रोक ले ऐ जब्त! जो आंसू कि चश्मेतरमें है।
कुछ नहीं बिगड़ा अभी तक घरकी दौलत घरमें है॥

लोग महफिलमें तुझे ऐ इशवागर देखा किये।
हम अलग बैठे हुए सबकी नजर देखा किये॥
हमने देखा एक ही शब ख्वाब उनके वस्लका।
और ताबीर उसकी दुश्मन उम्रभर देखा किये॥
देखना तदबीरेमजिल वहशयाने-इश्ककी!
करके वीरां अपने घरको उनका दर देखा किये॥

न सही कब्रमें आकर मुझे राहत न सही।
तेरे चक्करसे तो ऐ गर्दिशेदौरां! निकला॥

१९२४का कलाम—

दिल इधर है पजमुर्दा, जां उधर है अफसुरदा।
किसको इन हवादसपर ऐतबारे-हस्ती है?

देखते और वोह क्या, हाले-मरीजे-वहशत।
जां-ब-लब देख लिया, खाक-ब-सर देख लिया॥

---

[1]दरका पत्थर; [2]अभिलाषा।

न मिली सैले-हवादससे कहीं मुझको पनाह।
मैंने साहिलको भी ब-ईदयेतर देख लिया॥

ज़माना बदलता रहा लाख चालें।
मगर फ़र्क आया न उनके चलनमें॥
यह है मरके भी शर्मे-इसयाँका आलम।
कि हम मुंह लपेटे पडे हैं कफ़नमें॥
हुआ चाक जिस वक़्त दामानेहस्ती।
लगा फिर न पेवन्द इस पैरहनमें॥

दुनियाकी लावगोई, ऐ इश्क ! तूने देखी !
आबादियोंको तेरी वीराना कह रही है॥

पयाम आया न ख़त आया, न वोह आये, न मौत आई।
मेरी सइयेतलब सब रायगाँ मालूम होती है॥
मज़े ले-लेके ज़िक्रे-हूरो-ग़िलमाँ शेख़ करते हैं।
तबीयत पीरेमुरशदकी जवाँ मालूम होती है॥

खुल गया, ख़ाली हवाबन्दी है राज़े-ज़िन्दगी।
यानी इकतारे-नफ़स है, नासमाज़े-ज़िन्दगी॥

कभी सुलह हो, कभी जंग हो, कभी संग हो, कभी मोम हो।
जो यह हर घड़ी तेरा ढंग हो, तो हो कौन ऐसी अदासे ख़ुश॥

१९३६का कलाम—

बड़े नाफ़हम हैं, वोह जो उन्हे क़ातिल समझते हैं।
हम उनकी दिल-सताईको हयाते-दिल समझते हैं॥
मज़ालिम ही सही वाबस्तगी तो उनसे क़ायम है।
ग़नीमत है कि वोह हमको किसी क़ाबिल समझते हैं॥

ख़ुदावन्दाने-उल्फतका भी उलटा कारख़ाना है।
कि ख़ुद दिल माँगते हैं, और हमें साइल समझते हैं ॥

ख़ुदकशीका शवेगम तजरुबा करने न दिया।
मौतने वक्तसे पहले मुझे मरने न दिया ॥

फना बग़ैर बक़ाका मज़ा नहीं मिलता।
ख़ुदी मिटाओ न जवतक ख़ुदा नहीं मिलता ॥

किसीको भेजकर ख़त, हाय! कैसा यह अताब आया।
कि हर इक पूछता है "नामावर आया, जवाब आया" ?

जमाकर हुस्ने-बेपरवाने सिक्का बेनियाज़ीका।
चलन उठवा दिया कम-हिम्मतोसे इश्कबाज़ीका ॥

जबीं काबेमें रख दी या सरे कूए-बुताँ रख दी।
गरज़ अब उठ नहीं सकती, जहाँ रख दी, वहाँ रख दी ॥

अन्तिम गज़ल, जो उन्होने जुलाई १९४०मे कही, उसके चन्द अशआर—

दामनोको बाँध लेते क्यों गिरेबानोके पास ?
अक़्ल अगर होती गिरहकी तेरे दीवानोके पास ॥
वस्लमें भी सोज़े-फ़ुरक़तका मज़ा जाता नहीं।
शमा रो-रोकर जला करती है परवानोंके पास ॥
दब सकी पस्ती बुलन्दीकी, ज़बरदस्तीसे कब ?
झोपड़े अक्सर नज़र आते हैं ईवानोंके पास ॥
तेरे दीवानोका आबादीमें जी लगता नहीं।
बस्तियाँ उनकी बसा करती है वीरानोके पास ॥

२७ मई १९५२ ई०]

नसीम भरतपुरी

[१८५६—१९०६ ई०]

सैयद शबीरहुसैन जाफरी 'नसीम'के पिताका नाम मीर इल्तमास हुसैन था। आप भरतपुर निवासी और मिर्ज़ा दागके शिष्य थे और उनके रगमे बहुत खूब कहते थे। हमे खेद है कि प्रयत्न करनेपर भी आपका दीवान हमे प्राप्त नही हो सका। मालूम हुआ है कि आपका एक दीवान प्रकाशित हुआ था। न किसी तज़्किरेमें ही आपका परिचय और कलाम दिखाई दिया। सौभाग्यसे अध्ययन करते हुए जनाब मुहम्मद बशीर साहबका डेढ पृष्ठका लेख 'आजकल'के १ सितम्बर १९४५के अकमे दिखाई दे गया, उसीसे परिचय और कलाम यहाँ दिया जा रहा है।

नसीमका व्यक्तित्व कैसा था, इसका कुछ अन्दाज़ा उनके इस मक्तेसे लगाया जा सकता है—

रईसज़ादा था, बावज़अ् था, मुहज़्ज़ब था।
तुम्हे 'नसीम'से कुछ तो कलाम करना था॥

नसीम बलाके ज़हीन और तेज़ थे। अरबी-फारसीकी शिक्षा आपने शीघ्र ही प्राप्त कर ली। मिर्ज़ा 'दाग' उन दिनो रामपुरमे कयाम फर्माते थे, तभी आप १८७६ ई०मे पत्र-व्यवहार द्वारा उन्हे अपना गुरू बनाकर ग़ज़लोंपर सशोधन लेने लगे।

मिर्ज़ा दागको होनहार शिष्यकी तेज़ तबीयत भाँपते देर न लगी और उन्होने आपको अपने पास रामपुर बुला लिया।

वहाँ एक रोज़ ख्वाजा 'कलक'ने नसीमसे अपना कलाम सुनानेकी

फर्माइश की। नसीम सगलाख ज़मीनोके आशिक थे। उन्होने अपनी ताज़ा गजल—'मिनकार चुटकीमे' सुनाई—

नहीं करते उन्हे कुछ देर लगती है, न हां करते।
अभी इनकार चुटकीमें, अभी इकरार चुटकीमें॥

कलकको शक हुआ कि यह गजल 'नसीम'की नही है। दागने शागिर्द-का दिल बढ़ानेके लिए दे दी है। नसीमसे और दो-चार शेर इसी ज़मीनमे कहनेकी फर्माइश की। उन्होने फिलबदी एक और गज़ल 'चुटकीमे' वही कहकर पढी—

हकीकत कबक[1]-ओ-ताऊसे[2] गुलिस्तांकी भला क्या है?
कयामतको उड़ाती है तेरी रफ्तार चुटकीमें॥
लिया था इस ज़मींमें, इम्तहाने-तबअ् यारोने।
किये मौज़ूं यह हमने ऐ 'नसीम'! अशआर चुटकीमें॥

इस फिलवदी गज़लकी 'अमीर' मीनाई, 'मुनीर' शिकोहाबादी, और 'कलक'ने बेहद तारीफ की। जौहर-शनास उस्तादने बहुत कद्रकी नज़रसे शागिर्दको देखा और उसकी हिम्मत बढाई।

दागने जब हैदराबादसे अपना दीवान 'महताबे दाग' प्रकाशित करना चाहा तो 'नसीम'को भरतपुरसे हैदराबाद बुलाकर उसकी तरतीबका कार्य आपके सुपुर्द कर दिया था। 'दाग'की ख्यातिसे कुढ कर जब कुछ ईर्ष्यालुओने आलोचनात्मक हमले किये तो अकीदतमन्द शागिर्द 'नसीम'ने सीनासिपर होकर बडे दन्दानशिकन जवाब दिये और इन ऐतराज़ोके जवाबमे 'ताजयाना' नामक पत्रका प्रकाशन शुरू किया। कहते है कि एक मर्तबा किसीने कहा कि 'अमीर' मीनाईके शागिर्दोंमे 'रियाज़' खैराबादीका जवाब

---

[1]चकोर; [2]मोर।

नही है तो 'दाग'ने मुसकराकर नसीमकी तरफ देखा और कहा—"मेरा रियाज नसीम" है। हैदराबादमे एक वहुत मार्केका मुशायरा हुआ। मिसरा इस तरह था—

यह चोटी किस लिये पीछे पडी है ?*

मिर्जा दागने अपने एक खतमे लिखा था—"तमाम शहरने इसमें गज़ल कही है। लखनऊतकसे गज़ले चली आ रही है।" 'नसीम'ने भी गज़ल कही। सुनते है यह गज़ल दागने अपनी गज़लके साथ 'अमीर' मीनाईको लखनऊ भेजी थी—

वोह आयें ऐसी उनको क्या पडी है ?
यह तूने दिलसे ऐ कासेद ! घडी है ॥
बुरा है इश्क़ यह मै जानता हूँ।
मगर नासेहसे ज़िद-सी आ पड़ी है ॥

मर्सियेगोईमें भी 'नसीम'ने अपने खूब जौहर दिखलाये है, अफसोस है कि मर्सियेका दीवान अभीतक प्रकाशित नही हो पाया है ।

नसीम निहायत खलीक और वावज़अ आदमी थे। रियासत भरतपरमें

---

*इस मिसरेपर 'रियाज़' खैरावादीने यह गिरह लगाई थी—

रहे सीना तना लंगरसे इसको।
यह चोटी इसलिये, पीछे पड़ी है ॥

[पतगमें वाज़ दफा नीचेकी तरफ कपडेकी धज्जी-सी बाँध देते है, ताकि पतग हवाके रुखपर ठीक तनी रहे। उसी खयालको किस खूबीसे रियाज़ने वांधा है।]

सब इन्सपेक्टर पुलिस थे। आपका इन्तकाल १९०६ ई०में हो गया था। 'नसीम'ने अपने उस्तादके प्रति कृतज्ञता इन शब्दोंमें व्यक्त की है—

आ गया और ही कुछ रंग तबीयतमें 'नसीम' !
हाय जब 'दाग' सुखनसज-सा उस्ताद आया ॥

इस मक्तेको पढकर ही सम्भवत सर इकबालने यह शेर कहा होगा—

'नसीम'-ओ-'तिश्ना' ही 'इकबाल' कुछ इसपर नहीं नाजां।
मुझे भी फख्र है शागिर्दिये-दागे-सुखनदांपर ॥

नसीम भरतपुरीके चन्द चुने हुए शेर दिये जा रहे हैं—

गैरके घर है वोह मेहमान, बड़ी मुश्किल है।
जान जानेके हैं सामान, बड़ी मुश्किल है॥

सुबह चलना कूए-जानांमें 'नसीम' !
अब यह क्या मौका है ? आधी रात है॥

वफा अगियार तुमसे क्या करेंगे ?
जो यह होगी तो कुछ होगी हमींसे॥

खतमें उसने गैरका लिक्खा सलाम।
यह भी लिक्खा था मेरी तकदीरमें॥

आप नाराज न हो, आपका कुछ जिक्र नहीं।
अपने दिलसे है गिला आपसे क़िस्सा क्या है ?

तुम सुनोगे उसे ? तुम सुनके तसल्ली दोगे ?
वाह, क्या खूब ! कहूँ तुमसे फसाना दिलका !!

कल दाम भीक माँगके भी देंगे साक़िया !
पिलवादे बहरे-याक़िये-कौसर उधार आज ॥

क़यामत भी कल आई जाती है ऐ हज़रते वाइज़ !
तुम्हे अल्लाह हूरें बख़्श देगा, हम भी देखेंगे ॥

ख़ुदा-ख़ुदा करो मैं कब गया था मस्जिदमें ?
मुझे लगाओगे इलज़ाम पारसाईका !!

'नसीम' ! मैंसे उज़र इस क़दर, जवानीमें।
डरो ख़ुदासे, यह है अहद पारसाईका ?

लज़्ज़ते-जौर ख़ुदाकी क़सम अहसांमें नहीं।
जो मज़ा तेरी 'नहीं'में है, तेरी 'हां'में नहीं ॥

न मौअज़्ज़नका[1] है खटका, न गजरका धड़का।
यह शबेवस्लके झगड़े, शबे हिजरांमें नहीं ॥

क्या बताऊँ कि ख़ुदा जाने जवानी क्या थी ?
जागते-जागते एक ख़्वाब मगर देखा था ॥

तर्के-उल्फतका ग़म उधर भी है।
कलसे चुप-चुप वोह फित्नागर भी है ॥

हिज्रमें जानसे जाना है निहायत आसां।
इसमें जीना ही मेरी जान बडी मुश्किल है ॥

१४ मई १९५३ ई०]

---

[1]अज़ान देनेवालेका।

हुस्न बरेलवी

[१८५७—१९०७ ई०]

हाजी मुहम्मद हुस्नरजाख़ाँ साहब 'हुस्न' १८५७ ई०में पैदा हुए। आपके पूर्वज दिल्लीके रहनेवाले थे, किन्तु फिर स्थाई रूपसे बरेलीमे बस गये। मिर्ज़ा 'दाग़' जब रामपुरमे कयाम फर्माते थे, तब आप उनके शिष्य हुए, और प्रत्येक वर्ष एक-दो मास उस्तादकी सेवामे रहते थे। १९०७ ई०मे आपका निधन हो गया। ख़ुमख़ानये-जावेद भाग २ने कुछ अशआर चुनकर दिये जा रहे हैं—

क्यो दिलेज़ार ! मुहब्बतका नतीजा देखा ?
दर्दे-फुरक़तका कोई पूछनेवाला देखा ?
बस रुख़ेयारसे उठता हुआ परदा देखा।
फिर ख़बर ही न रही, क्या कहे फिर क्या देखा ?
कान वोह कान है, जिसने तेरी आवाज़ सुनी।
आँख वोह आँख है, जिसने तेरा जलवा देखा ॥

मैं क्या पूछूँ कि है मेरी ख़ता क्या ?
अताबे-बेसबबका पूछना क्या ?

ज़रा आहे-पुरदर्दसे बचते रहना।
नहीं दिल्लगी दिल दुखाना किसीका ॥

जलवेकी रोक-थाम करेगा हिजाब क्या ?
दरियाके आगे आबेरवाँकी नक़ाब क्या ?

ऐसेसे दिलका हाल कहे भी तो क्या कहे ?
जो वे कहे, कहे कि "चलो वस सुना, सुना" ॥

दर्दे-उलफ़तमें ज़िन्दगी कैसी ?
मौतका कौन चारागर[1] होगा ॥

मौत भी क्या जाने कुछ वीमार है ।
क्यों नहीं आती तेरे वीमारतक ॥

ज़वानें रुक गईं, सर झुक गये, ख़ैरा[2] हुईं आँखें ।
नक़ाव उलटे हुए कौन आ गया महशरके मैदांमें ॥

'हुस्न' इस आहके, इस आहकी तासीरके सदके ।
मुझे दरसे उठाने घरसे वोह वाहर निकलते हैं ॥

वोह हुस्न है कि कब्ज़ा करे दो जहानपर ।
वोह इश्क़ है कि कुछ न रहे अख़्तियारमें ॥

दिलमें ख़याले-आरिज़े-पुरनूरे-यार[3] है ।
हम शमअ़ लेकर आये हैं, अपने मज़ारमें ॥

मर्गेआशिककी जो मानें मिन्नतें ।
वोह मेरे मरनेका मातम क्या करें ?
दे दिया है सव अतिब्बाने जवाव ।
तुम न कह देना कहीं, "हम क्या करें ?"

ख़ुद मुआलिजको[4] ज़रूरत है मुआलिजको मेरे ।
मेरे नुस्ख़ेमें कहीं शरवते-दीदार नहीं ॥

---

[1]चिकित्सक, [2]चकाचौंध, [3]प्रेयसीके प्रकाशमान कपोल; [4]चिकित्सककी ।

सब हमीं एक ही आदतके हुआ करते हैं।
फूल भी नाल-ए-बुलबुलपे हँसा करते हैं॥

बन सँवरकर नाशपे[1] आये तो हैं।
इससे बढकर वोह मेरा गम क्या करें?

मेरे लाशेपे[2] वोह किस वास्ते बैठे हैं मुँह ढाँके।
कोई पूछे तो अब भी क्या मुझे जिन्दा समझते हैं?

लोग कहते हैं उदूसे दोस्ती अच्छी नहीं।
क्या यह आदत आपके नजदीक भी अच्छी नहीं॥

मौत अच्छी है, जो दम निकले तुम्हारे सामने।
आंखसे ओझल हो तुम तो जिन्दगी अच्छी नहीं॥

दोनो हाथोसे कलेजा थामे बैठा है 'हुस्न'।
या खुदा अब कौन पकडे दामने-दिलदारको॥

मै से मैंने कब की तौबा?
तौबा, तौबा! कैसी तौबा?

मै जानता था मेरी ही उलफतकी हद नहीं—
लेकिन तुम्हारे जुल्म भी हदसे गुजर गये॥

उस बदगुमानने यह कहा मेरी लाशपर।
"अल्लाहरे फरेब कोई जाने मर गये॥"

दिलमें तुम, आँखोमें तुम, छुपते हो फिर किस वास्ते?
तुमको शर्म आती नहीं, आशिकसे शर्माते हुए॥

---

[1]लाश पै, [2]अर्थी पै।

बेतरह घातमें है दुज़दे-निगाह[1]।
कुछ इधरका उधर न हो जाये ॥
है कयामतकी धूप महशरमें ।
खुश्क दामाने-तर न हो जाये ॥

—२३ मई १९५३ ई०]

[1]छुपी नज़रोंसे देखना।

रसा

[१८७५—१९२३ ई०]

मुंशी हयातवख्श 'रसा' मुस्तफाबाद ज़िला बुलन्दशहरके रहनेवाले थे। १८७५ या ७४के लगभग पैदा हुए। ४८-४९ वर्षकी आयुमें निधन हो गया। 'खुमखानये जावेद' भाग ३में आपके चन्द अशआर चुनकर दिये जा रहे हैं—

आप-सा कोई नहीं दुनियामें।
आपने यह तो सुना ही होगा॥

जानेकी जो ज़िद है तो मुझे ज़हर दिये जा।
इतना तो कहा मानले, इतना तो किये जा॥

मेरी फ़रियादपै अनजान बनकर मुसकराते हैं।
कयामतमें वोह इस अन्दाज़से झूठा बनाते हैं॥

पीके कर लेता हूँ तौबा जबसे यह दस्तूर है।
दिल भी रोशन है मेरा मुँहपर भी मेरे नूर है॥

सुनाया हालेदिल उनको तो यूँ मुँह फेरकर बोले—
"किसीने मुँह लगाया, छेड़ बैठे दास्ताँ दिलकी॥"

उनकी यह ख़ूबिये अख़लाक कि वादा तो किया।
मेरी यह शूमिये-तकदीर[1] कि ईफ़ा[2] न हुआ॥

---

[1]भाग्यहीनता; [2]पूरा।

सजदोका भी मौका न रहा अहले-वफाको।
फिर-फिरके मिटाते हैं, वोह नक्शे-कफे-पाको॥
यूँ हमने छुपाई है तेरे वस्लकी हसरत।
जिस तरह छुपाता है, खतावार खताको॥

उनतक तो रसाई नहीं कहनेको 'रसा' है।
कम्बख़्तने यह नाम भी बदनाम किया है॥

वफा करते हैं हम, फिर भी हमें तुमसे नदामत है।
इसे कहते हैं, उल्फत, बन्दापरवर यह मुहब्बत है॥

मुझे कुछ और भी कमबख़्तके सिवा कहिये।
कि यह तो लफ़्ज़ अजलसे मेरे ख़िताबमें है॥

बड़ी ही धूमसे दावत हो फिर तो जाहिदकी।
यह मय जो चार घड़ीको हलाल हो जाये॥

—२३ मई १९५३ ई०]

जाहिद

अहसान रामपुरी

[१८४८—१९०८ ई०]

मुंशी अहसानअलीख़ाँ १८४८ ई०मे उत्पन्न हुए। अरबी-फारसीकी अच्छी योग्यता रखते थे। मिर्ज़ा 'दाग'के शिष्य थे। उनके रगको निभानेका भरसक प्रयत्न किया। आपने काफी पुस्तके लिखी, परन्तु आपके निधनके बाद उत्तराधिकारियोने बाज़ारमे बेच दी। अब सिर्फ एक दीवान हस्त-लिखित शेष है। रामपुरमे आपके शिष्य बहुत थे। १९०८ ई०मे समाधि पाई।

जिस नातवाँसे नाज़ तुम्हारे न उठ सके।
किस तरह वोह उठायेगा सदमे मलालके?

झपकेगी बर्क़तूरसे हरगिज़ न मेरी आँख।
जलवे निगाहमें है, किसीके जमालके॥

कुछ अजब हाल है जबसे उसे देखा क्या है?
हम नहीं आपमें 'अहसाँ' यह तमाशा क्या है?

शुक्रेजफाको शिकवा समझकर खफा हुआ।
लो मैंने क्या कहा, बुते बदज़नने क्या सुना॥

परदा ढक दे अजल आकर कहीं बेचारोका।
हाल देखा नहीं जाता तेरे बीमारोका॥

काश इससे तो बेज़बाँ होते।
हर्फ़े-मतलब कभी अदा न हुआ॥

क्या कहे हिज्र बुरा और विसाल अच्छा है।
यार जिस हालमें रक्खे वही हाल अच्छा है॥

दिलेर मारहरवी

सैयद अमीरहसन 'दिलेर' १८७० ई०मे पैदा हुए। पहले मुज़तर खैराबादीके शिष्य हुए, बादमे मिर्ज़ा दागके। १९१० ई०मे रामपुर रियासतमे मुलाज़िम हो गये। आपने ह्ज़लियातका मजमूआ भी छोड़ा है।

रोता हूँ देख-देखके दीवारोदरको मैं।
बैठे-बिठाये आज मुझे हो गया है क्या॥

है सब ख़यालो-ख़्वाबकी बातें यह हमनशीं!
आँखोमें रह गया न कोई दिलमें रह गया॥

दम निकल जाय तो हो हिज्रकी मुश्किल आसाँ।
मौत काम आये अगर आज तो कुछ काम चले॥

अफसोस दिलका हाल कोई पूछता नहीं।
यह कह रहे हैं सब तेरी सूरत बदल गई॥

ज़ुल्मते-शामे-जुदाई कब हटायेसे हटे।
सामने आँखोके इक दीवार होकर रह गई॥

शाग़ल देहलवी

[१८४१—१९४० ई०]

मुहम्मद आगा 'शागल' मिर्जा 'दाग'के भाई थे, और शायरीमें उन्हींसे सशोधन लेते थे। १८४१ ई०मे उत्पन्न हुए और ९९ वर्षकी आयु पाकर १९४०मे जन्नतनशीन हुए। १८५७के विप्लवके वाद आप भी 'दाग़'के साथ रामपुर चले गये थे। १८९१ ई०मे आपका मर्तवा भी अमीर, जलाल, और तस्लीम-जैसे उस्तादोके वरावर समझा जाता था। आप दागके साथ हैदरावाद नही गये और रामपुरमे ही सन्तोषपूर्वक जीवन-यापन करते रहे। एक दीवान हस्तलिखित छोडा था, मगर न जाने उसका क्या हुआ ?

नीची नज़रोसे न हरइकको खुदारा देखिये।
खाकमें मिल जायगा सारा जमाना, देखिये॥

गो तडपता है वतन जानेको जी 'शाग़ल' मगर।
देखी है जिसकी वहार, उसकी ख़िज़ाँ क्या देखिये॥

आखिर कोई हद भी तेरी ऐ उम्रे-रवाँ है ?
हर दमका सफर अव तो मुसाफिरपै गराँ है॥

इक दिल मिला हमें, जो कभी शादमाँ नहीं।
इक दिल उन्हे मिला कि ग़मे दो जहाँ नहीं॥

कयामतमें मेरा वोह मुंह तकें और ख़ुशनिगाहोंसे।
ख़ुदाके वास्ते मैं वाज़ आया, दाद ख़्वाहोंसे॥

शबीर रामपुरी

[१८८२—१९३१ ई०]

मुहम्मद शबीरअलीखाँ 'शबीर' रामपुरके नवाब कल्व अलीखाँके साहबजादे थे और १८८२मे पैदा हुए थे। आप मिर्ज़ा दागके शिष्य थे। १९३१में मृत्यु पाई। दो दीवान हस्तलिखित छोड़े थे, मगर नष्ट हो गये।

मुझसे हाले-दिले-बीमार सुनाया न गया।
जब वोह आये मेरे घर होशमें आया न गया॥

उसका शिकवेपर यह कहना, दिलमें कट जाना मेरा।
"शिकवा किस मुंहसे किया, चाहा था किस दिलसे मुझे ?"

मेरी बलासे गिरे बर्क या चले आंधी।
ग़म आशियाँका हो क्या, मैं जब आशियाँमें नहीं॥

कफ़स
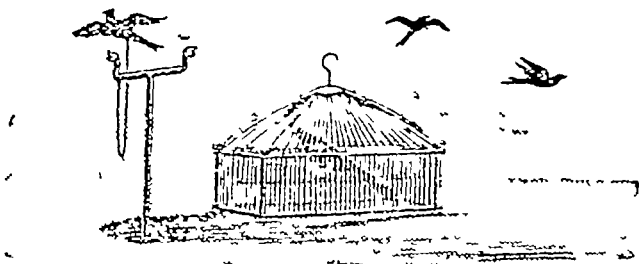
अज़मत रामपुरी

[१८५५—१९०६ ई०]

मुहम्मद अजमतअलीखा 'अजमत' १८५५ ई०मे रामपुरमे पैदा हुए। मिर्जा 'दाग'के शिष्य थे। ६ नवम्बर १९०६ ई०मे मृत्यु पाई। हस्तलिखित दीवान छोडा था, मगर उसका पता नही।

रातें गुजर ही जायेंगी, दिन कट ही जायेंगे।
ऐ रोजे-हिज्र ! सब्र मुहब्बतकी जानपर ॥

वह भी निकलके सीनेसे लब तक न आ सकी।
जिस आहे-दिलगुदाजका था आसरा मुझे ॥

'अजमत' यह बेखुदी नहीं बेवजह, बेसबब।
फिर याद कूए-यारकी आई हवा मुझे ॥

अब रश्केगैर है, न तेरी इल्तजा मुझे।
किस्मतसे मिल गया दिले-बेमुद्दआ मुझे ॥

गौहर

जुल्फकार अलीखाँ, मौलाना मुहम्मद अलीके बडे भाई हैं। आजकल रावलपिण्डीमे मुकीम हैं। 'दाग'के शिष्य हैं।

मुझे ऐ जब्तेराम सर फोडने दे, शोर करने दे।
मुझे रो-रोके मरना है मुझे रो-रोके मरने दे॥

दिले बीमार तेरे हलकये गेसूसे क्या निकले।
यह है किस्मतका फन्दा जो न जीने दे न मरने दे॥

कभी करना न तू ऐ आबे खजर तिश्ना लब हूँ मैं।
मेरे सरसे अगर पानी गुजरता है गुजरने दे॥

फ़ीरोज़ रामपुरी

फीरोजशाहखाँ १८६० ई०मे रामपुरमे उत्पन्न हुए। दागके शिष्य थे।

तेरी आंखोमें है एजाजका अन्दाज नया।
मुझको जीने न दिया, ग़ैरको मरने न दिया॥

दर्दे-दिल सुनके उसे रहम कुछ आ ही जाता।
दास्तां ग़मकी मगर मुझसे सुनाई न गई॥

फिर हो रही हैं वहशते-दिलमें तरक़्क़ियां।
फिर आ रहा है बागमें मौसम बहारका॥

क्या पूछते हो मुझसे मेरे दिलकी आरज़ू।
ख़ुद देख लो, फकीरकी सूरत सवाल है॥

फक़ीर

महमूद रामपुरी

[१८६५—१९३४ ई०]

महमूद अलीख़ाँ 'महमूद' १८६५ ई०मे रामपुरमे उत्पन्न हुए और १९३४ ई०मे मृत्यु पाई। 'दाग'के शिष्य थे। आपने भी सैकडो शिष्य छोडे हैं। आपका हस्त लिखित दीवान आपके भतीजेके पास मौजूद है।

आँसू भरे है आँखमें उस मस्ते-हुस्नकी।
लबरेज किसकी उम्रका पैमाना हो गया ?

मै कुछ इस तरह तेरे दरसे पलटकर आया।
कि मुझे देखके गैरोका भी जी भर आया॥

उल्फतमें जो हो जाता है, वोह हाल है मेरा।
यह देखनेवाले मुझे क्या देख रहे है॥

तुम शक्लसे हो हमारी बेजार।
अल्लाह अब ऐसे हो गये हम॥

जब कहा उसने "आज क्यो चुप हो" ?
फिर शिकायतका हौसला न हुआ॥

जाहिद ! यह छेड खूब नहीं है, खुदासे डर।
तौबाके बाद पूछना मैख़्वारका मिजाज॥

नज़फ़ रामपुरी

[१८४७—१८८७ ई०]

हाफिज मुहम्मद अली 'नजफ' १८८७ ई०मे पैदा हुए। और १८८७ ई०मे मृत्यु पाई। हस्तलिखित दीवान छोडा था, सो नष्ट हो गया।

कल थी सीनेमें जुस्तजू दिलकी।
आज पहलूमें है जिगरकी तलाश ॥

आखिर ऐयामे-जुदाईकी भी हद है कि नही।
कबतक अल्लाह रहेगी यह मुसीबत बाकी ?

तुझे खुलती जब हकीकत मेरे दर्दे-गमकी नासह !
तेरे पहलूमें जो मेरा दिले-बेकरार होता[1] ॥

---

[1] 'निगार' जून १९५३मे प्रकाशित हज़रत कल्बअलीखाँ 'फाइक' द्वारा सकलित 'यादेरफ्तगाँ'से 'अहसान' रामपुरीसे 'नजफ' रामपुरी (न० १४से २२) तकका सक्षिप्त परिचय-कलाम साभार उद्धृत।

अख़्तर नगीनवी

सैयद मुहम्मद 'अख़्तर' नगीना ज़िला बिजनौरके थे। आपके तीन दीवान प्रकाशित हो चुके है। आप दागके शिष्य थे।

क्या नहीं करते, क्या नहीं होता ?
उनसे वादा वफा नहीं होता ॥

यही दीवानगी है, और क्या दीवानगी होगी ?
यूं ही बैठे-बिठाये क़स्दे-ज़िन्दाँ कर रहा हूँ मैं ॥

अश्क देहलवी

सैयद कुतबुद्दीन अहमद 'अश्क' मिर्ज़ा दागके शिष्य थे। दीवान नही छपा है।

ख़ौफे-रंजिश न कुछ अन्देशये-बेदाद आया।
लिख दिया ख़तमें उन्हे वक़्तपै जो याद आया ॥

जो ख़ूं-आलूदपैकाँ हो, निकालो मेरे सीनेसे।
जो ख़ूं-आलूद हसरत हो, वोह मेरे दिलमें रहने दो ॥

उन्हे और है कौन बहकानेवाले।
यही आनेवाले, यही जानेवाले[1] ॥

---

[1]इस शेरको बाज़ लोग 'दाग'का शेर समझते है। वास्तवमे यह 'अश्क'का शेर है।

नवाब आसफ़

[१८६४--१६१० ई०]

निज़ामउलमुल्क मीर महबूब अलीखाँ 'आसफ' १८६४ ई०मे पैदा हुए, १६१०मे मृत्यु पाई। आप हैदराबादके नवाब थे। आप ही के शासन कालमे मिर्ज़ा 'दाग' हैदराबादमे आपके उस्तादके पदपर नियत हुए थे।

अभी आँसू पलकतक आया था।
अभी देखा तो एक दरिया था॥

अंजाम देखना दिले-ख़ानाख़राबका।
इसपर पड़ेगा सब्र मेरे इज़्तराबका॥

झगड़े तो हज़ारो हैं मगर बात है इतनी।
हम तुमसे वफा करके पशेमान बहुत हैं॥

तहरीरे-मुहब्बतने किया उनको ख़फा और।
तद्बीर तो की और थी, किस्मतसे हुआ और॥

बेबाक शाहजहाँपुरी

सैयद अहमद हुसेन बेबाक शाहजहाँपुरके थे। दागके शिष्य थे।

यहाँ यह हाल कि हम दिलको खाक कर बैठे।
वहाँ यह जिक्र कि अहले-वफामे कुछ न हुआ॥

यह भी खुदाकी शान कि इक हर्फे-आरज़ू।
उस बेवफाके वास्ते अफसाना हो गया॥

क़ाबिलेदाद है यह शाने-करम भी उनकी।
कुश्तयेनाजके जीनेकी दुआ करते हैं॥

करते हैं आप किससे तगाफुल कि हम नहीं।
यह आखिरी निगाह है, आंखोमें दम नहीं॥

मैं जिसको कह सकूँ, वोह नहीं मुद्दआ मेरा।
तुम जिसको सुन सको, वोह मेरा हालेगम नहीं॥

महर ग्वालियरी

मुशी नारायणप्रसाद वर्मा 'महर' ग्वालियर-रियासत निवासी थे और 'दाग'के शिष्य थे। उनके हिन्दू शिष्योमें आपसे बेहतर कहनेवाला और कोई नही था। आपका दीवान 'शुआएमहर' छप चुका है।

अभी कुछ और परवाने गले मिलनेको बाकी हैं।
जरा थमना अभी रुखसत न ऐ शमए-सहर होना॥

कुछ कह सके न दावरे-महशरके सामने।
आँखें भर आईं उसको गुनहगार देखकर॥

जानकर तुमको जफाकार, वफा की मैंने।
जो खता की नहीं जाती, वोह खता की मैंने॥

तैश मारहरवी

मुहम्मदयूसुफहसन 'तैश' मारहरा ज़िला एटाके रहनेवाले थे और रामपुरके दरबारी गायक थे। दागके शिष्य थे।

निगाहें मिलते ही यूं काम कर जाना मुहब्बतका।
न उनको कुछ ख़बर होना, न मुझको कुछ ख़बर होना॥

कितना तवील उम्रे-दो रोज़ाका है बयाँ।
दो दिनकी ज़िन्दगीका इक अफ़साना हो गया॥

वहां तो सहल है, हरबार जल्वागर होना।
यहां तो होशमें आना, मुहाल होता है॥

मतीन मछलीशहरी

मौलवी मतीनउद्दीन अहमद 'मतीन' मछलीशहर ज़िला जौनपुरके रहनेवाले हैं, और दागके शिष्य हैं।

निगाहे-महर अगर मुझपर तेरी ऐ माहरू! होती।
यह क्यों जौरे-फ़लक होता, यह क्यों दुनिया उदू होती?

अल्लाहरे बदगुमानी उन्हें ख़तमें लिख दिया।
"बातें न कीजियेगा मेरे नामावरसे आप॥"[1]

१२ जून १९५३

---

[1]निगार जनवरी १९५२ में प्रकाशित प्रोफेसर नफ़ीससन्देलवी द्वारा संकलित लेखसे अख़्तर नगीनवीसे मतीन मछलीशहरीका संक्षिप्त परिचय और कलाम साभार दिया जा रहा है।

आसी उलदनी

[१८९३——— ई०]

शेख अब्दुलबारी 'आसी' मेरठ ज़िलेके उलदन गाँवमे १८९३ ई०मे उत्पन्न हुए। आपके पिता मिर्ज़ा गालिबके शिष्य थे और 'हस्साम' उपनाममे शायरी करते थे। आपके पितामह 'आजिज़' और परपितामह 'आशिक' तख़ल्लुस फरमाते थे। 'आशिक' साहब ख्याति प्राप्त 'मीर'के समकालीन हुए है, और कितने ही मुशायरोमें 'मीर'के साथ-साथ गज़ल पढनेका इत्त-फाक हुआ है।

'आसी'का अरबी-फारसीका शिक्षारभ १८९८में हुआ। हिकमतका भी अध्ययन किया। १९११-१२ ई०मे फारसी अध्यापक रहे। १९१३-१४ ई०मे दिल्लीमे 'हमदर्द' अखबारमें कार्य किया। इसके बाद आप लखनऊ चले गये और वही रहने लगे।

अध्ययनकालमे ही शायरीका शौक हो गया। एक रोज़ मार्ग चलते हुए खुद-ब-खुद आपसे यह शेर मौज़ूं हो गया—

यह क्या तुमने जख़्मी किया दिल हमारा।
बड़ा तीर मारा, बड़ा तीर मारा॥

सम्भवत यह घटना १९०४ ई०की है। इसके बाद रोज़ाना शेर कहने लगे। एक मित्रके सुझावपर 'आसी' उपनाम रख लिया। धीरे-धीरे आपके पिताजीके कानमें भी आपके शौककी भनक पडी। उन्होने मिसरा दिया—

"उठाओ गठरी, सँभालो बिस्तर कि रात अब कुछ नहीं रही है"

उक्त मिसरेपर गज़ल सुनकर आपके पिता प्रसन्न तो अवश्य हुए, किन्तु साथ ही यह भी फरमाया कि अभी वहुत कमी है। कभी-कभी वे स्वय इस्लाह भी देते रहते थे। १६१० ई० मे आप मिर्ज़ा दागके शिष्य 'नातिक' गुलावठीके शिष्य हुए और उन्होने आपका खूब उत्साह वढाया।

'आसी'ने अनेक रगोमे डुवकियाँ लगाई है। प्रारम्भमे आप 'नासिख'-के रगमे कहते थे। जव उस शव्दाडम्वरी शायरीके दोपोसे आप अवगत हुए तो 'हाली'का रग अपनाया। इसी ज़मानेमे यह भी शौक हुआ कि हर शेरमें कोई-न-कोई मुहावरा नज्म होना चाहिए। कभी दुअर्थक शेर कहनेका शौक चर्राया तो कभी 'दाग'के रगीन और शोख़ कलामका अनुसरण किया।

१९१४ ई०मे लखनऊ पहुँचनेपर चित्त स्थिर हुआ। वहाँ 'अजुमने-मियार' नामक साहित्यिक सस्थाका उन दिनो काफी प्रभाव था और इसातज़ए-लखनऊ 'गालिव'के रगमें तवाआज़माइयाँ कर रहे थे। आप भी उसी रगमे लिखने लगे। इसके वाद तसव्वुफ एव दार्शनिक रगकी तरफ झुके, मगर शीघ्र सँभल गये और अपना एक मत स्थिर कर लिया, और वह यह कि शेर किसीके भी रगका हो, मगर अपना रग भी उसमें झलकना चाहिए और उसमें हृदय-स्पर्शकी शक्ति होनी चाहिए।

यूँ तो 'आसी' गज़ल, नज़्म, कसीदे, मसनवी, रुवाइयात सभी कुछ कहते है। लेकिन गज़लें और रुवाइयात कहनेकी ओर विशेष रुचि है। आप ३०-३२ पुस्तकोके रचयिता है। शिष्योकी सख्या १५०के लगभग है। उनमे—शौकत थानवी, अमीर सलौनवी, उमर अन्सारी, शहीद वदायूनी, आज़ाद लखनवी विशेष तौरपर उल्लेखनीय है।

आपका एक दीवान गज़लोका, एक नज्मोका और एक रुवाइयातका मुद्रणकी प्रतीक्षामें है। आपके स्वयके पसन्दीदा २०० अशआर जनवरी

१९४१के 'निगार'मे प्रकाशित हुए हैं। जिनमेंसे ७३ साभार यहाँ दिये जा रहे हैं—

खुल गया दुनियापै राज़े-हुस्नो-इश्क़[1]।
वोह हँसे, मुझको पसीना आ गया॥

जब चमनमें कुछ इनक़लाब[2] हुआ।
इक-न-इक आशियाँ ख़राब हुआ॥

जो छुटे तो फिर मिलेंगे, न छुटे तो यह समझना।
यह सलाम आख़िरी है, तुझे ऐ बहार! अपना॥

दिल रहीनेआरज़ू[3] है, आरज़ू मरहूनेयास[4]।
घर हमें बरबाद करनेको बनाना चाहिए॥

मुझे तो याद नही है कोई ख़ुशी ऐसी।
शरीक जिसमें किसी तरहका मलाल न था॥

उस साल फ़स्लेगुलमें उजड़ा था बनते-बनते।
रहता तो आशियाँको अब एक साल होता॥

बुझा दे ऐ हवाएतुन्द[5]! मदफ़नके[6] चराग़ोको।
सियहबख़्तीमें[7] यह इक बदनुमा धब्बा लगाते हैं॥
मुरत्तिब[8] कर गया इक इश्क़का क़ानून दुनियामें।
वोह दीवाने हैं जो मजनूँको दीवाना बताते हैं॥
उसी महफ़िलसे मै रोता हुआ आया हूँ ऐ 'आसी'!
इशारोमें जहाँ लाखो मुक़द्दर बदले जाते हैं॥

---

[1]सौन्दर्य और प्रेमका भेद; [2]परिवर्तन, [3]अभिलाषाओके पास गिरवी, [4]और अभिलाषाएँ निराशाओके पास गिरवी है; [5]तेज़ हवा, [6]समाधिके, [7]अभाग्यरूपी अँधेरीमे, [8]निर्माण।

फूल हँस-हँसकर दिखाते हैं जहाँको दाग़े-दिल ।
मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं, इज़हारे-ग़मो-आलामकी[1] ॥

मेरा दौरे-गुज़िश्तह[2] भी यूँ ही गुज़रा है ऐ हमदम[3] !
बना रक्खी थी इक मूरत ख़ुशीकी, शादमाँ[4] क्या था ?

हमीं नावाक़िफ़े-रस्मे-चमन थे ऐ क़फ़सवालो !
फ़लकसे अहद ले लेते तो फ़िक्रे-आशियाँ करते ॥

ख़ारोख़स[5] जमअ करे, नाम नशेमन[6] रख दे ।
जिसको मंज़ूर हो, गुलशनको बयाबाँ करना ॥

नक़्क़ाशिए-फ़रेबे-मआसी[7] न पूछिये ।
जन्नत बनाके रख दी गुनहगारके[8] लिए ॥

इब्तदा[9] वोह थी कि दुनिया थी मलामतगर[10] मेरी ।
इन्तहा[11] यह है कि कोई पूछ नहीं रहता मुझे ॥*

अहदे-वफ़ाएदोस्त[12] बजा, लेकिन ऐ नदीम[13] !
क्योंकर कहूँ कि भूल गया आसमाँ मुझे ॥

शराबेज़ीस्त[14] अभी सैर होके पी भी नहीं ।
कि सुन रहा हूँ सदाएँ शिकस्तेसागरकी[15] ॥

हज़ार तरह तख़य्युलने[16] करवटें बदलीं ।
कफ़स-क़फ़सही रहा, फिर भी आशियाँ न हुआ ॥

---

[1]दुःख शोककी, [2]भूतकाल, [3]मित्र, [4]प्रसन्न, [5]काँटे-तिनके; [6]घोंसला, [7]पापोंकी ऐय्याराना कला, [8]पापीके, अपराधीके।

*आग थे इब्तदाए-इश्कमें हम ।
हो गये ख़ाक इन्तहा है यह ॥—मीर

[9]शुरुआत, [10]छिद्रान्वेषी, [11]आख़िरी, [12]प्रेयसीका नेकीका संकल्प, [13]साथी; [14]ज़िन्दगीकी शराब, [15]मद्य-पात्र टूटनेकी आवाज़, [16]कल्पनाने।

कहते हैं कि उम्मीदपै जीता है जमाना।
वोह क्या करे, जिसको कोई उम्मीद नहीं है ॥

नसीहतको आते हैं, गमख़्वार 'आसी'!
गरेबांको फिर आज सीना पडेगा ॥

अदब आमोज[1] है मयख़ानेका ज़र्रह-ज़र्रह।
सैकड़ों तरहसे आ जाता है सजदा[2] करना ॥
इश्क़ पाबन्देवफा है, न कि पाबन्देरसूम[3]।
सर झुकानेको नहीं कहते हैं सजदा करना ॥

जो फूल आता है गुलशनमें गरेवां चाक आता है।
बहारे-रंगोबूमें ख़ून दीवानोका शामिल है ॥*

इस फकीरीमें यह हालत मेरे इनकारकी है।
बादशाही कहीं मिल जाये तो आफत हो जाय ॥

आलमेज़िन्दगीकी[4] हकीकत न पूछिये।
लाखों तो ऐसे हैं जो मुझे याद भी नहीं ॥

ऐ दुश्मने मुरव्वत[5]! कुछ हक भी है हमारा।
बरसो तेरे लिए हम अहबाबसे[6] लड़े हैं ॥

---

*चमन सैयादने सींचा यहांतक ख़ूने-बुलबुलसे।
कि आख़िर रंग बनकर फूट निकला आरिज़े-गुलसे ॥ अज्ञात

[1]विनय सिखाने वाला, [2]ईश्वरके ध्यानमें झुकना; [3]रस्म रिवाजोका पावन्द, [4]जीवनके कष्टोकी; [5]प्रेमके वैरी; [6]इष्ट-मित्रोसे।

मुझे अहसास[1] कम था, वरना दौरे-जिन्दगानीमें ।
मेरी हर साँसके हमराह मुझमें इन्कलाव[2] आया ।।

रह गई दिलमें तो क्या हाल करेगी दिलका ?
वोह शिकायत कभी लवतक जो न लाई जाये ।।

हजारो नग्मये-दिलकश[3] मुझे आते है ऐ वुलवुल !
मगर दुनियाकी हालत देखकर चुप हो गया हूँ मैं ।।

खुला यह राज[4] वज्मेनाजका[5] परदा उठानेपर ।
कि जिसपर तेरा धोका था, वह इक तसवीर थी मेरी ।।

हुआ अहसास पैदा मेरे दिलमें तर्केदुनियाका[6] ।
मगर कव ? जव कि दुनियाको जरूरत ही न थी मेरी ।।

अपनी हालतका खुद अहसास नहीं है मुझको ।
मैंने औरोसे सुना है कि परेशान हूँ मैं ।।
ऐ गमेदोस्त ! वता दे मुझे मरजी अपनी ।
जितनी ख्वाहिश हो तेरी, उतना परेशान हूँ मैं ।।

है कुछ खरावियाँ मेरी तामीरमे[7] जरूर ।
सौ मर्तवा वनाके मिटाया गया हूँ मैं ।।

नई राहे वताता है, नये रस्ते दिखाता है ।
नहीं मालूम जालिम इश्क, रहजन[8] है कि रहवर[9] है ।।

---

[1]चेतना; [2]परिवर्तन, क्राति, [3]चित्ताकर्षक गीत, [4]भेद; [5]प्रेयसीकी महफ्लिका, [6]ससार-त्यागका, [7]निर्माणमे, [8]लुटेरा; [9]पथ-प्रदर्शक ।

रंगेनिशात[1] देख, मगर मुतमइन[2] न हो।
शायद कि यह भी हो कोई सूरत मलालकी ॥

गुलशन बहारपर है, हँसो ऐ गुलो ! हँसो।
जबतक खबर न हो, तुम्हें अपने मआलकी[3]

अहसास अब नही है, मगर इतना याद है।
शक्लें जुदा-जुदा थी, उरूजो[4]-जवालकी[5] ॥

यह सब फरेब है, नजरे-इम्तयाजका[6]।
दुनियामें वरना कोई भी अच्छा-बुरा नहीं ॥
अब कौन है रमूजे-मुहब्बतका[7] राजदाँ[8]।
इक हम रहे है, हमको कोई पूछता नही ॥

रफ़्ता-रफ़्ता यह जमानेका सितम होता है।
एक दिन रोज मेरी उम्रसे कम होता है ॥
बाग रोता है असीरानेकफसको[9] शायद।
दामने-सब्ज-ओ-गुल[10] सुबहको नम[11] होता है ॥

क़ैदसे पहले भी आजादी मेरी खतरेमें थी।
आशयाना ही मेरा सूरतनुमाएदाम[12] था ॥

हजारो बार कोशिश कर चुका हूँ।
नही छुपती मुहब्बतकी निगाहे ॥

---

[1]ऐश्वर्यकी रंगीनियाँ, [2]आश्वास्त, [3]भविष्यकी [4]-[5]उत्थान-पतनकी, [6]दृष्टिभेदका, [7]प्रेमके भेदोका, [8]भेदी, [9]पिंजरेके बन्दियोको, [10]घास और फूलोका समूह, [11]भीगा हुआ, [12]जालकी सूरत।

मैं चुप बैठा हुआ हूँ और यह मालूम होता है।
कि जैसे इक जमाना कह रहा है दास्तां[1] मेरी ॥

दुनियामें कोई गमके अलावा खुशी नहीं।
वोह भी हमें नसीव कभी है, कभी नहीं ॥*

धोका न खाओ चारागरो[2]! वाकआतसे[3]।
पहलूमें दिल नहीं है, तो क्या दर्द भी नहीं?

तू क्यो मुझे मायूस किये देता है नासेह!
क्या तूने मेरा खत्तेजवीं[4] देख लिया है?

अच्छे हुए जमानेके बीमार सैकडों।
दिल वोह मरीज है जो अभी जेरेगौर है ॥
छोडा ही क्या है लूटनेवालोने मेरे पास।
इक जिन्दगी सो वह भी कोई दिनकी और है ॥

अव मैं क्या तुमसे अपना हाल कहूँ।
व-खुदा याद भी नहीं मुझको ॥

जिन्दगानीका आसरा है यही।
दर्द मिट जायगा तो क्या होगा ॥

वेसाख्ता उठी जो वोह तोवाशिकन[5] निगाह।
खुद मुझको शक हुआ कि मुसलमां[6] नहीं रहा ॥

---

*ऐ फलक! दे हमको पूरा गम तो खानेके लिए।
वोह भी हिस्सा कर दिया सारे जमानेके लिए ॥—दाग

[1]कहानी, [2]चिकित्सको, [3]वास्तविकतासे, [4]भाग्य-लेख; [5]प्रतिज्ञा तोडनेवाली, [6]सयमी।

चमक जाओ ऐ शामेग़मके[1] सितारो !
मुसीबतके मारोंपै अहसान होगा ॥

ख़ुदा जाने अब दिल कहाँ जाके ठहरे ।
बडे इनकलाबातसे[2] हो रहे हैं ॥

मताएजिन्दगीके[3] देनेवाले यह तो समझा दे ।
कि इतना बोझ सरपर रखके ले जाना कहाँ होगा ?

कोई नासेह है, कोई दोस्त है, कोई ग़मख्वार ।
सबने मिलकर मुझे दीवाना बना रक्खा है ॥

बहुत इलाज किया दर्देइश्कका लेकिन ।
वही मआल[4] हुआ जो मआल होता है ॥

तड़पे भी, मुज़तरब[5] भी हुए, वक़्तेकत्ल हम ।
सब कुछ सही, तुम्हारा तो दामन बचा दिया ॥

मज़िलके रहनेवालो ! क्या देखते हो हमको ?
आसूद-ए-मकाँ[6] तुम वामाँद-ए-सफर[7] हम ॥

यह राज है ऐ हरीसेदुनिया[8] ! तुझे कुछ इसकी ख़बर नहीं है ।
उसीका घर है तमाम दुनिया[9], कि जिसका दुनियामें घर नहीं है ॥

जीना पड़ा उमीदेवफापर तमाम उम्र ।
हालाँ कि जान देनेमें कोई ज़ियाँ[10] न था ॥

---

[1]शोक-रात्रिके, [2]क्रान्तियाँ, परिवर्तन, [3]जीवनधनके, [4]परिणाम, [5]घबराये; [6]सुख चैनसे महलोंके निवासी, [7]भटकनेको लाचार; [8]संसार लिप्त; [9]समस्तविश्व, [10]हानि ।

रुसवा हुए, मगर दिलेमुज़तरको[1] क्या करें ?
मरना पड़ा वहीं हमें, मरना जहाँ न था ।।

अगर दिल सलामत रहेगा तो 'आसी' !
बहुत मिल रहेंगे दग़ा देनेवाले ।।

उनको यह गुस्सा कि मैं उनकी गलीमें क्यों गया ?
मुझको यह हैरत कि क्योंकर शक्ल पहचानी मेरी ।।

तजाहुलसे[2] मेरे नामोनिशांके पूछनेवाले ।
वहीं रहता हूँ मैं अबतक, जहाँ ढूँढ़ा नहीं तूने ।।

यकीन रख कि यहाँ हर यकीनमें है फ़रेब ।
बका तो क्या है, फनाका भी एतबार न कर ।।

साथ हर सांसके मेरे दिलसे ।
आ रही है, अभी ख़बर तेरी ।।

इतना मुझे मजबूर न कर नासहे-ग़मख़्वार !
ऐसा न हो दामन भी गरेवानमें सिल जाय ।।

मैं अपने दिलसे कहता हूँ कि अब तो दर्द कुछ कम है ।
मेरा दिल मुझसे कहता है कि अक्सर यूँ भी होता है ।।

सबूत है यह तमन्नाकी सादालोहीका ।
बग़ैर वादेके रहता है इन्तज़ार मुझे ।।*

---

[1]बेचैन दिलको, [2]उपेक्षासे ।

*न कोई वादा न कोई यकीं, न कोई उम्मीद ।
मगर हमें तो तेरा इन्तजार करना था ।।
—फिराक गोरखपुरी

दिलको शिकवा कि मेरे दर्दका दरमाँ[1] न हुआ।
हम पशेमान .के और इसके सिवा क्या करते॥

अबतक तो मुहब्बतमें वह साअ़त नहीं आई।
जिस रोज वोह रोनेपै मेरे हँस न दिया हो॥

यह कैसी बदशगूनी है जो मैं महसूस करता हूँ।
कि हूँ और फिर नहीं मालूम होता उसकी महफिलमें॥

चन्द अशआ़र अपनी पसन्दके

ऐसा भी इत्तफाक़ मुझे बार-हा हुआ।
उनसे मिला हूँ, उनका पता पूछता हुआ॥

कहींसे ढूँड़के ला दे हमें भी ऐ गुले-तर!
वोह ज़िन्दगी, जो गुज़र जाये मुसकरानेमें॥

देखकर अहले जहांकी बेरुख़ी तेरे बग़ैर।
हँस रहा हूँ आज मैं पहली हँसी तेरे बग़ैर॥

जाँ, सुकूने-ज़िन्दगानी मेरी किस्मतमें न ढूंड़।
ठोकरें खाई हैं मैंने उम्रभर तेरे लिए॥

ग़मोंपर ग़म फटे पड़ते हैं ऐयामेजवानीमें।
इजाफे हो रहे हैं वाकियाते ज़िन्दगानीमें॥

मेरा हाल पूछा मेरी बात मानी।
तवज्जह, इनायत, करम, महरबानी॥

---

[1]इलाज।

नजर नीची अरक आया हुआ-सा।
मिला भी वोह तो शरमाया हुआ-सा॥

वहार आती है और मैं डर रहा हूँ।
कि अक्सर मुझको रास आती नही है॥

आजकल १ दिसम्बर १९४६ ई०

रहा वर्कतपांसे सावका तकदीरमें इतना।
कि अव अपना नशेमन हम वनाते है शरारोमें॥

२८ जनवरी १९५२ ई०]

नशेमन

आजाद अंसारीके शिष्य—

अकबर हैदरी

[.... — १९४० ई०]

अकवर हैदरी साहव दिल्ली निवासी थे और अगरेजोको हिन्दी-उर्दू पढानेका कार्य करते थे। मौलाना हालीके शिष्य, आज़ाद अन्सारीके आप शायरीमे शागिर्द थे। आपने शायराना दिलो-दमाग पाया था। गज़लके अतिरिक्त नज्म, रुवाई आदि भी कहते थे। अगरेज़ी, फारसी, पश्तो, हिन्दीका अच्छा ज्ञान था।

दरमियाना कद, रोवीला गोल चेहरा, हँसता हुआ ललाट, मुसकराती हुई ऑखे, मुंहमे तम्वाकूका पाइप, निहायत खुशपोश, खुशवाश, खुशमिज़ाज। वात-व्रातमे लतीफे कहते थे। दु ख-दर्दमें भी हँसते रहते थे। मगर दूसरोके रजोगममें दिलसे हाथ वटाते थे। दोस्तोके दु ख-सुखको अपना दु.ख-सुख समझते थे। स्पष्टवक्ता और स्वच्छ हृदय थे। वज़अ् और उसूलकी पावन्दी अपना ईमान समझते थे। ईर्ष्या योग्य स्वास्थ्य था। १२ मार्च १९४० ई०को आपका निधन हो गया। १५ नवम्वर १९४६के आजकलमें प्रकाशित आपका कुछ कलाम यहाँ दिया जा रहा है—

जहाने-हुस्नमें[1] महवे-तरन्नुम[2] है वफा[3] मेरी ।
मैं नग़मा[4] हूँ मुहब्बतका, मुहब्बत है सदा[5] मेरी ॥

दिलेमुजतरको[6] जिसपर ऐतमादे-कामरानी[7] था ।
मेरे अहसासेख़ुद्दारीमें[8] है वोह इल्तिजा[9] मेरी ॥

मशीयतकी[10] निगाहोंमें जो मेयारे-परस्तिश[11] थी ।
हुई है जज्ब[12] अश्के-ख़ूं-फिशाँमें[13] वोह दुआ मेरी ॥

इक आँसू और वोह भी दिलकी रंगीनीसे बेगाना ।
न देखी जायगी दुनियासे तसवीरेवफा मेरी ॥

नियाजोनाजका[14] अफसाना लिखनेके लिए 'अकबर' !
सुनी है कातिबेक़ुदरतने[15] बरसो इल्तिजा[16] मेरी ॥

तसन्नोह[17] है, तकल्लुफ है, तअ़ल्ली[18] है, तमाशा है ।
समझ ही में नहीं आता कि मेरी जिन्दगी क्या है ॥

ख़ुदावन्दा मेरी गुमराहियोंसे दरगुजर फरमा ।
मैं उस माहौलमें[19] रहता हूँ, जिसका नाम दुनिया है ॥

---

[1]सौन्दर्य-ससारमे, [2]सगीतमे लीन, [3]नेकी, [4]सगीत; [5]आवाज़, [6]बेचैन दिलको, [7]सफलताका विश्वास,; [8]स्वाभिमान चेतनामे, [9]प्रार्थना, [10]खुदाकी मर्जीकी, [11]उपासनाका आदर्श, [12]लीन, [13]खूनके आँसुओमे, [14]नम्रता और अभिमानका, [15]भाग्य विधाताने, [16]प्रार्थना, [17]बनावट, [18]शेखी; [19]वातावरणमे ।

खुदपरस्ती[1] खुदा न बन जाये।
अहतयातन गुनाह करता हूँ॥

हवादसमें[2] फना[3] होकर बकाके[4] राज़[5] समझा हूँ।
मेरी जमईयतेख़ातिर[6] हुई मेरी परेशानी॥

अब देखिये कि कौन ठहरता है देरतक।
बज़्मे-शबाब भी है, जहाने-हुबाब[7] भी॥

किस चमनकी ख़ाकमें फूलोका मुस्तकबिल[8] नहीं?
दूरबीं नज़रोंमें[9] रंगो-बू है, आबो-गिल नहीं॥

मिरी अंजामबींनज़रें[10] मुझे मगमूम[11] करती है।
लरज़ जाता है मेरा दिल, उरूजे-माहेताबांसे[12]॥

तज़करा बर्क़ो-शररका[13] जो सुना मैंने कभी।
आह भरकर दिले-गमगींने कहा—'हाय शबाब'॥

फरिश्ते आदमी बनकर न रह सके 'अकबर'।
वोह ऐसी कौन-सी मुश्किल थी आदमीयतमें?

फितरतने लेके अश्के-नदामतकी सुर्ख़ियाँ[14]।
उनवान[15] लिख दिया मेरी फरदेगुनाहपर[16]॥

---

[1]अहमन्यता [2]मुसीबतोमे, [3]मरकर, [4]ज़िन्दगीके, [5]भेद, [6]तसल्ली; [7]पानीके बुलबुलोका ससार, [8]भविष्य, [9]दिव्य दृष्टिमे; [10]अंजाम जाननेवाली आँखें, [11]गमगीन, [12]चन्द्रमाके विकाससे, [13]बिजली, आगका जिक्र, [14]प्रायश्चित्तके आँसुओकी लाली, [15]शीर्षक, [16]पाप तालिकापर।

बेतकल्लुफ तुझे खुदा कहना।
मेरी सादा-दिलीका क्या कहना॥
जानता हूँ जरूरतें अपनी।
मसलहत है तुझे खुदा कहना॥

शमअ़में इक सोज़ था, इक साज़ परवानेमें था।
हुस्न गोया इश्कके खामोश अफसानेमें था॥

ऐ दर्दे-मुहब्बत मुझे गुमराह न करना।
दिल अश्कमें बह जाय, मगर आह न करना॥

दूर-अन्देशियाँ मुहब्बतकी।
बे-वफाओंको बा-वफा कहना॥

जो यही रहा तवस्सुम[1], जो यही रहा तरन्नुम[2]।
मैं सुना चुका फसाना, शबेग़मकी काविशोंका[3]॥

बुतकदा था इधर, उधर काबा।
थी जवानीकी रहगुज़र[4] दिलचस्प॥

एक हम हैं दोस्तीपर भी हमें दुश्मन खिताब।
एक तुम हो, दुश्मनीपर भी तुम्हारा नाम दोस्त॥

देखा हविस-ओ-हुस्नको[5] बाहम[6] जो बगलगीर।
नाकामे-मुहब्बतने कहा—"हाय मुहब्बत"॥

---

[1]मुसकान; [2]सगीत; [3]विरहरात्रिकी मुसीबतोंका; [4]मार्ग, राह; [5]विषयलोलुपता और रूपको, [6]परस्पर।

यूँ न फितने उठा खिरामेनाज़।
मेरा ईमान है, कयामत है॥

पुरसिशेगम अगर तकल्लुफ थी।
इस तकल्लुफको देर-पा करते॥

इक तवस्सुम है, उनके होंटोपर।
या मेरी गुमशुदा जवानी है॥

तड़पकर करवटें पैहम दिले-नाकाम लेता है।
लरज़ जाता हूँ जब कोई, वफाका नाम लेता है॥

हसरत[1] भी है, उम्मीद भी है, आरज़ू भी है।
सब कुछ मेरे नसीबमें है, एक तू नहीं॥

तूफाने-बर्क़ोबादको[2] ज़र्रानवाज़ियो!
मैं खानुमाँ-ख़राब[3] किसे आशियाँ कहूँ?

अभी तो नाखुदाके बाद मेरे इक खुदा भी है।
हवादिस[4] क्यों तड़पकर रह गये, आगोशे-तूफाँसे[5]॥

तकमीले-दर्द[6] होती है, जब हर दवाके बाद।
हसरतसे देखता है, मेरा चारागर[7] मुझे॥

बेकसीका लुत्फ भी जाता रहा।
शामेगुरबत[8] भी सहरने[9] छीन ली॥

---

[1]अभिलाषा; [2]बिजली-आँधीके तूफानकी; [3]जिसका घर बरबाद कर दिया हो; [4]मुसीबतें; [5]तूफानोंकी गोदमें; [6]दर्दमें अधिकता; [7]चिकित्सक; [8]यात्राकी शाम; [9]सुबहने।

भला मैं भी तो देखूं हौसले दामाने-इसियांके[1]।
ज़रा सजदेसे सर उठने तो दे ज़ौके-पशेमानी[2]॥

[३ जून १९५३ ई०]

आबिद

[1]पापसे भरे दामनके, [2]प्रायश्चितका शौक़।
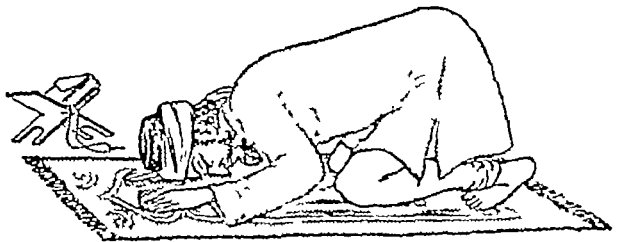
[१९४४ से १९५४ तककी आधुनिक शायरी]

१२

इन दस वर्षोंमे उर्दू-शायरीमे अभूतपूर्व परिवर्त्तन एव परिवर्द्धन हुआ है। उसका लबो-लहजा बदल गया है, सोचने और विचारनेके दृष्टिकोणमे अन्तर आ गया है। इन दस वर्षोंमे हुई इन तीन मुख्य घटनाओ—१ भारत-विभाजन, २ स्वराज्य-प्राप्ति, ३ राष्ट्र-पिताकी शहादत—पर बहुत अधिक कहा गया है, और कहा जा रहा है।

यदि उक्त तीनो विषयोकी नज्मो और गजलोका सकलन किया जाय तो १०-१२ पोथे तैयार हो सकते है। यह सब विषय नई शायरी और नज्मसे अधिक सम्बन्धित है। अत हम इनपर अपनी 'शायरीके नये दौर' 'नये मोड' नामक पुस्तकोमे विशेष रूपसे प्रकाश डाल रहे है। यहाँ प्रसग-वश सक्षेपमे उल्लेख किया जा रहा है, इस दौरके नवयुवक शायर नज्म और गज़ल अक्सर दोनो कहते है। अत उद्धरणोमे गज़लो-नज्मो दोनो-के ही अशआर दिये जा रहे है।

भारत-विभाजन

भारत-विभाजन मुसलिम लीगकी ज़िदके कारण हुआ। उसकी इस साम्प्रदायिक दूषित मनोवृत्तिका कितना घातक परिणाम हुआ ? कितना बडा नरहत्याकाण्ड हुआ ? कितनी युवतियोकी अस्मतदरी हुई ? कितने बालक बिलख-बिलखकर मरे ? कितने धार्मिक स्थान और लोकोपयोगी सस्थाये नष्ट कर दी गई और कितनी अधिक सख्यामें धन बरबाद हुआ, इन सबका लेखा-जोखा भले ही हमारे पास सुरक्षित नही है। फिर भी शायरोने जो कुछ कहा है, यदि वही सब एकत्र कर लिया जाय तो एक प्रामाणिक इतिहास बन जायगा। ससारमें इस तरहका काण्ड इससे पूर्व नही हुआ। भारत-विभाजनसे पूर्व मुसलिमलीगकी विषैली मनोवृत्तिको आनन्द-नारायण मुल्लाने यूं नज्म किया था—

जहाँसे अपनी हक़ीक़त छुपाये बैठे हैं
यह लीगका जो घरोन्दा बनाये बैठे हैं

भड़क रही है तआस्सुबकी[1] दिलमें चिनगारी
चराग़े-अम्लो-हक़ीकत बुझाये बैठे हैं
हरेकके दीन पै इलज़ामे-काफिरी रखकर
हरेक कुफ़्र पै ईमान लाये बैठे हैं
सजाये बैठे हैं दूकाँ वतन-फ़रोशीकी
हरेक चीज़की क़ीमत लगाये बैठे हैं
कफ़समें[2] उम्रमें कटे जीमें हैं गुलामोंके
चमनकी राहमें काँटे बिछाये बैठे हैं
नहीं शरीक मुसीबतमें हिन्दकी लेकिन—
इराक़ो-शामसे रिश्ते मिलाये बैठे हैं
गिराई एक पसीनेकी बून्द भी न कभी
मता-ए-क़ौममें[3] हिस्सा बटाये बैठे हैं

. . . .

ख़ुदाकी शान इसी सरकी रफ़अतोंपै[4] ग़रूर
जो आस्ताने-उदूपर[5] झुकाये बैठे हैं

उक्त शेर नज़्मके हैं। गज़लका क्षेत्र सीमित है, उसका अन्दाज़े-बयान भी नज़्मसे भिन्न होता है और एक शेरमे ही गज़लकी ज़बानमे सम्पूर्णभाव व्यक्त करना होता है। गज़लके निम्न शेरमे मुसलिम लीगकी इसी मनोवृत्तिको देखिये 'मुल्ला' किस ख़ूबीसे व्यक्त करते हैं—

---

[1]द्वेष-भावकी, [2]पराधीनतामे, [3]देशके धनमे, [4]उच्चतापर घमण्ड, [5]शत्रुकी चौखटपर।

जोशे-तकसीम वारिसोका न पूछ।
ज़िद यह है कि मांकी लाश फटके बटे ॥

मांकी लाशको काटकर बांटनेवालोसे सावधान रहनेके लिए गज़लके दो शेरमे मुल्ला चेतावनी देते हुए फरमाते है—

बुलबुले-नादां ! जरा रंगे-चमनसे होशयार।
फूलकी सूरत बनाये सैकड़ो सैयाद है॥
आशियां वालोकी अब गुलशनमें गुंजाइश नहीं।
आज सहने-बागमें या सैद[1] या सैयाद[2] है॥

जब इन सैयादोने चमन बांट लिया तो मुल्ला इन व्यथाभरे स्वरोमे कराह उठे—

यूँ दिल भी कभी होते है जुदा, 'मुल्ला' यह कैसी नादानी ?
हर रिश्ता ज़ाहिर तोड़ दिया, ज़ंजीरे-निहानी[3] भूल गये॥

ज़ंजीरे-निहानी तोड देने और नादानीका परिणाम क्या हुआ ? यह भी मुल्ला साहबके घायल दिलसे पूछिये—

कैसा गुबार चश्मे-मुहब्बतमें आ गया।
सारी बहार हुस्नकी मिट्टीमें मिल गई॥

मुल्ला साहबने इस एक शेरमे सभी कुछ कह दिया। कुछ भी कहना शेष नहीं रहा। भारत-विभाजनसे स्वराज्य-प्राप्तिका सब मज़ा किरकिरा हो गया। वे खिज़ानसीब जो बहारके न जाने कबसे मुन्तज़िर थे और दिलोमे हज़ारो अरमान छिपाये हुए थे। बहार आते ही बरबाद हो गये। बकौल किसी के—

---

[1] शिकार, [2] शिकारी, [3] अन्तरंगका बन्धन।

ख़ामोश हो गया है चमन बोलता हुआ

अनगिनत बसे-बसाये घर वीरान हो गये, असंख्य फलते-फूलते परिवार उजड गये। लाखो युवक भरी जवानीमे शहीद कर दिये गये। लाखो युवतियाँ अपहृत करली गई। लाखो वृद्धाये निपूती हो गई, लाखो माईके लाल यतीम होकर बिलखते फिरने लगे। लाखो वृद्ध, अशक्त, अपाहिज निराश्रित होकर एडियाँ रगड-रगडकर जीवित रहनेको बाध्य हुए। समस्त देश श्मशान-सा बन गया—

देते है सुराग फस्ले-गुलका।
शाख़ोपै जले हुए बसेरे॥

—अज्ञात

आँखोंसे अक्सर उनकी आँसू निकल गये है।
क्या-क्या भरे गुलिस्ताँ सावनमें जल गये है॥
आज़ादियाँ तो देखीं, बरबादियाँ भी देखो।
कैसे हसीन गुलशन काँटों पै ढल गये है॥

—अज्ञात

कुछ इस तरहसे बहार आई है कि बुझने लगे।
हवा-ए-लाल-ओ-गुलके चराग़े-दीद-ओ-दिल॥

—अज्ञात

तमाम अहले-चमन कर रहे है यह महसूस।
बहारे-नौका तबस्सुम[1] तो सोगबार-सा[2] है॥

—ज़ोहरा निगाह

---

[1]नई नवेली बहारकी मुसकान; [2]शोकाकुल-सा।

वहारे-नौका तवस्सुम सोगवार-सा क्यों है और फला-फूला चमन वीरान किन लोगोने कर दिया ? यह जाननेके लिए 'अदम' की 'दस्तक' नज्मके यह शेर पर्याप्त होंगे—

आज शायद भेड़िये फिर घूमते हैं शहरमें
भूककी चिनगारियाँ लेकर दहाने-कहरमें[1]
मसजिदोसे अज़दहे[2] निकले हैं बलखाते हुए
मन्दिरोसे जलजले उट्ठे हैं थर्राते हुए
आँधियोका भूत उठा है दाँत चमकाता हुआ
मौतका जबड़ा खुला है आग बरसाता हुआ

यह सनमख़ानोके हीरो[3], यह हरमके शहसवार[4]।
बनके निकले हैं ख़ुदाओकी तबीअ़तका ग़ुबार ॥

. . . .

आ गया है डाकुओंका काफिला[5] दहलीज़पर
बुझ चुकी है अम्नकी कन्दील[6] सीना पीटकर

अपने अन्धे अनुयायियोको साम्प्रदायिक नेता अबलाओका सतीत्व लूट लेनेके लिए किस प्रकार फतवे देते थे ? यह भी 'अदम' साहबकी ज़बाने-मुबारकसे सुनिये—

देखते क्या हो बदहवासीसे ?
क्या हुआ है तुम्हारी ग़ैरतको
इतनी ताख़ीर[7] क्यों इताअ़तमें[8]
हुक्म सिर्फ एक बार होता है

---

[1]मृत्युरूपी मुखमे, [2]अजगर, [3]मन्दिरोके नेता, [4]मसजिदोके हिमायती; [5]गिरोह, दल, [6]शान्ति-दीप-शिक्षा, [7]विलम्ब; [8]आज्ञा पालनमे

जब इन्सान दरिन्दे और वहशी बन गये, तब उनके ख़ूनी पंजोंने क्या-क्या जुल्मो-सितम किये। यह 'अर्श' मलसियानी साहबसे मालूम कीजिए—

बस्तियोंकी बस्तियाँ बरबादो-वीराँ हो गईं
आदमीकी पस्तियाँ, आख़िर नुमायाँ हो गईं
क़त्लो ग़ारतके हज़ारों दाग लेकर वहशतें
आज सुनते हैं कि फिर अस्मत बदामाँ हो गईं

इस बरबादी-ओ-वीरानीका दृश्य ग़ज़लके एक शेरमें जगन्नाथ साहब 'आज़ाद' देखिये किस ख़ूबीसे खींचते हैं—

बस एक नूर झलकता हुआ नज़र आया।
फिर उसके बाद न जाने चमनपै क्या गुज़री॥

मनुष्योंकी यह रक्त-लोलुपता देखकर दरिन्दे भी सहम गये—

दरिन्दोंमें हुआ करती हैं सरगोशियाँ इसपर।
कि इन्सानोंसे बढ़कर कोई ख़ूँ आशाम क्या होगा॥
—अदीब मालीगाँवी

भारत-विभाजनका परिणाम यह हुआ कि भारतीय हिन्दू-मुसलमान अपने ही देशमें विदेशी बन गये। मुसलिमलीगी अधिकृत क्षेत्र वहाँके हिन्दुओंके लिए और काँग्रेसी अधिकृत क्षेत्र मुसलमानोंके लिए विदेश हो गया। भाई-भाईका शत्रु हो गया। हिन्दू-मुसलमान दोनों अपने जन्म-स्थानों और पूर्वजोंकी स्मृतियोंको बेगाना देश समझनेके लिए मजबूर हो गये—

तू अपनेको ढूँड रहा है दुनियाँके मामूरेमें।
यह बेगाना देस है ऐ दिल! इसमें सब बेगाने हैं॥

देश छोड़कर लाखों नर-नारियोंके बिलखते हुए काफिले इधरसे उधर

आ-जा रहे हैं, परन्तु न तो किसीको मंज़िलका पता है, न किसीको रास्तोका, फिर भी बच्चोको कान्धोपै लादे, बूढे माँ-बापको सहारा दिये बढे जा रहे हैं—

मंज़िलसे भी नावाकिफ हैं, राहसे भी आगाह नहीं।
अपनी धुनमें फिर भी रवाँ हैं, यह भी अजब दीवाने हैं॥

—जगन्नाथ आज़ाद

उन दिनो धर्मोन्माद और मज़हबी दीवानगीका यह आलम था कि उस विशाक्त वातावरणमे भले आदमियोका जीना दूभर हो गया था—

जो धर्मपै बीती देख चुके, ईमाँपै जो गुज़री देख चुके।
इस रामो-रहीमकी दुनियाँमें इन्सानका जीना मुश्किल है॥

—अर्श मलसियानी

जब रामो-रहीमके बन्दे जहरीले नाग बन जाये, तब उनसे बचा भी कैसे जाय ?

डक निहायत ज़हरीले हैं, मज़हब और सियासतके[1]।
नागोकी नगरीके वासी ! नागोकी फुंकार तो देख॥

—अर्श मलसियानी

इन ज़हरीले धर्मके ठेकेदारो और राजनैतिक कुचक्रियोके कारनामे उजागर किये जाये तो—

खबसे-बातिन खुदापरस्तोंके[2]
मंज़रे-आमपर अगर लायें[3]

---

[1]राजनीतिके, [2]खुदा परस्तोके अपवित्र एव नीच कार्य्य, [3]यदि प्रकट कर दिये जाये।

जब इन्सान दरिन्दे और वहशी बन गये, तब उनके ख़ूनी पंजोंने क्या-क्या ज़ुल्मो-सितम किये। यह 'अर्श' मलसियानी साहबसे मालूम कीजिए—

बस्तियोंकी बस्तियां बरबादो-वीरां हो गईं
आदमीकी पस्तियां, आख़िर नुमायां हो गईं
क़त्लो ग़ारतके हज़ारों दाग़ लेकर वहशतें
आज सुनते हैं कि फिर अस्मत बदामां हो गईं

इस बरबादी-ओ-वीरानीका दृश्य ग़ज़लके एक शेरमें जगन्नाथ साहब 'आज़ाद' देखिये किस ख़ूबीसे खींचते हैं—

बस एक नूर झलकता हुआ नज़र आया।
फिर उसके बाद न जाने चमनपै क्या गुज़री॥

मनुष्योंकी यह रक्त-लोलुपता देखकर दरिन्दे भी सहम गये—

दरिन्दोंमें हुआ करती हैं सरगोशियां इसपर।
कि इन्सानोंसे बढ़कर कोई ख़ूं आशाम क्या होगा॥

—अदीब मालीगाँवी

भारत-विभाजनका परिणाम यह हुआ कि भारतीय हिन्दू-मुसलमान अपने ही देशमें विदेशी बन गये। मुसलिमलीगी अधिकृत क्षेत्र वहाँके हिन्दुओंके लिए और काँग्रेसी अधिकृत क्षेत्र मुसलमानोंके लिए विदेश हो गया। भाई-भाईका शत्रु हो गया। हिन्दू-मुसलमान दोनों अपने जन्म-स्थानों और पूर्वजोंकी स्मृतियोंको बेगाना देश समझनेके लिए मजबूर हो गये—

तू अपनेको ढूंढ रहा है दुनियांके मामूरेमें।
यह बेगाना देस है ऐ दिल ! इसमें सब बेगाने हैं॥

देश छोड़कर लाखों नर-नारियोंके बिलखते हुए क़ाफ़िले इधरसे उधर

आ-जा रहे हैं, परन्तु न तो किसीको मंज़िलका पता है न किसीको रास्तोंका, फिर भी बच्चोंको कन्धोंपे लादे, बूढ़े माँ-बापको सहारा दिये बढ़े जा रहे हैं—

मंज़िलसे भी नावाकिफ हैं, राहसे भी आगाह नहीं।
अपनी धुनमें फिर भी रवाँ हैं, यह भी अजब दीवाने हैं॥
—जगन्नाथ आज़ाद

उन दिनों धर्मोन्माद और मज़हबी दीवानगीका यह आलम था कि उस विषाक्त वातावरणमें भले आदमियोंका जीना दूभर हो गया था—

जो धर्मपै बीती देख चुके, ईमांपै जो गुज़री देख चुके।
इस रामो-रहीमकी दुनियामें इन्सानका जीना मुश्किल है॥
—अर्श मलसियानी

जब रामो-रहीमके बन्दे ज़हरीले नाग बन जायें, तब उनसे बचा भी कैसे जाय?

इक निहायत ज़हरीले हैं, मज़हब और सियासतके[1]।
नागोंकी नगरीके वासी! नागोंकी फुकार तो देख॥
—अर्श मलसियानी

इन ज़हरीले धर्मके ठेकेदारों और राजनैतिक कुचक्रियोंके कारनामे उजागर किये जायें तो—

खबसे-बातिन खुदापरस्तोंके[2]
मज़रे-आमपर अगर लायें[3]

---

[1]राजनीतिके, [2]खुदा परस्तोंके अपवित्र एवं नीच कार्य्य, [3]यदि प्रकट कर दिये जायें।

वाक़िया है कि शर्मसारीसे
मसजिदोंके चराग़ बुझ जायें

—अदम

मन्दिरों-मसजिदोंके चराग भले ही शर्मसे बुझ जायें, मगर इनके मस्तकपर एक पसीनेकी बूँद भी दिखाई नहीं देगी। जो लाज-शर्मतकको बेच सकते हैं, वे देशको बेचने अथवा बरबाद करनेमें क्यों हिचकेंगे ?

सुना, कि किस तरह रंगीन ख़ानक़ाहोंमें[1]
ज़मीरे-ज़ुहोद[2] है लिथड़ा हुआ गुनाहोंसे

सुना, कि कितनी सदाक़तसे मसजिदोंके इमाम
फ़रोख़्त करते हैं बेख़ौफ़ फ़तवाहा-ए-हराम

जो वे दरेग़ ख़ुदाको भी बेच देते हैं
ख़ुदा भी क्या है हयाको भी बेच देते हैं
नमाज़ जिनकी तिजारतका एक हीला है
ख़ुदाका नाम ख़राबातका[3] वसीला है

—अदम

मुसलिमलीगकी साम्प्रदायिक घातक मनोवृत्तिके परिणामस्वरूप भारतका विभाजन होनेके कारण जितनी अधिक संख्यामें हिन्दू-मुसलमानोंको अपनी-अपनी जन्म-भूमियाँ और पूर्वजोंकी क्रीड़ास्थलियाँ जिस बेबसीमें छोड़नी पड़ी, उसकी याद भुलाये नहीं भूलती। एक चबक-सी, एक टीस-सी सीनेमें बराबर मालूम होती रहती है। भारत-विभाजनके तीन वर्ष बाद भी रामकृष्ण मुजतर यह कहनेपर मजबूर हुए—

[1]पीरो-फ़क़ीरोंके निवासस्थानमें; [2]पाखण्डी आत्मा, [3]शराबख़ानोंके साधन हैं।

स्वराज्य-अमृतपान करनेके लिए भारतीय बहुत उत्सुक और अधीर थे। अर्द्धशतीतक निरतर सघर्ष करनेके बाद स्वराज्य हाथ लगा, परन्तु उसके साथ सम्प्रदायवाद विष भी पल्ले पडा। विजयोन्मादमे विवेक

स्वराज्य-प्राप्ति

बिसारकर इसी विषको प्रथम पान कर लिया गया। बापूके सुझानेपर स्वराज्यामृत भी गलेमे उतार लिया गया, किन्तु अमरत्व प्राप्त न हो सका। विष और अमृत शरीरमे पडे-पडे परस्पर विरोधी कार्य कर रहे है। एक घुटन-सी, एक वेदना-सी, एक टीस-सी, एक चुभन-सी, महसूस हो रही है। स्वराज्यके सम्बन्धमे जनताके मनमे बहुत मधुर एव मोहक आशाये थी—

चमनसे जौरे-ख़िजाँ मिटेगा, बहारको जिन्दगी मिलेगी।
हँसेंगे फूल और खिलेंगी कलियाँ, फिज़ाओंको ताज़गी मिलेगी॥
—नसीम भरतपुरी

यह सोचते थे सहर[1] जो होगी, तो इक नई जिन्दगी मिलेगी।
सकून[2] दिलको, जिगरको राहत[3], निगाहको रोशनी मिलेगी॥
चमनकी इक-इक रविशपै हमको, दुलहनकी-सी दिलकशी मिलेगी।
कदम-क़दमपै खिलेंगे गुचे बहारसू ताज़गी मिलेगी॥
न होगा फिर बाग़बाँसे शिकवा, न दश्ते-गुलचींसे कुछ शिकायत।
समझ रहे थे यह अहले-गुलशन, हँसी मिलेगी, ख़ुशी मिलेगी॥
—मशहूद मुफ़्ती

वतनको आज़ादियाँ मयस्सर हुई तो इतना ही हमने जाना।
ख़ुशी-ख़ुशी जिन्दगी कटेगी, दिलोंको ख़ुरसन्दगी[4] मिलेगी॥
ग़िज़ा मिलेगी, मिलेगा कपड़ा, जो चाहेगा दिल वही मिलेगा।
उठा ग़ुलामीका सरसे साया, दिलोंको अब ख़ुर्रमी[5] मिलेगी॥
—महमूद मुज़फ़्फ़रपुरी

---

[1]सुबह; [2]चैन, [3]आराम-चैन; [4]ख़ुशी; [5]शादाबी, तरोताज़गी।

न जाने कितनी साधनाओ, तपस्याओ, बलिदानोके बाद स्वराज्य-वसन्त आया, परन्तु अपने साथ प्रलयकारी आँधियाँ भी लेता आया। भारत-विभाजन, हत्याकाण्ड, नारी-अपहरण, देश-निष्कासन आदि बलायें उसके साथ इस तरह घुली-मिली आई कि वसन्तोत्सव पतझडमे परिवर्तित हो गया—

नई सहर[1] लाई थी सँदेसा कि अब नई जिन्दगी मिलेगी।
किसे खबर थी हयात[2] ताजा लहूमें लिथडी हुई मिलेगी॥

—मजर सिद्दीक़ी

कफससे छुटनेपै शाद थे हम, कि लज्जते-जिन्दगी मिलेगी।
यह क्या खबर थी बहारे-गुलशन लहूमें डूबीहुई मिलेगी॥

—अबुल मजाहिद 'जाहिद'

जमाना आया है हुर्रियतका[3], चमनमें हरसू[4] यही था चर्चा।
किसीको इसका गुमाँ नहीं था कि दुःखभरी जिन्दगी मिलेगी॥

—महमूद मुजफ़्फरपुरी

जो मुल्कमें इन्कलाब आया तो, कत्लो-गारतके साथ आया।
समझ रहे थे समझनेवाले कि इक नई जिन्दगी मिलेगी॥
उदासियोने उजाड़ डाला कुछ इस तरह बाग़ आरजूका।
न ताजा दम इसमें गुल मिलेगा, न मुसकराती कली मिलेगी॥

—सरीर काबरी गयावी

हुई न थी जब नसीब कुरबत सुहाने कितने थे ख्वाबे-उल्फत।
कि हुस्नकी हर अदामें रक्साँ[5] नई-नई जिन्दगी मिलेगी॥

—कमर नग्रमानी

---

[1]सुबह, [2]नवजीवन; [3]आजादीका, [4]सर्वत्र; [5]नृत्य करती हुई।

किया था आज़ादि-ए-वतनका बड़ी मसर्रतसे ख़ैर मक़दम ।
किसे था इसका यक़ीं कि अंजामेकार ग़ारत गरी मिलेगी ।।
—नैय्यर

न था यह वहमो-गुमाँ भी 'साग़र' बहार आयेगी जब चमनमें ।
तो पत्ता-पत्ता तड़प उठेगा, कली-कली शबनमी[1] मिलेगी ।।
—सागर अन्सारी

बड़ी उम्मीदें, बहुत थे अरमाँ कि होंगे सैरे-चमनमे शादाँ ।
बहार आई तो क्या ख़बर थी कि हमको आशुफ़्तगी[2] मिलेगी ।।
—मफ़्तूँ कोटवी

वह दौर आया है जिसका इन्साँ, कभी तसव्वुर[3] न कर सका था ।
किसे ख़बर थी कि एक दिन यूँ, बलामें दुनिया घिरी मिलेगी ।।
—नुसरत करलोवी

ग़रीब साहिलसे[4] कोई पूछे जो हाल दरियाने कर दिया है ।
करोगे मौजोका जब नज़ारा मिज़ाजमें बरहमी मिलेगी ।।
—मुनव्वर लखनवी

स्वराज्य-प्राप्तिसे पूर्व जनसाधारणका विश्वास था कि जीवनोपयोगी सभी आवश्यकीय वस्तु सुलभ और सस्ती हो जायेगी । युद्धजनित अस्थायी मँहगाई विलीन हो जायगी ।

काँग्रेसकी ओरसे जब नमक-जैसी सस्ती वस्तुपरसे टैक्स उठानेका आन्दोलन चलाया गया था, तब लोगोकी आम धारणा बन गई थी कि टैक्सोका अभिशाप समाप्त कर दिया जायगा । यह किसीको आभासतक

[1]अश्रुपूर्ण, [2]परेशानी; [3]कल्पना; [4]किनारेसे ।

न हुआ कि नमकके अतिरिक्त सभी वस्तुओंपर नई-नई टैक्स लाद दिये जायेंगे। इनकमटैक्स, मृत्युटैक्स, सेल्सटैक्स, एक्साइज ड्यूटी आदि भिन्न-भिन्न टैक्स नित नये बढते जायेंगे। रेलवे और पास्टआफिसके किराये घटनेके बजाय बढते चले जायेंगे।

जमाना वाकिफ न था कुछ इसमें कि ऐसा कहते-सारा[1] पडेगा।
जो चीज मिलती थी चार पैसोंको अशर्फी पर वही मिलेगी॥
यह क्या खबर थी कि फाका मस्तीमें सत्रपोशी[2] भी होगी मुश्किल।
अमा को[3] जब होगी इल्तजायें[4] तो कत्लो-गारत गरी मिलेगी॥
—सरीर कावरी गयावी

बहारमें जानते थे साक़ी! न बाबे-मैखाना[5] बन्द होगा।
यह क्या खबर थी कि मैकशोंको शराब तिश्ना लबी[6] मिलेगी॥
—जाविर फतहपुरी

वही है फाकोकी जब्रसामानियोसे इफरादकी हलाकत।
मेरा गुमां था ग़लत कि आजाद होके आसूदगी मिलेगी॥
—खलीक ईयोलवी

जनताके जब स्वराज्य सम्बन्धी स्वप्न भंग हुए तो वह उन नेताओंसे चिढ गई, जो लम्बे-लम्बे वायदे करते हुए और जनताके जज्वातको उभारते हुए थकते ही न थे।

कहाँ है अब वोह जो कह रहे थे कि "दौरे-आजादमें वतनको—
नये नजूमो-कमर[7] मिलेंगे, नई-नई जिन्दगी मिलेगी॥
—आरिफ बांकोटी

---

[1]भीषण अकाल, [2]वस्त्राभावमें गुप्तांगोका ढकना भी कठिन होगा; [3]सुख-शान्तिके लिए, [4]प्रार्थना की जायेगी तो, [5]मधुशालाका द्वार, [6]प्यास बढानेवाली, [7]नवीन नक्षत्र-चन्द्रमा।

स्वराज्यसे पूर्व लोगोंका विश्वास था कि परस्पर भेद-भाव नहीं रहेगा। हर भारतवासीको समान अधिकार होगा—

जो राज़[1] आज़ादि-ए-वतनमें निहाँ[2] था कौन उसको जानता था।
कि इक तरफ़ ख़्वाजगी[3] मिलेगी तो इक तरफ़ बन्दगी[4] मिलेगी॥
यही है जमहूरियतके[5] मानी तो फिर गुलामीका क्या गिला है।
किसीको ग़म होगा और किसीको मसर्रते-दायमी[6] मिलेगी॥
—सरीर कावरी

शगुफ़्ता बर्गहाय गुलकी[7] तहमें नोके-ख़ार[8] है।
ख़िज़ां[9] कहेंगे फिर किसे अगर यही बहार है॥
—जोश मलीहाबादी

वही बाक़ी है अब तक बन्दिशोंकी सिल्सिलाबन्दी।
क़दम बन्दी, ज़बांबन्दी, नज़र बन्दी, सदाबन्दी॥
यह हुर्रीयत[10] कहाँ है, हुर्रियतकी है हवाबन्दी।
गुलामी हो गई रुख़सत, मगर बाक़ी है पाबन्दी॥
गलेसे तौक़ उतारा पांवमें ज़ंजीर पहनादी।
तो फिर मैं पूछता हूँ, क्या यही है दौरे-आज़ादी॥
—सीमाब अकबराबादी

फ़िज़ायें[11] सोच रही हैं कि इब्ने-आदमने[12]।
ख़िरद[13] गवांके, जुनूं आज़माके क्या पाया?
वही शिकस्ते-तमन्ना वही ग़मे-ऐय्याम।
निगारे-ज़ीस्तने[14] सब कुछ लुटाके क्या पाया॥
—साहिर लुधियानवी

---

[1]भेद, [2]निहित, [3]किन्हींको हुकूमत, [4]किन्हींको गुलामी, [5]प्रजातन्त्रताके, [6]स्थाई खुशियाँ, [7]खिले हुए फूलोंकी तहोंमें, [8]काँटे छिपे हुए हैं, [9]पतझड़, [10]स्वतन्त्रता, [11]हवायें, [12]मानव-पुत्रने, [13]बुद्धि खोके, [14]जीवन ऐश्वर्य्यने।

सहरका[1] मुजदा[2] सुनानेवालो ! तुलूअ[3] बेशक सहर[4] हुई है ।
मगर वोह किस कामकी सहर जो चुराले कुटियाओंका उजेला ॥
—कैफी

ख्वाब जख्मों हैं उमगोके कलेजे छलनी
मेरे दामनमें हैं जख्मोके दहकते हुए फूल
अपनी सदसाला तमन्नाओका हासल है यही ?
तुमने फरदौसके[5] बदलेमें जहन्नुम[6] लेकर
कह दिया हमसे "गुलिस्तांमें बहार आई है"
किसके माथेसे गुलामीकी सियाही छूटी ?
मेरे सीनेमें अभी दर्द है महकूमीका[7]
मादरे-हिन्दके चेहरे पै उदासी है वही
—सरदार जाफिरी

वही कस्मपुरसी, वही बेहिसी आज भी क्यों है तारी ।
मुझे ऐसा महसूस होता है यह मेरी महनतका हासिल नहीं है ॥
—अख्तर उल ईमान

जमहूरियतका[8] नाम है जमहूरियत कहां ?
फताइते- हकीकते[9]-उरियां[10] है आजकल ॥
कांटे किसीके हकमें किसीको गुलो-समर ।
क्या खूब अहतमामे-गुलिस्तां[11] है आजकल ॥
—जिगर मुरादाबादी

सूरज चमका आजादीका लेकिन तारीकी[12] कम न हुई ।
पुर होल अंधेरे गुरबतके कुछ और भी बढ़ते जाते हैं ॥
—मंजर सिद्दीकी

---

[1]प्रात काल होनेका, [2]शुभ सन्देश, [3]उदय, [4]सूर्य, सुबह; [5]स्वर्गके, [6]नरक, [7]गुलामीका, आधीनताका, [8]आजादीका [9]वास्तविकता, [10]नग्न; [11]चमनका प्रबन्ध, [12]अँधेरी ।

न जाने हमनशीं[1] ! यह बदशगूनी रंग क्या लाये ?
कि गुलशनमें बहार आते ही शबनम[2] अश्क[3] बरसाये ॥
मुबारक सुबह हो लेकिन, चमनवालो ! यह खदशा[4] है ।
कि सूरजकी तमाज़तसे[5] कहीं गुलशन न जल जाये ॥

—नाज़िश परतापगढ़ी

स्वतन्त्रता रूपी दुलहन वरण करनेसे पूर्व काश उसे देख लिया होता—

यह इज़्तराब[6] ! यह शौक़े-उरूसे-आज़ादी[7] !!
उठाके देख तो लेना था परद-ए-महमिल[8] ॥

—हफ़ीज़ होश्यारपुरी

काश स्वतन्त्रता-दुलहनका अन्तरग भी इतना ही मोहक होता जितना कि उसका वाह्य आवरण था—

काश ऐ महमिलनशीं ! खुलता न यूँ तेरा भरम ।
हाय कितनी दिलनशीं थी परद-ए-महमिलकी बात ॥

—नाज़िश परतापगढ़ी

स्वतन्त्रता मिलनेके बाद जो सर्वत्र एक असतोष-सा एक दम घोटू धुआँ-सा फैला हुआ है, उसके कई कारण हैं—

१—बहुत-से ऐसे व्यक्ति जो स्वतन्त्रता-सग्राममे बरबाद हो गये, स्वतन्त्रता मिलनेपर भी उनकी वही शोचनीय स्थिति रही । किसीने उनके आँसू तक नही पूँछे । इन आँसुओको वे शायद चुपचाप पी भी जाते, यदि उनके साथी उनके दु ख-शोकमे समवेदना प्रकट कर सकते, किन्तु

---

[1]पडोसी, [2]ओस, [3]आँसू, [4]भय, सन्देह, खटका, [5]प्रचण्ड धूपसे, [6]उत्सुकता, [7]स्वतत्रतारूपी दुलहनके वरण करनेका चाव, [8]महमिलका परदा ।

वे इतने ऊँचे और महान हो गये कि उन्हे इनके आँसुओको पूछनेका अवकाश ही नही मिला। उद्घाटन-समारोहो, भोजो, जुलूसो, व्याख्यान-सभाओ और अपने पदको सुरक्षित बनाये रखनेके प्रयत्नो आदिमे वे वेचारे इतने लीन और व्यस्त हो गये कि उन्हे यह खयाल तक न रहा कि स्वतन्त्रताकी खिलअत पहने हुए, जिन लाशोपरसे हमारा जुलूस गुजरा है, उनके परिवारोकी सिसकियाँ थामना भी हमारा फर्ज है। वही सिसकियाँ आज सर्वत्र सुनाई दे रही है। काश उन्हे इतना आभास हुआ होता—

उठ भी सकती है दफ़अतन लाशें।
जिनपै मसनद विछाये बैठे है॥

—कैफी आजमी

२—वहुत-से ऐसे व्यक्ति, जिनकी पसीनेकी एक भी बून्द स्वराज्यके लिए नही गिरी, अपितु स्वराज्य-आन्दोलनको कुचलनेमे कोई प्रयत्न शेष नही छोडा। वे मालामाल हो गये, ऊँचे-ऊँचे पदोपर प्रतिष्ठित बने रहे और बहुत-से ऐसे व्यक्ति जो स्वतन्त्रतादेवीका प्रसाद पानेके सर्वथा अधिकारी थे, मुँह देखते रह गये। इन मुँह देखनेवालोके हृदयोसे भी कुछ इस तरहके उच्छ्वास निकलते रहते है—

क्या गुलिस्ताँ[1] है कि गुचे तो है लबे-तिश्न-ओ-जर्द[2]।
खार आसूद-ओ-शादाब[3] नजर आते है॥

—जाँ निसार 'अख़्तर'

ऐसे ही उपेक्षितोके हृदयोसे ऐसे उद्गार भी प्रकट होते रहते है—

हरम हमींसे, हमींसे है, आज बुतख़ाने।
यह और बात है दुनिया हमें न पहचाने॥

—अजीज वारिसी

---

[1]चमनकी व्यवस्था तो देखो, [2]फूल तो प्यासे और मुरझाये हुए है, [3]और काँटे प्रफुल्ल।

जो स्वार्थी जनताको दोनों हाथोंसे लूट रहे हैं, उन्हें देशके उजड़नेका क्या ग़म ?

> ख़बर हो कारवाँको[1] मंज़िले-मक़सूदकी[2] क्योंकर।
> बजाये रहनुमाई[3] रहज़नी है[4] आम ऐ साक़ी॥
>
> —अदीब मालीगाँवी

३—स्वराज्यसे पूर्व जो सुख-स्वप्न देखा जा रहा था, वह स्वराज्य मिलनेपर भग हो गया। वही मँहगाई, वही पुलिस-राज्य। देशकी स्थिति सम्भलनेके बजाय उत्तरोत्तर बिगड़ती गई। रिश्वतख़ोरी, चोर-बाज़ारी, सिफारिशोंकी लानत, लूटमार, डाकेजनी, अपहरण, अव्यवस्था आदिकी बाढ़-सी आगई—

> फ़िज़ा चमनकी कुछ ऐसी बदली, गुलो-समनका पता नहीं है।
> जो दुश्मने-रहज़नी थे पहले, ख़ुद उनमें अब रहज़नी मिलेगी॥
> नई है मै और नये हैं साग़र, नई है बज़्म और नया है साक़ी।
> मगर जो पहले थी मै-कशोंमें वोह आज भी तिश्नगी मिलेगी॥
>
> —नसीम भरतपुरी

ग़रीब जनताको स्वराज्यसे क्या मिला—

> मगर इन दरख़्तोंके सायेमें ऐ दिल !
> हज़ारों बरसके यह ठिठुरे-से पौदे।
> यह हैं आज भी सर्द, बेजान, बेदम।
> यह हैं आज भी, अपने सरको झुकाये॥
>
> —जज़्बी

---

[1]यात्रीदलको, [2]लक्षपर पहुँचनेकी, [3]पथप्रदर्शकोंके बजाय; [4]यात्रियोंको लूटा जा रहा है।

कौन कहता है कि स्वतन्त्रताकी बहार नही आई ? आई और जरूर आई। हाँ यह बात दूसरी है कि वह जन साधारणकी कुटियाओमे नही आई—

बहार आई, जरूर आई, पर अपनी बस्तीसे दूर आई।
वहाँ उगाये जमीने सब्जे, जहाँ कोई दीदावर[1] नही है॥

—शफीक जौनपुरी

कुछ इस तरहसे बहार आई है कि बुझने लगे।
हवा-ए-लाला-ओ-गुलसे चराग़े-दीद-ए-दिल॥
रवाँ है काफिला, बेदरा-ओ-बेमकसूद।
जो दिल गिरफ़्ता है राही, तो रहनुमाँ गाफिल॥

—हफीज होश्यारपुरी

४—भारत-विभाजनके कारण जिन्हे अपने बसे-बसाये घर छोड़ने पड़े और स्वराज्यके बाद भी जिन्हे इधर-उधर भटकना पडा, उनकी हाय भी आकाशमे गूंज रही है—

यह फकत आँसू नहीं, ऐ चश्मे जाहिर बीन दोस्त !
अपनी पलको पै लिये बैठे है इक अफसाना हम॥

—जगन्नाथ आजाद

५—वे मुस्लिम लीगी जो दिनमे सैकडो बार हाथ उठा-उठाकर पाकिस्तान बननेकी दुआएँ माँगते थे। किसी भी वजहसे वे पाकिस्तान न जा सके और भारतमे रहनेपर गैर मुसलमानोकी बहु सख्याके कारण, पहिले जितनी अधिक न तो सरकारी नौकरियाँ हथिया पा रहे है और न मनमाने फित्ने ही उठा पा रहे है। यद्यपि वे अब भी भारतमें रहते हुए 'भारत मुर्दाबाद, और 'पाकिस्तान ज़िन्दाबाद' के नारे लगाते रहते है, और

---

[1]पारखी देखनेवाला।

पचमाँगी कार्य कर रहे है। फिर भी उनके मनमे पड़ोसी जातियोंको देख-देखकर जो ईर्ष्याकी भावना उठती रहती है। वह उनके लेखो, नज़मो, गजलो आदिसे ध्वनित होती रहती है। यह लोग अपने देशमे रहते हुए भी अपनेको बेगाना समझते है।

६—वे साम्यवादी जो भारतीय होते हुए भी रूसको अपना माता-पिता समझते है। भारतीय प्रजातन्त्रके विरुद्ध गद्य-पद्य द्वारा असन्तोष फैलाते रहते है। यहाँ तक कि १९४७ के प्रथम स्वतन्त्रताके उत्सवको देखकर वे यह कहनेका भी साहस कर बैठे—

यह जश्न[1], जश्ने-मसर्रत[2] नहीं, तमाशा है।
नये लिबासमें निकला है रहज़नीका[3] जुलूस॥

—साहिर लुधियानवी

सुरो-असुरोने एक बार समुद्र मन्थन किया तो अमृतके साथ विष भी निकला। उस विषको अकेले महादेवने पी लिया और अमृत औरोंके लिए छोड दिया। अर्द्धशती तक निरतर सघर्ष करनेके बाद भारतको भी स्वराज्यामृत और सम्प्रदायवाद-गरल प्राप्त हुए। भारत-वासियोकी अनेक जन्म-जन्मान्तरोकी तपश्चर्याके फलस्वरूप उनका महामानव भी गरल पीनेको आगे बढा। वह उन्हे विजयोत्सव मनाने और स्वच्छन्दतापूर्वक स्वराज्य-सेवन करनेको छोडकर एकान्तमें बैठकर गरल पान कर रहा था कि उसका यह गरल-पान भी न देखा गया। अमृतको छोडकर उस गरलपर पिल पड़े। जब गरल आसानीसे नहीं छीना जा सका तो वरदान पाये हुए राक्षसके समान हमने स्वय अपने वर-दाता महामानवको मार डाला। विश्वकी इस दीप-ज्योतिके बुझनेसे वकील अर्श मलसियानी—

राष्ट्र-पिताकी शहादत

---

[1]उत्सव, [2]खुशीका उत्सव नही, [3]लुटेरेपनका।

जमीने-हिन्द थर्राई, मचा कोहराम आलममें।
कहा जिस दम जवाहरलालने "बापू नहीं हममें"॥
फ़लक कांपा, सितारोकी ज़ियामें[1] भी कमी आई।
जमाना रो उठा, दुनियांकी आँखोमें नमी आई॥

राष्ट्रपिता बापूको विश्वभरने श्रद्धांजलियाँ समर्पित की। भारत और पाकिस्तानके उर्दू-शायरोने भी बहुत अधिक श्रद्धाके फूल चढाये और चढा रहे हैं। प्रसंगवश उनमे-से चन्द नज्मोके थोडे-थोडे अशआर यहाँ दिये जा रहे हैं—

महात्मा गान्धी—

यह क्या हुआ कि अँधेरा-सा छा गया इकबार।
उदास हो गई सड़कें उजड़ गये बाजार॥
बढ़ा रही है उरूसाने-हिन्द[2] अपना सिंगार।
ठहर गई है सरे-राह वक्तकी रफ़्तार॥
सकूते-शाममें[3] इकरंगे बेकसी[4] क्यो है?
यह आज नब्जे-तमद्दुन[5] रुकी-रुकी क्यो है?

ख़बर यह है कि हक़ीके-वफाका[6] ख़ून हुआ।
शहीद हो गई ग़ुरबत[7], हयाका ख़ून हुआ॥

पुकारता है जमाना दुहाई भारतकी।
चितामें झोक दी किसने कमाई भारतकी?

---

[1]चमकमे, [2]भारतीय दुलहन, [3]सन्ध्याकी शान्तिमें; [4]असहाय स्थिति; [5]सभ्यताकी नाडी, [6]नेकीके वास्तविक रूपका; [7]भोलेपनका बलिदान हो गया।

यह किसके ख़ूनके धब्बे हैं आदमीयतपर ?
मुक़ामे-हैफ़[1] है ऐ हिन्द ! तेरी क़िस्मतपर ॥

है गुमरहोंको[2] ख़ुशी यह कि रहनुमा[3] न रहा ।
भँवरमें आई जो किश्ती तो नाख़ुदा[4] न रहा ॥

लिया ख़िराज[5] अक़ीदतका[6] जिसने दुश्मनसे ।
मिलादी वक़्तकी रफ़्तार दिलकी धड़कनसे ॥

. . . .

झुकादी गरदनें मग़रूर कजकुलाहोंकी[7] ।
झपक रही थी पलक जिससे बादशाहोंकी ॥

ग़रज़ कि आँख[8] परदा जो था उठाके गया ।
दिलोंकी ईंटसे मन्दिर नया बनाके गया ॥

जो डूब जाता है सूरज तो रात होती है ।
ख़ता मुआफ़ हो शबनम[8] इसी पै रोती है ॥

यह क्या कि जेठमें जब प्यास तेज़ हो लबकी ।
तो सूख जाय उसी वक़्त जल भरी नद्दी ॥

चढ़े जो चाँद कभी लेके चाँदनी अपनी ।
तो उसकी फ़िक्रमें मँडलाये हर तरफ़ बदली ॥

—जमील मज़हरी एम० ए०

---

[1]शर्मकी बात है, [2]पथभ्रष्टताको, [3]पथप्रदर्शक, [4]नौका-खिवैया, [5]कर, टैक्स, [6]श्रद्धा विश्वासका, [7]अभिमानसे ऊँचा मस्तक रखनेलोंकी, [8]ओस ।

महात्मा गांधीका क़त्ल—

कुछ देरको नब्ज़े-आलम भी चलते-चलते रुक जाती है।
हर मुल्कका परचम[1] गिरता है, हर क़ौमको हिचकी आती है॥
तहज़ीबे-जहाँ[2] थर्राती है, तारीख़े-बशर[3] शरमाती है।
मौत अपने किये पर खुद जैसे दिल ही दिलमें पछताती है॥
इन्सां वोह उठा जिसका सानी सदियोंमें भी दुनिया जन न सकी।
मूरत वोह मिटी नक्क़ाशसे[4] भी जो बनके दुबारा बन न सकी॥

हाथोंसे बुझाया खुद अपने वोह शोल-ए-रूहे-पाक वतन[5]।
दाग़ इससे सियहतर कोई नहीं, दामन पर तेरे ऐ ख़ाके वतन!
पैग़ामे-अजल[6] लाई अपने उस सबसे बड़े मुहसिनके[7] लिए।
ऐ वाये-तुलूए-आज़ादी[8]! आज़ाद हुए इस दिनके लिए?

नाशाद वतन! अफ़सोस तेरी क़िस्मतका सितारा टूट गया।
उँगलीको पकड़कर चलते थे जिसके, वही रहबर[9] छूट गया॥

सीनेमें जो दे कांटोंको भी जा, उस गुलकी लताफ़त क्या कहिये?
जो ज़हर पिये अमृत करके, उस लबकी हलावत[10] क्या कहिये?
जिस सांससे दुनिया जा पाये, उस सांसकी निकहत[11] क्या कहिये?
जिस मौतपै हस्ती नाज़ करे, उस मौतकी अज़मत क्या कहिये?
यह मौत न थी क़ुदरतने तेरे, सर पर रक्खा इक ताजे-हयात[12]।
थी ज़ीस्त[13] तेरी मैराजे-वफ़ा[14], और मौत तेरी मैराजे-हयात[15]॥

---

[1]झण्डा; [2]विश्व-सभ्यता, [3]मानव इतिहास, [4]मूर्तिकारसे, [5]देशकी पवित्र आत्मारूपी आग, [6]मृत्यु-सन्देश, [7]हितैषीके, [8]हाय रे स्वतन्त्रताके सुनहरे प्रभात, [9]पथप्रदर्शक, [10]मिठास, [11]सुगन्ध; [12]अमर जीवनका ताज; [13]ज़िन्दगी; [14]नेकीका लक्ष, [15]जीवनका लक्ष।

मख़लूके-ख़ुदाकी[1] वनके सिपर मैदांमें दिलावर एक तू ही।
ईमांके पयम्वर आये वहुत, इन्सांका पयम्वर एक तू ही॥

तू चुप है लेकिन सदियोंतक गूंजेगी सदाये-साज तेरी।
दुनियाको अँधेरी रातोंमें ढारस देगी आवाज़ तेरी॥

—आनन्दनारायण मुल्ला

महात्मा गांधी—

ला जवाल इक टीस है सीनोमें ग़म है मुस्तक़िल।
भीगती जाती है आंखें, डूबते जाते है दिल॥
जगमगाते देशकी वरबाद शोभा हो गई।
नागहां कोई सुहागिन जैसे बेवा हो गई॥
ज़िन्दगी देकर वतनको सबका प्यारा उठ गया।
बेकसोंका, नेक लोगोंका, सहारा उठ गया॥
हाय यह क्या हो रहा है? हाय यह क्या हो गया।
हिन्दका वापू ज़मानेको जगाकर सो गया?
सब्र भी आ जायगा, यह ज़ख़्म भी भर जायगा।
हिन्द ऐसा देवता लेकिन कहांसे लायगा॥
ख़्वाब तकमें भी ख़याल इस बातका आता न था।
शान्तीका देवता गोलीसे मारा जायगा॥
पानी-पानी कर गई सबको यह ज़िल्लतनाक बात।
क्यों उठा? किस तरह उट्ठा? वापपर बेटेका हाथ॥
इक उजाला था कि जिसके दमसे रोशन, था यह घर।
क्या मिला पापीको सारे देशका सुख छीन कर॥

---

[1]ईश्वरकी सृष्ठी।

ज़ुल्मतोके ख़ौफसे सूरज ठहर सकता नहीं ॥
मर गया पैग़ाम्बर पैग़ाम मर सकता नहीं ॥
—अदीब सहारनपुरी

नजरे-गांधी—

६ बन्दोमें से ४ बन्द

रो कि रोना मादरे-हिन्द ! आज तेरा है बजा ।
रो कि तेरी गोदमें है तेरे बेटेकी चिता ॥
रो कि जमनाके किनारे भाग तेरा जल गया ।
रो कि मिट्टीमें मिला जाता है फख़रे-एशिया[1] ॥
इस तरह हो लरजाबरअन्दाज[2] हो जाये जहां ।
ज़लज़ला बरदोश[3] हो जायें ज़मीनो-आसमां ॥

ऐ हिमालय तू झुकाले अपना यह ताजे-सफेद ।
टेकदे अपनी जबीं[4] और चूमले पाये-शहीद[5] ॥
उठ रही है कुलज़मे ग़मसे तेरे मौजे शहीद ।
नारवां होगी अब उनपर ज़ब्तकी मुहरें मज़ीद ॥

संगरेज़ोके[6] जिगरका आख़िरी कतरा लुटा ।
आंसुओके सैलसे[7] इक दूसरी गगा बहा ॥

ऐ ज़मीं ! ऐ आसमां ! ऐ चान्द तारो, आफताब !
डाल लो आज अपने रुख़पर मातमी काली नक़ाब ॥
आंसुओंमें ढाल दो अपनी ज़ियाओका शबाब !
ख़ूब रोलो भरके जी, है आज रोना ही सवाब ॥

---

[1]एशियाका अभिमान, [2]तडप कर कयामतबरपा थर-थराहट पैदाकर; [3]प्रलय जैसे दृश्यसे, [4]मस्तक, [5]शहीदके चरण, [6]पत्थर-हृदयका; [7]वहावसे ।

नो-उरूसे-क़ौमियतका[1] लुट गया ताज़ा सुहाग।
आज तौक़ीरे-वतनको[2] खागई ख़ूँख़्वार आग॥

. . . .

जिसकी पेशानीके बलसे सरनगूँ[3] शाही कुलाह[4]।
जिसकी पाये-अज़्मपर[5] पाबोस[6] था ईवाने-माह[7]॥
जिसकी अंगुश्ते-इशारे से थे अफरंगी तबाह।
जिसके दामनमें सियासत-साज़[8] लेते थे पनाह॥
ऐ अजल[9]! उस शै को छूनेसे तू घबराई नहीं।
ऐसे इन्सांके क़रीब आते भी शरमाई नहीं?

—अहमद अज़ीमाबादी

पैकरे-तहज़ीबे-इन्साँ—

१७ शेरमें से ४ शेर

वोह गान्धी जिसका सारे मुल्ककी गरदनपै अह्साँ था।
वोह गान्धी, कारनामा जिसका आलममें नुमायाँ[10] था॥
वोह गान्धी नींव डाली, जिसने आज़ादीकी भारतमें।
वोह गान्धी जो सिपहरे-सुलहका[11] महरे-दरख़्शाँ[12] था॥
वोह गान्धी हिल गईं जिससे शहन्शाहीकी तामीरें[13]।
वोह गान्धी इज़्मो-इस्तकलालका[14] जो मर्दे-मैदाँ था॥
रवा रखता न था जो हाथ उठाना नौए-इन्साँ पर।
लगी गोली उसीके सीनये-आईने-सामाँ पर॥

—सरीर काबरी मीनाई

---

[1]नवीन राष्ट्ररूपी दुलहनका, [2]देशकी प्रतिष्ठाको; [3]नत, [4]शाहीताज, [5]दृढ चरणोपर, [6]चूमता, [7]चन्द्रमा-महल, [8]राजनीतिज्ञ; [9]मृत्यु; [10]प्रकट, [11]शान्तिरूपी ढालका, [12]चमकता हुआ चन्द्रमा, [13]नीवें, जड़े, [14]दृढता, धैर्य्यका।

नजरे-अक़ीदत—

१५ शेरमें से तीन शेर

क्या बताऊँ दोस्तो ! इक हम सफर जाता रहा।
राहमें बैठा हूँ मैं और राहबर जाता रहा॥
जिसने की कौमो-वतनके वास्ते कुरबानियाँ।
अमनो-आज़ादीका वोह पैगाम्बर जाता रहा॥
जिसका जलवा आम था शाहो-गदाके[1] वास्ते।
वोह फकीरे-बेनवा[2], वोह ताजवर जाता रहा॥

—सद्दीक कानपुरी

नजरे-गांधी—

१४ रुबाइयोमेंसे ४

वोह मुल्कका रहनुमा[3], वोह बूढ़ा हादी[4]।
दी जिसने ग़ुलामीसे हमको आज़ादी॥
छलनी हो उसीका गोलियोसे सीना।
दिल नौहासरा[5] है, रूह है फरियादी॥

मीठे शब्दोमें दिल लुभाता ही रहा।
हँस-हँसके बुराइयाँ जताता ही रहा॥
इस खन्दाबीनोकी[6] कोई हद भी है।
गोली खाकर भी मुसकराता ही रहा॥

इक ग़मने तेरे भुलवा दिये ग़म सारे।
हम भूल गये गुज़िश्ता[7] मातम सारे॥

---

[1]बादशाह-फकीरके, [2]शान्त फकीर, [3]नेता, [4]पथ-प्रदर्शक; [5]शोकसतप्त, [6]हँसमुख स्वभावकी, [7]भूतकालीन।

यह क़त्लको तेरे गूंज अल्लाह्-अल्लाह्।
झुकवा दिये इस जहांके परचम[1] सारे ॥

पत्थर भी है इन्सानका दिल कांच भी है।
हां पापकी और पुनकी यहां जांच भी है ॥
सुनते थे कि दुनियामें नहीं सांचको आंच।
देखा यह मगर कि सांचको आंच भी है ॥

—एजाज सिद्दीकी

प्रेरणात्मक शायरी

भारत-विभाजन, साम्प्रदायिक-हत्याकाण्ड, और स्वतन्त्रताके मधुर स्वप्न भग होनेके कारण सर्वत्र-निराशा, निरुत्साह, असफलता, अकर्मण्यताकी घटाये छा गई, किन्तु हमारे नौजवान शायरोने एक पलको भी हिम्मत नही हारी। अपने प्रखर कलाम-द्वारा उन घटनाओको अहर्निश छिन्न-भिन्न करनेमे लगे हुए है। वे आज इतने साहसी, पुरुषार्थी. और स्वावलम्बी हो गये है कि उन्नति-मार्गमे बढनेके लिए खुदाके सहारेकी भी आवश्यकता नही समझते—

चमक ही जायगी तकदीरे-कायनात[2] इक रोज।
न हो खुदाकी मदद, आदमीकी जात तो है ॥
जो कांप-कांप-सी उठती है तीरह्-तीरह्[3] फिज़ा।
पयामे-सुबह लिये जिन्दगीकी रात तो है ॥

—अज्ञात

बढ़ो कि रंगे-चमन बदल दें, चलो-चलो हिम्मत आजमायें।
जूनूकी[4] लौ और तेज कर दो, फसुर्दा[5] शमओको फिर जलायें ॥

—अज्ञात

---

[1]झण्डे; [2]ससारका भाग्य, [3]अँधेरा-स्याह वायुमण्डल, [4]उन्मादकी, जोशकी, [5]बुझे हुए दीपोंकी।

अपने देशको छोडकर जानेवाले महाजरीनको 'नज़ीर' बनारसी सचेत करते हुए कहते है—

वतनको तू छोड दे मगर क्या, गमे-वतन तुझको छोड देगा।
यहाँ तड़पती हैं आज लाशें, यहींपै कल जिन्दगी मिलेगी॥
तेरी ग़रीबीका क्या मुदावा[1] कि तू है अहसासका[2] सताया।
रहा अगर तेरा ज़हन[3] मुफलिस,[4] तो हर जगह मुफलिसी मिलेगी॥

दु खमे ही सुख छिपा रहता है—

गिरेगी जब आसमांसे बिजली तो जल उठेगा चराग़े-ख़िरमन[5]।
फुरेरा जब मौतका खुलेगा, तो दौलते-ज़िन्दगी मिलेगी।
—जोश मलीहाबादी

इन्हीं मसाइबकी[6] गोदमें पल रही है 'नाज़िश' मसर्रतें[7] भी।
इसी जहन्नुम कदेसे[8] इक रोज़ राह फरदौसकी[9] मिलेगी॥
—नाज़िश परतापगढ़ी

आपदाओंसे घबराना इन्सानकी शानके खिलाफ है। मगर आजके इन्सानको न जाने यह क्या हो गया है—

ज़रा-सी खातिर शिकस्तगीकी, नहीं है बर्दाश्त आदमीको।
कलीको वक्ते-शिकस्त देखो तो मुसकराती हुई मिलेगी॥
—सीमाब अकबराबादी

कदम तो रख मंजिले-वफामें बिसात खोई हुई मिलेगी।
वहीं-कहीं नक़्शे-पाकी सूरत[10] पडी हुई ज़िन्दगी मिलेगी॥

---

[1]उपाय, इलाज, [2]हीनताके भावका, [3]चेतना शक्ति, मन; [4]दरिद्र, [5]खलिहानका दीपक, [6]आपदाओंकी, [7]खुशियाँ, [8]नरकसे; [9]स्वर्गकी, [10]चरण-चिह्नोंकी तरह।

हैं जौरे-सैयाद ही का सदका चमनकी हंगामा आफरीनी ।
तबाहियाँ जिस जगहपै होंगी वहीं-कहीं जिन्दगी मिलेगी ॥
—सिराज लखनवी

बदीको परखो मिलेगी नेकी, जो गमको समझो ख़ुशी मिलेगी ।
जहाँ-जहाँ है घना अँधेरा, वहीं वहीं रोशनी मिलेगी ॥
यह ना उमेदी यह बेयकीनी, यक़ीनो-उम्मीदकी झलक है ।
इन्हीं अँधेरोंको पार करके यकीनकी रोशनी मिलेगी ॥
—सागर निज़ामी

कदम बढाओ खिज़ां नसीबो ! वोह मंज़िलें मुन्तज़िर हैं अपनी ।
जहाँ पहुँचकर निगाहो-दिलको, बहारकी ताज़गी मिलेगी ॥
—नरेशकुमार 'शाद'

शिकस्ता दिल हो न मेरे माली ! वोह दिन भी नज़दीक आ रहा है ।
कि फूल खिलते हुए मिलेंगे, फिज़ा महकती हुई मिलेगी ॥
—शफीक जौनपुरी

जो क़ैदो-बन्दे चमनसे घबराके आशियानेको छोड़ देगा ।
करेगा जिस शाख़पर बसेरा, वही लचकती हुई मिलेगी ॥
पुराने तिनकोंमें आँधियोंके मुकाबिलेकी सकत नहीं है ।
उजड़ भी जाने दे आशियाना कि फिर नई जिन्दगी मिलेगी ॥
—निसार इटावी

कभी तो इस जिन्दगी-ए-मुर्दामें रंग आयेगा जिन्दगीका ।
कभी तो बदलेंगे दिल हमारे, कभी तो हमको ख़ुशी मिलेगी ॥
—अर्श मलसियानी

अँधेरी रातोमें रोनेवालोसे कह रही है शफ़क़की सुर्खी[1]।
न अब वहाओ कोई भी आँसू, तुम्हे नई रोशनी मिलेगी ॥
—जमनादास 'अख्तर'

हज़ार जुल्मत हो, कारवाने-सहरकी[2] आमद न रुक सकेगी।
इन्हीं अँधेरोमें वज़्मेगेतीको[3] एक दिन रोशनी मिलेगी ॥
—गोपाल मित्तल

हज़ार नाकामियाँ हो 'नश्तर' हज़ार गुमराहियाँ हो लेकिन—
तलाशे-मंज़िल अगर है दिलसे तो एक दिन लाज़िमी मिलेगी ॥
—हरगोबिन्ददयाल 'नश्तर'

अभी तो महवे-सितम हो लेकिन, वोह दिन भी आयेगा इक न इक दिन।
जफ़ाकी आँखोमें होगे आँसू, वफ़ाके लबपर हँसी मिलेगी ॥
—अकरम धौलपुरी

मुसीबतोमें न हार हिम्मत, नज़रमें रख यह उसूले-फ़ितरत।
जो बादे-शब इक सहर भी होगी तो बादे-ग़म इक ख़ुशी मिलेगी ॥
—हरबंससिंह अख्तर

नवयुवकोकी प्रेरणात्मक शायरीका उल्लेख कहाँ तक किया जाय, अहर्निश इसीमे जीवन खपा रहे हैं और इसमे आश्चर्यकी कोई बात भी नही है। यह उम्र ही ऐसी है कि वे पिये नशा बना रहता है और असम्भव कार्य भी सम्भव कर डालती है, परन्तु जब हम 'असर' लखनवी-जैसे ७० वर्षीय वयोवृद्धकी यह ललकार सुनते है तो मन आशासे सचमुच ओत-प्रोत हो जाता है—

---

[1]सध्याकालीन सूर्यकी लाली; [2]प्रात कालरूपी यात्रीदलकी; [3]अँधेरे ससारको।

माना नसीब सो गये बेदार[1] तुम तो हो।
सोते हुए नसीब जगाते चले-चलो॥
काँटोको रौन्दते हुए शोलोंसे खेलते।
हर-हर क़दमपै धूम मचाते चले-चलो॥
बुझते हुए चराग़ भी हैं कामके 'अमर'!
शमएँ नई उन्होंसे जलाते चले-चलो॥

इस दौरके शायरोंने प्राय सभी आवश्यकीय एवं सामयिक विषयोंको नज़्म किया है। विश्वमे घटनेवाली मुख्य-मुख्य घटनाओंसे और विश्व-साहित्यसे उर्दू-शायर असर कुबूल करते रहे हैं। वे कूपमण्डूक न रहकर विस्तृत क्षेत्रमे उड़ान भरने लगे हैं। यही कारण है कि उर्दू-शायरी उत्तरोत्तर सम्पन्न होती जा रही है।

इस तरहकी इन्कलाबी और प्रगतिशील शायरीका क्रमबद्ध इतिहास हम 'शायरीके नये दौर' और शायरीके नये मोड' नामक अपनी नवीन पुस्तकोमे दे रहे हैं।

शेरो-सुख़नके पाँचो भागोमे गज़लपर विवेचन हुआ है और उक्त दोनो पुस्तकोमे नज़्म-गीत आदिका अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। अत. हम आगेके पृष्ठोमे विषयके अनुकूल इस दौरकी केवल गज़लोके चुने हुए अशआर दे रहे हैं, ताकि इन दस वर्षोंकी गज़लकी प्रगतिका अनुमान किया जा सके[2]। इन अशआरकी विशेषताओंपर विस्तार भयसे यहाँ कुछ न कहकर पाँचवे भागके सिंहावलोकनमे प्रकाश डाल रहे हैं।

१४ मार्च १९५४ ई०]

---

[1]सचेत; [2]जिस तरहके कलामके नमूने हमने इस परिच्छेदके पिछले पृष्ठोमे दिये हैं। उस तरहकी शायरीका विस्तृत विवेचन हमारी नवीन दोनो पुस्तकोमे मिलेगा। इस परिच्छेदमे तो प्रसगवश सकेतमात्र कर दिया है।

अकरम धोलपुरी

तमन्नामें, उदासीमें, खुशीमें, गममें गुजरी है।
हयाते-इश्क हरदम इक नये आलममें गुजरी है ।।
तरीके-जिन्दगीके पेचोख़म हमसे कोई पूछे ।
कि हर साइत हमारी काविशे-पैहममें गुजरी है ।।
ख़िजांका रज ही कैसा, गिला है फस्ले-गुलसे भी ।
कि हमपर इक नई उफ़्ताद हर मौसममें गुजरी है ।।
निशातो-ऐश ही को हम समझलें जिन्दगी क्योंकर ?
है आखिर जिन्दगी वोह भी जो रंजोग़ममें गुजरी है ।।

—निगार मार्च १९५३ ई०

जाँ निसार अख्तर

क्या गुलिस्तां है कि गुंचे तो हैं लब-तिश्नाओ-ज़र्द ।
खार आसूद-ओ-शादाब नजर आते हैं ।।
वही महफिल है, वही जीनते-महफिल है मगर ।
कितने वदले हुए आदाव नजर आते हैं ।।
वचके तूफानसे साहिलपै पनाहे कब तक ?
अव तो साहिलपै भी गरदाब नजर आते हैं ।।

—आजकल फरवरी १९५० ई०

अंजुम आजमी

मिलता नहीं सकून तो मिट जाइये मगर,
छुपकर अव इज़्तरावमें रोया न कीजिये ।।

हो जाइये जलील ख़ुद अपनी निगाहमें।
इतना कभी दमागको ऊँचा न कीजिये ॥
—आजकल उर्दू मार्च १९५३ ई०

अंजुम रिजवानी

होते हैं वडे किस्मतके धनी जो यह सदमे सह जाते हैं।
तूफाने-हवादसमें वरना अच्छे-अच्छे वह जाते हैं ॥
—निगार मई १९५१ ई०

अजीज वारसी

तेरी तलाशमें निकले हैं आज दीवाने।
कहाँ सहर हो, कहाँ शाम यह ख़ुदा जाने ॥
हरम हमींसे, हमींसे हैं आज वुतख़ाने।
यह और वात है दुनिया हमें न पहचाने ॥

अदम

तख़लीक़े-कायनातके दिलचस्प जुर्मपर।
हँसता तो होगा आप भी यजदाँ कभी-कभी ॥

बेकलीमें क़रार-सा क्यों है ?
हादसा ख़ुशगवार-सा क्यो है ?
उनको ज़िद है कि हम ग़रीबोंको।
दिलपै कुछ अख़्तियार-सा क्यो है ?
ज़िन्दगीकी हरेक तलख़ीसे।
जीनेवालोंको प्यार-सा क्यो है ?

आपकी पाकबाज आँखोमें।
हलका-हलका ख़ुमार-सा क्यों है ?

शिकन न डाल जबीपर शराब देते हुए।
यह मुसकराती हुई चीज मुसकराके पिला॥
सरूर चीजकी मिक़दारपर नहीं मौकूफ।
शराब कम है तो साकी ! नजर मिलाके पिला॥
—निगार अप्रेल १९५२ ई०

अदीब सहारनपुरी

अताबो-जौरके मारे बहुत मिलेंगे मगर।
हमें तबाह किया मुसकरानेवालोने॥
भुला सके न हम उनको अगर्चे सुनते हैं।
भुला दिया है ख़ुदाको भुलानेवालोंने॥
सकूं तो ले ही गये थे वोह छीनकर लेकिन—
तड़पने भी न दिया दिल बढ़ानेवालोने॥
कफसमें रहके भी हम तो उन्हे न भूल सके।
हमें भी याद किया आशियानेवालोने ?
इलाजे-दर्दसे कुछ और दर्द बढ ही गया।
उन्हींका जिक्र किया आने जानेवालोने॥
—निगार सितम्बर १९४७ ई०

न जाना था कि इकदिन पेश यह बातें भी आयेंगी।
सितमके साथ याद उनकी सदा रातें भी आयेंगी॥
शरारे पै-ब-पै उट्ठेंगे इन बेख़्वाब आँखोंसे।
खबर क्या थी कुछ ऐसी चाँदनी रातें भी आयेंगी॥

न काम हौसले आये न वलवले आये ।
रहे-वफ़ामें कुछ ऐसे भी मरहले आये ॥
हवासो-होश तो क्या, कायनात कांप गई ।
कभी-कभी तो दिलोंमें वोह ज़लज़ले आये ॥

दिलका यह तक़ाज़ा कि वोह जल्दीसे गुज़र जायें ।
आंखोंकी तमन्ना कि वोह कुछ देर ठहर जायें ॥
—निगार अगस्त १९४७ ई०

कौन इस तर्ज़े-जफ़ाये-आस्मांकी दाद दे ।
बाग़ सारा फूंक डाला, आशियां रहने दिया ॥

यह जोशे-बहारां, यह घटायें यह हवायें ।
दीवाने न हो जायें अगर, लोग तो मर जायें ॥

जितनी हविसकी अंजुमन आराइयां बढ़ीं ।
उतने ही बाल शीशये-हस्तीमें आ गये ॥

ख़िरदके शेव-ए-कारआगहीका हाल न पूछ ।
जिस आईनेपै जिला की, वही ख़राब हुआ ॥

—निगार अप्रेल १९५२ ई०

अदीब मालीगाँवी

उस जाने बहारांने जबसे मुँह फेर लिया है गुलशनसे ।
शाख़ोंने लचकना छोड़ दिया, ग़ुंचे भी चटकना भूल गये ॥

मज़ाक़े-ग़मेदिल नहीं हर किसीमें ।
बहुत फ़र्क़ है, आदमी-आदमीमें ॥

वही सलूक मेरे दिलसे तुम भी क्यो न करो।
चमनके साथ जो फस्ले-वहार करती है॥

तुम मेरी वात वनानेका इरादा तो करो।
इसके आगे मेरी तकदीर वने या न वने॥

हुस्न फूलोका है वाकी तो नशेमन लाखो।
चार तिनकोका तो ऐ वर्क ! चमन नाम नहीं॥

मुआमलाते-जवानी न पूछ ऐ हमदम !
लुटा सकून तो हासिल हुआ करार मुझे॥

मुझपै जो कुछ पड़ी, पड़ी, तुमने जो कुछ किया, किया।
तुमको मलाल हो तो हो, मुझको ख़याल भी नहीं॥
अपना अदा शनास बन, अपना जमाल भी तो देख।
तुझमें कमी है कौन-सी, तुझमें कोई कमी नहीं॥

मुहब्बतको अभी, फुर्सत नहीं, अपने नजारोसे।
लिये वैठी रहे वज़्मे-दो आलम दिलकशी अपनी॥

विजलियाँ है कि मेरा हुस्ने-ख़याल।
कुछ उजाला है आशियानेपर॥

अभी आस टूटी नहीं है ख़ुशीकी।
अभी गम उठानेको जी चाहता है॥
तवस्सुम हो जिसमें नई जिन्दगीका।
वोह आँसू वहानेको जी चाहता है॥

गमेदिल अव इतना भी वढता न जाये।
वोह देखें मुझे और देखा न जाये॥

दरिन्दोंमें हुआ करती हैं, अब सरगोशियाँ इसपर।
कि इन्सानोंसे बढकर कोई, ख़ूँ आशाम क्या होगा॥

—शायर जून १९४६ ई०

आरफ़ अदीबी मालीगाँवी

खबर हो कारवाँको मंजिले-मकसूदकी क्योंकर ?
बजाये रहनुमाई रहज़नी है आम ऐ साकी!
वोह हैं मासूम जिनसे अजुमनका नज्म बरहम है।
हमींपर किसलिए आता है, हर इल्ज़ाम ऐ साकी!
चमनकी रौनके-मातमकनाँ थीं जिनके हाथोंसे।
उन्हींपर मौसमे-गुलका है फैजे-आम ऐ साकी!
लहूने जिनके ईवाने-वतनको रोशनी बख्शी।
अभी तक उनके घरमें है सवादे-शाम ऐ साकी!

—शायर अप्रेल १९५० ई०

हरवंशनारायण अमन

उन्हींकी बज्म सही, यह कहाँका है दस्तूर ?
इधरको देखना, देना उधरको पैमाने॥

अनवर साबरी

कोई सुने न सुने इन्कलाबकी आवाज।
पुकारनेकी हदो तक तो हम पुकार आये॥

जहाँ खुद ख़िज्रे-मंजिल राहे-मंजिल भूल जाता है।
हमें आता है उन पुरपेच राहोंसे गुजर जाना॥

इसीका नाम है मजबूरिये-दिल उनके कूचेमें ।
न जानेकी कसम सौवार खा लेना, मगर जाना ॥

राजदारे-ख़ुदी हो तो जाये,
हासिले-जिन्दगी हो तो जाये,
अमने-आलम तो मुश्किल नही है,
आदमी–आदमी हो तो जाये ॥

तू मेरे वास्ते एक और जहां पैदाकर ।
यह जहां लग़जिशे-आदमके सिवा कुछ भी नहीं ॥

अफकर मोहानी

मैं क़फसमें खुद ही सैयाद ! अभी आऊँगा पलटकर ।
न मिला अगर चमनमें मुझे मेरा आशियाना ॥

अब्र अहसनी

ज़मानेमें फिर कौन होता हमारा ।
अगर तेरा गम भी न देता सहारा ॥
यह सहरा वोह मंजिलका दिलकश नज़ारा ।
कहां लाके पाये-शकिस्ताने मारा ॥
यह आवाज़ दी दोस्तने या कज़ाने ।
ज़रा देखना मुझको किसने पुकारा ॥
ग़मो-दर्दपर बढके कब्ज़ा जमा ले ।
कि इसपर नहीं मुनअ़िमोंका इजारा ॥

अगर अब भी ज़िल्लतमें गुज़रे तो किस्मत ।
ख़ुदी भी हमारी ख़ुदा भी हमारा ॥

अब्र गनौरी

न होते यह तो क्यों सैयाद होता, क्यों क़फस होता।
घड़ी दुश्वारियोंके बाद राजे-बालो-पर जाना॥
यहींसे पड़ गई बुनियाद 'अब्र' अपनी तबाहीकी।
कि हमने उनके वादेको हदीसे-मुअ़तबर जाना॥

अयूब

जो हुस्नो-इश्ककी रुदादसे हैं बेगाने।
वोह क्या समझके चले आये, मुझको समझाने?

अशअ़र मलीहाबादी

हरबार दिलने एक चोट खाई।
हरबार टूटी है पारसाई॥
खाली सुराही, खाली पियाले।
काली घटा तो बेकार आई॥
मै-नोशियोंपर मै-नोशियाँ हैं।
फिर भी नहीं है, गमसे रिहाई॥

अब सीख गया कैदी आदाब असीरोंके।
मद्धम-सी कई दिनसे आवाजे-सलासिल है॥

नशा तो है मगर अन्देश-ए-गुनाह नहीं।
घुले हैं, तेरी निगाहोंमें कैसे मैखाने॥
चमनमें बहे लाख शबनमके आँसू।
कली सीखती ही रही मुसकराना॥

—शायर मई १९५० ई०

मुहम्मदअलीख़ाँ असर

हजार ऐशकी सुबहे निसार है जिसपर ।
मेरी हयातमें ऐसी भी इक शबेगम है ।।

मुहम्मद मुहसन असर

जिन्हे जूनूंमें भी रहता है पासे रुसवाई ।
शऊरमन्दोसे बेहतर है ऐसे दीवाने ।।

असद भोपाली

ग़मेहयातसे जब वास्ता पड़ा होगा ।
मुझे भी आपने दिलसे भुला दिया होगा ।।
'असद' चलो कि बदल दें हयातकी तकदीर ।
हमारे साथ ज़मानेका फैसला होगा ।।

आगा सादिक

अपने उभरे हुए जज्वातसे बातें की हैं ।
रातभर तारो भरी रातसे बातें की हैं ।।
ज़िन्दगीके भी क़दम रुक गये चलते-चलते ।
यूं धड़कते हुए लमहातसे बातें की हैं ।।
फर्ज़ करता हूँ कि इक बात कही है तूने ।
और तसव्वुरमें उसी बातसे बातें की हैं ।।

दिल भी क्या चीज़ है बहलाये बहलता ही नहीं ।
और तो और खयालातमें बातें की हैं ।।
—माहे नौ अगस्त १९५१ ई०

काजी मुहम्मद मसरूफ आलम

उनके तसव्वुरातका अल्लाहरे करम !
तनहा न एक लमहेको रहने दिया मुझे ॥
कुछ लडखडा गये थे कदम बज्मेनाजमें ।
उनकी नजरने उठके सहारा दिया मुझे ॥
—आजकल अक्टूबर १९५० ई०

इकबाल सफ़ीपुरी

सब्जा भी, कली भी, गुंचे भी, मौसम भी, घटा भी, जाम भी है ।
ऐसेमें काश तुम आ जाओ, ऐसेमें तुम्हारा काम भी है ॥

इकबाल अजीम

सब खोके भी हम कुछ पा न सके, वोह हमसे अलग, हम उनसे अलग ।
दुनिया जिसे देखे और हँसे, हम ऐसा तमाशा कर बैठे ॥
वोह दर्द नहीं, वोह हूक नहीं, वोह अश्क नहीं, वोह आह नहीं ।
गुल करके मुहब्बतके शोले, हम घरमें अँधेरा कर बैठे ॥
सावनकी झड़ी, घनघोर घटा, शादाब चमन, शादाब फिज़ा ।
इन सबका करें हम क्या आखिर, जब तुम ही कनारा कर बैठे ॥
अंजामकी लज्ज़त याद रही, आगाजकी शिद्दत भूल गये ।
साहिलके छलावेमें आकर, मौजोपै भरोसा कर बैठे ॥
पहलूमें लिये बैठे हैं वोह दिल, 'इकबाल' कि मूसा रश्क करे ।
जो तूरको भी रास आ न सकी, उस बर्कको अपना कर बैठे ॥
—आजकल १ सितम्बर १९४५ ई०

इजहार मलीहाबादी

कभी भूलेसे बज़्मो-इश्को-उल्फ़तमें अगर जाना।
तो पहले ही हद्दे-कुफ़्रो-ईमांमें गुज़र जाना॥
किनारेसे किनारा कर लिया 'इजहारे'-तूफांमें।
बडी तौहीन थी अपनी, किनारेपर ठहर जाना॥

इबरत

इधर आंख झपकी उधर ढल गई वह।
जवानी भी एक धूप थी दोपहरकी॥

इफ्तख़ार आज़िमी

चमनमें नहीं हूँ, तो क्या ख़ूने-दिलसे।
कफ़समें गुलिस्ताँ बनाता रहा हूँ॥
हवादसके इन ख़ारज़ारोंमें हमदम!
गुलोंकी तरह मुसकराता रहा हूँ॥
मुहब्बतकी तारीकिये-यासमें भी।
चरागे-तमन्ना जलाता रहा हूँ॥

—निगार मार्च १९५३ ई०

क़तील

कोई ताबिन्दा किरन यूँ मेरे दिलपर लपकी।
जैसे सोये हुए मज़लूमपै तलवार उठे॥

मेरे गमख़्वार! मेरे दोस्त!! तुम्हें क्या मालूम?
जिन्दगी मौतकी मानिन्द गुज़ारी मैंने॥

कमर शेरवानी

कभी आशियांकी तमन्ना मुसलसल।
कभी आशियाँ तक गये, लौट आये ॥

कुछ ऐसी भी खुनक रातें रही हैं।
सहर तक वस तेरी बातें रही हैं ॥
तुझे देखा नहीं है फिर भी तुझसे।
मेरी अक्सर मुलाकातें रही हैं ॥

जीनेवालोको क्या खबर इसकी।
मरनेवाले किधरसे गुजरे हैं ॥

गाहे-गाहे तो होशवालोपर।
हम भी दीवानावार हँसते हैं ॥

ग़म दिये कायनातने क्या-क्या ?
नाम वदले हयातने क्या-क्या ?
रंग देखे मेरी तबाहीके।
आपके इल्तफातने क्या-क्या ?

—निगार अप्रेल १९५३ ई०

क़मर भुसावली

मेरी जिन्दगी है वोह आइना, कई रूप जिसके वदल गये।
कभी अक्स जलवानुमाँ हुआ, कभी जलवे अक्समें ढल गये ॥
यह तसव्वुरातकी महफिलें, यह तखय्युलातके मशगले।
कभी आ गये तेरे पास हम, कभी और दूर निकल गये ॥

न वोह सुबह है, न वोह शाम है, न पयाम है न सलाम है।
तेरी आँख मुझसे जो फिर गई, मेरे सुबहो-शाम बदल गये ॥
तू सम्भल-सम्भलके क़दम बढ़ा, कि यह राहे-इश्क है ए कमर !
जो बिगड़ गये तो बिगड़ गये, जो सम्भल गये तो सम्भल गये ॥

—शायर दिसम्बर १९४७ ई०

कमर

जो हुस्न इश्कमें गुम है, तो इश्क़ हुस्नमें गुम।
सवाल ये है कि अब कौन किसको पहचाने ॥

कदीर

तमाम उम्र रहे कुफ़्र-ओ-दींसे बेगाने।
हर एक राहको हम अपनी रहगुज़र जाने ॥
'कदीर' अपने ही जलवोंसे जो है बेगाने।
वह मेरे दिलकी तमन्नाका हाल क्या जाने ॥

कलीम बरनी

हट गईं नज़रोंसे नज़रें, मैकदा-सा लुट गया।
मिल गईं नज़रोंसे नज़रें, मैकशी होने लगी ॥
बारे-ख़ातिर गर न हो तो इस तरफ भी इक नज़र।
फिर मेरे दर्दे-मुहब्बतमें कमी होने लगी ॥
अव्वल-अव्वल छेड़ उनसे आँखो-आँखोमें हुई।
आख़िर-आख़िर रूहसे वाबस्तगी होने लगी !
ऐ कलीम! उस जानेगुलशनका नज़ारा कुछ न पूछ।
मैं तो क्या फूलोंपै तारी बेखुदी होने लगी ॥

कौसर कुरैशी

मुझे आता है 'कौसर' हश्रगाहोंसे गुजर जाना।
मैं इन्सां हूँ मेरी तौहीन है घुट-घुटके मर जाना॥
यह कैसा अज्मे-मंजिल ऐ अमीरे-जादहे-मंजिल !
यह क्या अन्दाज है, दो गाम चलना और ठहर जाना॥

ख़लिश दर्दी वड़ौदी

खेलते हैं जो मज़लूमोकी जानोंसे।
हैवान अच्छे हैं ऐसे इन्सानोंसे॥
फिर तूफानोंपर भी काबू पा लोगे।
पहले टकराना सीखो तूफानोंसे॥
दिलका रोना रोयें हम किसके आगे।
दुनिया ही अब ख़ाली है इन्सानोंसे॥
मैं भी 'ख़लिश' दुनियामें हूँ लेकिन इस तरह—
दूर हकीकत हो जैसे अफसानोंसे॥

—शायर जून १९५० ई०

खिजाँ प्रेमी

किसीकी यह अदा कितनी भली मालूम होती है।
नज़र उठती नहीं, उठती हुई मालूम होती है॥

वही आपका तसव्वुर, वही अश्ककी रवानी।
युँ ही बुझ गईं उमंगें, युँ ही मिट गई जवानी॥

यह मैंने माना कि आज हर शयपै जिन्दगीका निखार-सा है।
न जाने क्यो यह हसीन मंजर, मेरी निगाहोंपै बार-सा है॥

चलो आज जी भरके आँसू वहा लें।
यह तारोभरी रात आये-न-आये ॥

गम एक इम्तहान था इन्सानके लिए।
जो लोग अहले जौक थे, वोह मुसकरा दिये ॥

ख़ुरशीद फरीदाबादी

आ जाये न उनकी निगहेमस्तपै इलजाम।
ऐ दोस्त ! न कर तजकरिये गर्दिशे एय्याम ॥

माना कि हर बहारमें पर टूटते रहे।
फिर भी तवाफे-सहने-गुलिस्ताँ किये गये ॥
जितना वह लुत्फ हमपै फरावाँ किये गये।
उतना ही हाल अपना परीशाँ किये गये ॥

इक राहे-मुस्तकीमपै थी गामजन हयात।
मुडने लगे तो उनसे मुलाक़ात हो गई ॥
जव दिलकी उस नजरसे मुलाकात हो गई।
लव सर-व-मुहर रह गये और बात हो गई ॥

कफस दूर ही से नजर आ रहा है।
कयामत है अपनी वुलन्द आशियानी ॥

गुलजार देहलवी

मौस्सर हादसे अर्जो-समाके मुझपै क्या होते ?
मेरी फितरतने सीखा ही नहीं मुश्किलसे डर जाना ॥

जहाँ इन्सानियत वहशतके आगे जिवह होती है।
वहाँ जिल्लत है दम लेना, वहाँ बहतर है मर जाना ॥

जमील

ख़ुश्क होते नहीं मेरे आँसू।
बार-हा मुसकराके देख लिया ॥

हसरत ही रह गई कि जहाने-ख़राबमें।
दो दिन तो ज़िन्दगीके ख़ुशीसे गुज़ारते ॥

उनकी ख़्वाहिश भी यही इश्कका मंशा भी यही।
अपनी हस्तीको बहरहाल मिटा देना था ॥

जलील किदवई

क्या इससे भी पुरदर्द कोई होगा फसाना ?
हम जानसे जाते रहे, और उसने न माना ॥

—निगार अप्रैल १९५२ ई०

जाफ़री

[सर इकबालकी मशहूर नज्म—"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा" की पैरेडी]

रहनेको गो नहीं है लाहौरमें ठिकाना।
चीनो-अरब हमारा, हिन्दोस्ताँ हमारा ॥
रहते हैं उस मकाँमें छत जिसकी आस्माँ है।
खंजर हिलालका है, कौमी निशाँ हमारा ॥
दफ़्तर दिया है हमको छीन और झपटके ऐसा।
हम उसके पासवाँ हैं, वोह पासवाँ हमारा ॥

जिनको मकाँ मिले थे, कहते थे उनसे चूहे।
"आसाँ नहीं मिटाना, नामोनिशाँ हमारा ॥"

पुराना कोट

वना है कोट यह नीलामकी दुकांके लिए।
सिलाये-आम है याराने-नुक्तादांके लिए॥

वडा वुज़ुर्ग है यह आजमूदाकार है यह।
किसी मरे हुए गोरेकी यादगार है यह॥

न देख कुहनियोंपर इसकी खस्ता सामानी।
पहन चुके हैं इसे तुर्क और ईरानी॥

जगह-जगहपै फिरा, मिस्ले-मारकोपोलो।
यह कोट, कोटोका लीडर है, इसकी जय वोलो॥

वड़ा वुज़ुर्ग है यह, गो कलील क़ीमत है।
मियाँ वुज़ुर्गोका साया वड़ा गनीमत है॥

जगह-जगह जो यह कीडोंकी जर्वकारी है।
नई तरहकी यह सनअ़त है दस्तकारी है॥

जो कद्रदाँ हैं, वोह जानते हैं कीमतको।
कि आफताव चुरा ले गया है रगतको॥
है इसपै धव्वे जो सुर्खीके और सियाहीके।
निशान है किसी टीचरकी वादशाहीके॥

जगह-जगह जो यह धव्वे हैं और चिकनाई।
पहन चुका है कभी इसको कोई हलवाई॥

गुज़िश्ता सदियोकी तारीखका वरक है यह कोट।
खरीदो इसको कि इवरतका इक सवक़ है यह कोट॥

जावर मुहम्मद कासिम

मुसकराहटसे यह हुआ जाहिर।
दिलबरीमें है तू बडा माहिर॥
क्यो बुलाती है मौजए-दरिया।
डूबनेमें हूँ मैं ही क्या माहिर ?
साथ मेरा न दे सके तारे।
चार झोकोमें सो गये आखिर॥
अपनी सगीन गोद फैला दे।
मौत! आता है इस तरफ 'जावर'॥

—आजकल १ दिसम्बर १९४६ ई०

जावर फतहपुरी

कफसमें डाल दिया है सजा-जजाके मुझे।
करम किया कि सितम, आदमी बनाके मुझे ?

यह मानता हूँ कि बेशक गुनाहगार हूँ मैं।
खता मुआफ ! मैं तेरी तरह खुदा तो नहीं॥

हजार गम सहे मैंने, हजार दुख झेले।
मुसीबतोसे मिरा दिल अभी बहा तो नहीं॥

सजा-जजाके झमेलोसे गर मिले फुर्सत।
तो ग़ौर करना ब-आगोशे-खिलवते-वहदत॥
लिबासे-नग हूँ तेरा कि जेवरे-जीनत !
मगर है तनपै तेरे खिलअ़ते-रबूबीयत॥

मेरे खुदा तुझे अब यह भी सोचना होगा।
करम किया कि सितम आदमी बनाके मुझे॥

रंगबहादुरलाल जिगर

यकसाँ जो हसीनोंकी तकदीर 'जिगर' होती।
क्यो शमा जली होती, क्यो फूल खिला होता॥

खिले हैं फूल जो रोई है रातभर शबनम।
हँसी नहीं है हसीनोका मुसकरा देना॥

रिया नीयतमें थी, जाहिदने गो सजदोंमें सर मारा।
सियहरूईका धब्बा रह गया, दाग़े-जबीं होकर॥

तमकीन सरमस्त

अब कुछ इस तरह बेकरार है दिल।
जैसे कोई सकून पा जाये॥
एक है दोनो, यास हो कि उम्मीद।
एक तड़पाये, एक बहलाये॥
होश आया है बेख़ुदी लेकर।
काश ऐसेमें तू भी आ जाये॥
अब ख़ुशी भी गराँ गुजरती है।
कोई किस तरह दिलको बहलाये॥
एक ऐसा भी है मुकामे-सकूँ।
दिल जहाँ बेकरार हो जाये॥
आज है वजहे-जिन्दगी 'तमकीं'!
वही अरमाँ, जो बर नहीं आये॥

—निगार दिसम्बर १९४९ ई०

मुहम्मद यासीन तसकीन

कुछ और पूछिये यह हकीकत न पूछिये।
क्यों मुझको आपसे है मुहब्बत, न पूछिये॥

न जाने मुहब्बतमें क्यों है जरूरी।
वोह कुछ हसरतें जो कभी हों न पूरी॥

मुझे अजीज सही खाके-दिल मगर यह क्या ?
तुम्हींने आग लगाई तुम्हीं बुझा न सके॥
वोह क्या करेंगे मदावाये दर्दे-दिल-'तसकीं'।
जो इक निगाहे-मुहब्बतकी ताब ला न सके॥

इश्क़से पहले न समझे थे, ख़ुशी होती है क्या ?
क्यों चमकते हैं सितारे, चाँदनी होती है क्या ?

कोई हँस रहा है, कोई रो रहा है।
यह आख़िर क्या तमाशा हो रहा है॥
मुहब्बतमें किसीकी क्या शिकायत।
जो होता आ रहा है, हो रहा है॥

लबपर तबस्सुम आँखोंमें आँसू।
हम लिख रहे हैं, अफसानये-दिल॥

—निगार अप्रेल १९५२ ई०

ताबिश सुलतानपुरी

जहाँवाले न देखें इसलिए छुप-छुपके पीता हूँ।
ख़ुदाका ख़ौफ कैसा ? वह तो ऐबपोश है साकी !

तुर्फा कुरैशी

लुटी-लुटी-सी हयाते-आलम, मिटा-मिटा-सा जहाँका नक्शा ।
यह किसकी नजरोंकी जुम्बिशोंपर, निजाम कायम है जिन्दगीका ?

दर्द सईदी टोकी

निगहमें अजामे-जुस्तजू है, क़दम भी आगे बढा रहा हूँ ।
नजर मुकद्दर ही पर नहीं है, ख़ुदाको भी आजमा रहा हूँ ॥
यह क्यों फिज़ापर है यास तारी, यह हर तरफ क्यों उदासियाँ हैं ।
अभी तो अपनी तबाहियोंपर मैं आप भी मुसकरा रहा हूँ ॥

आ गया सब्र जीते जी आख़िर ।
दिलपर एक ऐसी चोट भी आई ॥
मौतकी लैमें इश्कने अक्सर ।
दास्ताने-हयात दोहराई ॥
क़िस्सये-ग़म जहाँसे दुहराया ।
उम्रे-रफ़्ता वहींसे लौट आई ॥

जब तक तेरा सितम न गवारा हुआ मुझे ।
तेरा करम भी मेरे लिए नागवार था ॥
—निगार मार्च १९४८ ई०

कुछ ऐसे गिर गये हैं किसीकी नज़रसे हम ।
हों जैसे हर निगाहमें नामोतबर-से हम ॥
अब उनके दरसे कोई ताल्लुक नहीं, मगर—
सर फोडते हैं आज भी दीवारो-दरसे हम ॥
अक्सर बयाने-गममें उलझे हैं इस तरह ।
जैसे कि अपने हालसे हों बेख़बर-से हम ॥

न वोह रास्ते हैं, न वोह मंजिलें हैं।
वदल ही दिया जैसे रुख़ ज़िन्दगीने ॥
अभी आदमी-आदमीका है दुश्मन।
अभी ख़ुदको समझा नहीं आदमीने ॥
जहाँ सैकड़ो वुतकदे ढा दिये हैं।
ख़ुदा भी तराशे हैं कुछ वन्दगीने ॥
—निगार दिसम्बर १९४७ ई०

नाजिश परतापगढ़ी

तुमने तो आज खो ही दिया था विकारे-गम।
वोह तो यह कहिये सईए-करम रायगाँ गई ॥

सितारे डूवते हैं, साँस उखड़ी जाती है।
यह वक़्त वोह है किसीका अव इन्तज़ार नहीं ॥

तेरी राह छोडके वढ गया तेरे दरसे होके गुज़र गया।
तेरी याद पहुँची है अव कहाँ कि तू जहन ही से उतर गया ॥
कभी तूने मुझपै किये सितम तो यकीने-लुत्फमें खो गया।
कभी तेरे लुत्फो-करमपै भी मेरे दिलमें वहम गुज़र गया ॥
तुम्हे आज देखके महरवाँ सभी जी ही जी में हैं शादमाँ।
मगर एक यह दिले-नातवाँ कि न जाने किसलिए डर गया ॥
—निगार सितम्वर १९५१ ई०

मैंने वरबतके किसी तारको जव भी छेडा।
मेरे नग़मोकी तरफ दर्दके डेरे लपके ॥

दुनियाकी तलव ख़्वाहिशे-उक़बा भी नहीं है।
हद यह है कि अब उनकी तमन्ना भी नहीं है ॥

कुछ यह है कि उनको भी करमकी नहीं आदत ?
कुछ उनका करम मुझको गवारा भी नही है ।।
—निगार अगस्त १९४८ ई०

एक ऐसा भी मुकाम आता है राहे-शौकमें ।
जिस जगह कदमोको खुद ही डगमगा देना पडा ।।

मौत मांगू कि जिन्दगी माँगू ।
ऐ गमे-दिल अजीब उलझन है ।।

रख जबींने-शौकमें महफूज गरमी-ए-नियाज ।
कौन जाने तुझको इक सजदा कहां करना पडे ?

अब उसको जिद यह है, तुम्हे देखेंगे बेनकाब ।
तुमने भी किन अदाओको इन्सां बना दिया ।।

वोह तो खैरियत गुजरी, ग़मने गोद फैला दी ।
वरना हज़रते 'नाजिश' कौन आपका होता ?

शिकवा, न शिकायत न तसव्वुर न खयालात ।
अल्लाहरे यह मेरी मुहब्बतके मुकामात ।।
जैसे ही किया तर्के-मुहब्बतका इरादा ।
आने लगे भीगी हुई पलकोके पयामात ।।
—शायर अप्रेल १९५० ई०

मुझे दे सकी न तसकीं तेरी शरमगीं हँसी भी ।
वही दिलकी धडकनें हैं, वही आँखकी नमी भी ।।
मुझे दे कहीं न धोका, यह फसुर्दा खातिरी भी ।
मैं लुटा रहा हूँ जिसपर गमेयारकी खुशी भी ।।

यह लुटा-लुटा-सा आलम,यह उड़ी-उडी-सी रंगत ।
कहीं छिन न जाये मुझसे मेरे गमकी ताजगी भी ॥
उन्हे अब करमकी जहमत मेरे वास्ते न होगी ।
मुझे रास आ चली है, मेरी तल्ख़ जिन्दगी भी ॥
मैं कुछ ऐसी मंजिलोसे भी गुजरके आ रहा हूँ ।
कि जहाँ न गा सका था, कोई गमकी रागनी भी ॥

मैं लबोको बख्शता हूँ यूं ही बेसबब तवस्सुम ।
कि समझ न पाये कोई, मेरी रूहका तलातुम ॥
मेरे दर्दमें निहाँ है, वोह निशाते-जाविदानी ।
कि निचोड दूं जो आहे तो टपक पड़े तवस्सुम ॥
नहीं जिक्रेगम लबोपर, मगर इसको क्या करूँ मैं ।
कि अलम मिरी निगाहोको सिखा गया तकल्लुम ॥

—शायर अक्तूबर १९५०

निशात सईदी

बरबादियोने रूप भरा है बहारका ।
बर्को-बलाकी जदपै गुलिस्ताँ अभीसे है ॥
यह दिल्ल ववाये-फिरका परस्तीका है शिकार ।
इन्सानियतकी मौत नुमायाँ अभीसे है ॥
रहबरने राहजनसे बढाई है दोस्ती ।
मंजिलपै आके लुटनेका इमकाँ अभीसे है ॥

—शायर दिसम्बर १९४९ ई०

नीसाँ अकबराबादी

वोह मेरी हालतसे हैं परीशाँ, नहीं है कुछ उनका दिल भी खन्दाँ ।
मगर तबस्सुमकी ओटमें वोह उसे छुपाना भी चाहते हैं ॥

कोई वताये कि क्या करें हम, अजीव आलम है कश-म-कशका ।
खयाले-पासे-ख़ुदी भी है और उन्हे वुलाना भी चाहते हैं ।।
उन्हे गरूरे-जमाल भी है, मगर हमारा खयाल भी है ।
वोह आयें 'नसियां' तो कैसे आयें, मगर वोह आना भी चाहते हैं ।।

मेरे वख़्ते-नारसाने दिया इस जगह भी घोका ।
मुझे थी तलाशेतूफ़ाँ मुझे मिल गया कनारा ।।

जवाँपै मुहरे-सकूत है और नजरसे करते हैं पुरसिशे-दिल ।
इस अहतियाते-नजरके सदके समझ न जाये कहीं जमाना ।।

'नीसाँ' खुशीके नामपै जो मुसकरा दिया ।
तकदीरपै वोह तंज था, लबपर हँसी न थी ।।

जैसे कोई कुछ कहना चाहे यूँ होट हिले और थर्राये ।
इससे ज्यादा ऐ 'नीसाँ' ! तुम जुरअते-शिकवा क्या करते ?

—निगार जुलाई १९४६ ई०

नक़्श सहराई

दताएँ तो वताएँ हम भला क्या ?
मुहव्वत है मुहव्वतके सिवा क्या ?
जफाओकी खताओका गिला क्या ?
हर इश्क़से होती आई है हुआ क्या ?
अक़ीदेकी ही सब वातें हैं वरना ।
यह मस्जिद क्या, हरम क्या, मयकदा क्या ?
सफ़ीनेका नहीं, मुझको यह गम है ।
जो शह दे नाखुदाको, वोह ख़ुदा क्या ।।

कासिम बशीर 'नकवी'

हम सहने-गुलिस्ताँमें अक्सर यह बात भी सोचा करते हैं ।
यह आँसू हैं किन आँखोंके, फूलोंपै जो बरसा करते हैं ॥
जीना हमें कब रास आया है, मरना हमें कब रास आयेगा ?
हाँ सिर्फ तेरे ग़मकी खातिर, हर जब्र गवारा करते हैं ॥

—आजकल मार्च १९५३ ई०

नज्म

निगाहेयास मेरी काम कर गई अपना ।
रुलाके उठ्ठे थे वोह, मुसकराके बैठ गये ॥

नजर सहवारवी

हमेशा चश्मे-हसरत आबदीदा ।
मुहब्बत और इतनी गमरसीदा ?
न जाने रात क्या गुजरी चमनमें ।
सहरके वक़्त थे गुल आबदीदा ॥

इस फिक्रो-नजरकी दुनियासे इन्साँका उभरना लाजिम है ।
गुल कैसे खिलेंगे आइन्दा ? आईने-गुलिस्ताँ क्या होगा ?

जुनूँ ही हर कदमपै साथ देता है मुहब्बतका ।
ख़िरदकी रहबरी, अन्देशये-सूदो-जियाँ तक है ॥

—निगार मई १९५२ ई०

जाहिद न छेड़ रहमते-यजदाँकी[1] गुफ़्तगू ।
हम कर रहे हैं तजजये-अहरमन[2] अभी ॥

---

[1]ईश्वरकी दयालुताकी, [2]शैतानका तजुर्बा ।

जिन्दगीपर डाल ली, जिसने हकीकत-बीं निगाह।
जिन्दगी उसकी नजरमें बे-हकीकत हो गई॥
—निगार अप्रेल १९५३ ई०

नजीर लुधियानवी

जब खुद किया था अहदे-वफा होके महरबां।
उस दिनको याद तेरी कसम कर रहा हूँ मैं॥
एक बुतका हाथ-हाथमें थामे हुए 'नजीर'!
किस शानसे तवाफे-हरम कर रहा हूँ मैं॥
—आजकल १ मार्च १९४६ ई०

नजीर बनारसी

खा-खाके शिकस्त, फ़तह पाना सीखो।
गरदाबमें कहक़हा लगाना सीखो॥
इसी दौरे-तलातुममें अगर जीना है।
खुद अपनेको तूफान बनाना सीखो॥

खुद होके तुलू सुबहे-नौ-पैदाकर।
खुरशीद बन ऐ सुर्ख़ लकीरोंके फक़ीर॥

नश्तर हतगामी

जो सैयादने पूछा "क्या चाहते हो"?
"कफस" कह गया आशियां कहते-कहते॥
जहां दास्तांगोका रुकना सितम था।
वहीं रुक गया दास्तां कहते-कहते॥
—शायर अप्रेल १९५० ई०

फ़रक़ान

हवास रहते तो कुछ अर्जे मुद्दआ करता।
वफ़ूरे-इश्क़में क्या कह गया ख़ुदा जाने?

बाक़ी सद्दीक़ी

जो दुनियाके इल्ज़ाम आने थे आये।
बहुत ग़मके मारोंने पहलू बचाये॥
न दुनियाने थामा न तूने सम्भाला।
कहाँ आके मेरे क़दम डगमगाये॥
किसीने तुम्हे आज क्या कह दिया है।
नज़र आ रहे हो, पराये-पराये॥
मुलाक़ातकी कौन-सी है यह सूरत।
न हम मुसकराये न तुम मुसकराये॥
उलझते हैं हर गामपर ख़ार 'बाक़ी'!
कहाँ तक कोई अपना दामन बचाये॥

सफ़रका हौसला लाते कहाँसे?
इरादा करते-करते हो गई शाम॥
यह कैसी बेख़ुदी है, लिख गया हूँ।
मैं अपने नामके बदले तेरा नाम॥
माहे नौ मार्च १९५३ ई०

आदाबे-चमन भी सीख लेंगे।
ज़िन्दाँसे अभी निकल रहे हैं॥
फूलोंको शरार कहनेवालो!
काँटोंपै भी लोग चल रहे हैं॥

बासित भोपाली

उस जुल्मपै कुर्बां लाख करम उस लुत्फपै सदके लाख सितम ।
उस दर्दके काबिल हम ठहरे, जिस दर्दके काबिल कोई नहीं ।।
क़िस्मतकी शिकायत किससे करें, वोह बज्म मिली है हमको, जहाँ—
राहतके हजारो साथी हैं, दुख-दर्दमें शामिल कोई नहीं ।।

कुछ न कुछ हुआ आखिर दौरे-आस्मां अपना ।
ढूँढ़ने चले उनको मिल गया निशां अपना ।।

तौबा यह मंजिले-वीराने-मुहब्बत तौबा ।
वोह नहीं, मैं नहीं, नज्जारा-नहीं, होश नहीं ।।

यां यह वफूरे-बेखुदी, वां वोह गरूरे-दिलबरी ।
फिक्र किसे सवालकी, होश किसे जवाबका ।।
—निगार मई १९४६ ई०

न जज्बे-दिल दिखा सके, न रब्ते-दिल मिटा सके ।
नजर उठाके रह गये, वोह जब नजर न आ सके ।।

यह शिकवाहायेबस्त क्या, यह सादा-सादा अश्क क्या ?
इन आंसुओमें खूने-दिल मिला, अगर मिला सके ।।

मजाके-इश्क दरखुरे, खिरद नहीं, नहीं सही ।
जुनूं भी एक चीज है, बढ़ा अगर बढा सके ।।
—निगार दिसम्वर १९४५ ई०

बिस्मिल सईदी हाशमी

अन्दाजे-जुनूं इश्कके अब जा नहीं सकते ।
तुम भी दिले-बेतावको समझा नहीं सकते ।।

अब दिलसे किसी वक्त उभर आते हैं 'बिस्मिल' !
वोह अश्क जो आँखोमें नजर आ नहीं सकते ।।

हर बुलन्दो-पस्तको इस तरह ठुकराता हूँ मैं ।
कोई यह समझे कि जैसे ठोकरें खाता हूँ मैं ।।
देख सकता ही नहीं अव्वल तो मैं उनकी तरफ ।
देख लेता हूँ तो फिर देखे चले जाता हूँ मैं ।।

इलाही दुनियामें और कुछ दिन, अभी कयामत न आने पाये ।
तेरे बनाये हुए बशरको अभी मैं इन्सां बना रहा हूँ ।।

कहते हैं मुहब्बत फकत उस हालको 'बिस्मिल' !
जिस हालको उनसे भी अक्सर नहीं कहते ।।

नहीं अपने किसी मकसदसे खाली कोई भी सजदा ।
खुदाके नामसे करता है इन्सां बन्दगी अपनी ।।

ठोकर किसी पत्थरसे अगर खाई है मैंने ।
मंजिलका निशां भी उसी पत्थरसे मिला है ।।

तुम न होते अगर जमानेमें ।
किससे उठता सितम जमानेका ।।

खुदाके बन्दे भी काबेमें अब नहीं मिलते ।
सनमकदेमें खुदा भी बनाये जाते हैं ।।

आती है हर तरफसे सदाये-दरा मुझे ।
किन मरहलोमें छोड़ गया क़ाफिला मुझे ।।

मायूसियोंके बाद भी तो कुछ यह हाल है।
बैठा हुआ हूँ जैसे अभी इन्तज़ारमें॥
—निगार मार्च १९४९ ई०

तुम अपने कौल तुम अपने करार याद करो।
और उनपै फिर मेरा वोह् ऐतबार याद करो॥
भुला चुके सो भुला ही चुके वोह् अब 'बिस्मिल'!
हज़ार याद दिलाओ हज़ार याद करो॥

उनके फरेबेलुत्फके दिन भी गुज़र गये।
अब मुतमइन हैं, अपने ग़मे-मौतबरसे हम॥

बैठें तो किस उम्मीदपै, बैठे रहें यहाँ।
उट्ठें तो उठके जाएँ कहाँ तेरे दरसे हम?

दुहराई जा सकेगी न अब दास्ताने-इश्क़।
कुछ वोह कहींसे भूल गये हैं कहींसे हम॥

बिस्मिल शाहजहाँपुरी

ख़ुदा मालूम? मूसा तूरसे क्यों बेकरार आये?
मेरी मंज़िलमें ऐसे मरहले तो बेशुमार आये॥
वोह् साकी जिसकी आँखोंपर फरिश्तोंको भी प्यार आये।
अगर नज़रें उठा दे चश्मे-फितरतमें ख़ुमार आये॥

बिहार कोटी

कफस बर्कोशररकी ज़दसे बाहर ही सही लेकिन।
गुलिस्ताँ फिर गुलिस्ताँ है, नशेमन फिर नशेमन है॥

वहीं हज़ारों वहिश्तें भी हैं ख़ुदा वन्दा !
सिसक-सिसकके कटी ज़िन्दगी जहाँ मेरी ॥

कुछ अपने एतमादे-नज़रसे भी काम ले ।
चल कारवाँके साथ, मगर राहवरसे दूर ॥
यह अपने-अपने ज़र्फ़े-तमन्नाकी वात है ।
वरना चमन करीव था, वीराना घरसे दूर ॥
अव नाख़ुदापै छोड उसे या ख़ुदापै छोड ।
साहिलसे दूर है न सफीना भँवरसे दूर ॥
ख़ुश ऐतमादियोका सताया हुआ हूँ मैं ।
जव भी लुटा-लुटा हूँ, रहे पुरख़तरसे दूर ॥

—शायर जनवरी १९५३ ई०

लाता है रंग जज़्वे-मुहब्बत कभी-कभी ।
उनपर भी टूटती है कयामत कभी-कभी ॥

—शायर सितम्वर १९४६ ई०

मंजर सिद्दीकी अकवरावादी

जी सके इन्सान वेख़ौफो-ख़तर ऐसा तो हो ।
हो अगर नज़्मे-निज़ामे वहरो-वर ऐसा तो हो ॥
हुस्न भी हो माइले-परवाज़ सहराकी तरफ ।
कम-से-कम इक मौसमे-दीवानागर ऐसा तो हो ॥

—शायर जनवरी १९४७ ई०

फूलोंसे जो खेला करते थे, दर-दरकी ठोकर खाते हैं ।
जीनेकी तमन्ना थी जिनको, अव जीनेसे घवराते हैं ॥
इस दरजा विगाड़ा है ख़ुदको, इस दौरके आदमज़ादोंने ।
इन्सान तो है फिर भी इन्साँ, हैवानोको शरमाते हैं ॥

मजाज लोदी अकबरावादी

यह राहे-मुहब्बत है धोका न खाना।
क़दम जो उठाना सम्भलकर उठाना॥
अगर ख़ुदनुमाईसे फ़ुरसत कभी हो।
मेरे ग़मकदेमें भी तशरीफ लाना॥

महमूद अयाज बगलोरी

मुझे जिनके दीदकी आस थी, वोह मिले तो राहमें यूँ मिले।
मैं नज़र उठाके तड़प गया, वोह नज़र झुकाके निकल गये॥
यह ख़बर भी है तेरा सगेदर, जिन्हे दो जहाँसे अज़ीज़ था।
वही अहले-दर्दके कारवाँ, तेरी रहगुज़रसे निकल गये॥

निशाते-ज़ीस्तके धोकोपर आँख भर आई।
कहाँ पहुँचके तुम्हारे करमकी याद आई॥
तेरा खयाल नहीं, तेरा ग़म नहीं लेकिन।
बिछड़के तुझसे हमें जिन्दगी न रास आई॥

दिलको अभी शऊरे-निशातो-अलम न था।
वरना तेरे फिराकका आलम भी कम न था॥

तेरे अलममें ज़मानेका दर्द पिन्हा है।
तुझे भुलाऊँ तो दुनियाको भूलना होगा॥
—निगार दिसम्बर १९५० ई०

महशर

मुद्दतें हो गई है चुप रहते।
कोई सुनता तो हम भी कुछ कहते॥

अलीसज्जाद महर अकबराबादी

नहीं है गर महरबाँ वोह मुझपर तो मुझको भी कोई ग़म नहीं है।
किसीका बारे-करम उठाना सितम उठानेसे कम नहीं है॥
जो कैफ पिन्हाँ है सोज़ेग़ममें, उसे कोई मेरे दिलसे पूछे।
मुसीबतोंसे जो है गुरेज़ाँ, उन्हे मज़ाक़े-अलम नहीं है॥
बजा तेरी सईए-लुत्फ़[1], लेकिन, तुझे ख़बर यह नहीं है शायद।
कि तेरा मुझपर सितम न करना भी भूल जानेसे कम नहीं है॥
हरीफे-तूफ़ाँ जो बन सके बन, कि जिन्दगी नाम है इसीका।
सहारा मौजोंका लेके उठना भी डूब जानेसे कम नहीं है॥
वोह लाख मुझसे चुरायें नज़रें, वोह लाख मुझसे करें तग़ाफुल।
न देखें मुझको यह उनकी कोशिश भी कुछ तवज्जहसे कम नहीं है॥
ख़ुशी ग़मे-हिज्रो-दर्दे-उल्फत है जिससे वाबिस्ता याद उनकी।
यह कैफियत इज़्तराबकी-सी सकून पानेमे कम नहीं है॥
भुलायें वह लाख 'महर' मुझको, रहेगा इक रब्त फिर भी बरहम।
कि भूल जानेकी सअ़ईए-पैहम भी याद करनेसे कम नहीं है॥

—निगार अप्रेल १९४६ ई०

हज़ार उनकी जफाओंने करवटें बदलीं।
सकूते-ग़ममें न कुछ भी मेरे कमी आई॥
वे मेरे पाससे गुज़रे जो बेनियाज़ाना।
तो मेरे होंटोंपे बेसाख़्ता हँसी आई॥

—निगार मई १९४८ ई०

महवी सद्दीकी

यहीं दमभर हमें आसायशे-कौनैन[2] दे दीजे।
वहाँ तो आपको मसरूफियत कुछ और भी होगी॥

---

[1]आनन्द पहुँचानेका प्रयत्न, [2]सान्सारिक सुख-चैन।

मुख़्तार अदीबी मालीगाँवी

तुम्हे मुबारक हो कसरो-ईवाँ, यह ऐशोमस्तीके साज़ो-सामाँ ।
है झोपडोसे मुझे मुहब्बत, मैं ग़मके मारोका साथ दूंगा ।।
हज़ारो भूके तड़प रहे हैं, हज़ारो बेकार फिर रहे हैं ।
बनूंगा बेकसका मैं सहारा, मैं बेसहारोका साथ दूंगा ।।
न मुझको फूलोसे दुश्मनी है, न मुझको खारोसे है अदावत ।
जो इख़्तलाफे-चमन मिटा दें, मैं उन बहारोका साथ दूंगा ।।

—शायर अक्टूबर १९५० ई०

यावर अली

फिर दिलको ग़मकी आँच दिये जा रहा हूँ मैं ।
जीना है गो अज़ाब, जिये जा रहा हूँ मैं ।।
तुम पास ही नहीं तो मज़ा जिन्दगीका क्या ?
जीता नहीं हूँ साँस लिये जा रहा हूँ मैं ।।
ख़ुद्दारियोंसे दस्तो-गरेबाँ है दर्दे-दिल ।
रोता नहीं कि अश्क पिये जा रहा हूँ मैं ।।
आयेगा दिन कि याद करोगी मुझे यूँ ही ।
जिस तरह तुमको याद किये जा रहा हूँ मैं ।।

—आजकल १ मार्च १९४६ ई०

रज़ा कुरेंशी

यूँ लिये बैठा हूँ दिलमें उनकी हसरतके निशाँ ।
जैसे पीछे छोड जाये गर्द कोई कारवाँ ।।

कुछ मेरी नज़रने उठके कहा, कुछ उनकी नज़रने झुकके कहा ।
झगडा जो न चुकता बरसोमें तै हो गया बातो-बातोमें ।।

रसा बरेलवी

आग़ाज़ ही में लुट गया, सरमायये-निशात ।
अंजामे-आरज़ूपै नज़र क्या करेंगे हम ॥

राहत 'रसा' है इश्कमें हर काविशे-हयात ।
क्यों तुमसे इल्तजाये-मदावा करेंगे हम ॥

—निगार मार्च १९४८ ई०

रागिब मुरादाबादी

ख़ुशा वोह दिन जो तेरी आरज़ूमें ख़त्म हुआ ।
ज़हे वोह शब जो तेरे इन्तज़ारमें गुज़री ॥

उसी चमनमें हूँ 'रागिब' ! उमीदवारे-बहार ।
ख़िज़ाँ जहाँसे लिबासे-बहारमें गुज़री ॥

राज चान्दपुरी

न सोज़ है तेरे दिलमें, न साज़ फितरतमें ।
यह ज़िन्दगी तो नहीं, ज़िन्दगी हकीकतमें ॥
जो बुलहवस थे, वोह गुमराह हो गये आख़िर ।
अकेला रह गया, मैं मंज़िले-मुहब्बतमें ॥

परवाने ख़ुदगरज़ थे कि ख़ुद जलके मर गये ।
अहसासे-सोज़े-शमअ़ शबिस्ताँ न कर सके ॥

जानता हूँ बता नहीं सकता ।
ज़िन्दगी किस तरह हुई बरबाद ॥

—शायर नवम्बर १९४३ ई०

वोह शेख़े-वक्त हो, कि बिरहमन, ख़ुदा गवाह ।
रहबर बनाऊँगा न किसी कमनज़रको मैं ।।
—शायर सालनामा १९५१ ई०

राज रामपुरी

नियाज़े-इश्कमें ख़ामी कोई मालूम होती है ।
तुम्हारी बरहमी क्यो बरहमी मालूम होती है ?

दिल चुरानेकी अबस उनसे शिकायत कर दी ।
अब वोह आँखें भी चुराते है पशेमाँ होकर ।।

अपनी हस्तीसे दुश्मनी थी मुझे ।
याद हैं उनसे दोस्तीके दिन ।।

वोह सामने सरे-मंज़िल चराग जलते है ।
जवाब पाँव न देते तो मैं कहाँ होता ?

महसूस हो रहा है कि गुम हो रहा हूँ मैं ।
किस सिम्त आ गया, तुझे मैं ढूँड़ता हुआ ।।

हर इक शयसे जवानी उबल पडी आख़िर ।
मेरी नज़रसे कहाँ तक कोई हिजाब करे ।।

ज़िन्दा रहना न सिखाओ लेकिन—
जान देना तो बता दो हमको ।।

सब्र और मैं, ख़ैर इसका ज़िक्र क्या ?
जा रहे है आप, अच्छा जाइये ।।

इन आँसुओकी हकीकतको कौन समझेगा।
कि जिनमें मौत नहीं, जिन्दगीका मातम है॥

उसकी हसरत? अरे मुआजल्ला।
जिसका चाहा हुआ, कभी न हुआ॥

फुर्सते-अर्जे-मुहब्बत न मिली, खूब हुआ।
आप सुनते भी तो, क्या आपसे कहता कोई॥

—निगार अक्टूबर १९४५ ई०

राज यजदानी

सजाको झेलनेवाले यह सोचना है गुनाह।
कोई कसूर भी तुझसे कभी हुआ कि नहीं॥
वफा तो खैर वडी चीज है, मै सोचता हूँ कि वोह।
जफाकी भी कभी जहमत उठायेगा कि नहीं॥

निसारे-जलवा दिलो-दीं जरा नकाब उठा।
वह एक लमहा सही, एक लमहा क्या कम है॥

अगर सकून वही दो जहांको देता है।
तो कुछ समझके वनाया है वेकरार मुझे॥
अजव करम है कि बेअख्तियारियां देकर।
अता किया है दो आलमपै अख्तियार मुझे॥

रामसरनलाल राही

कुछ ठडी सांसें होती है, अश्कोमें रवानी होती है।
पूछे तो कोई मेरे दिलसे क्या चीज जवानी होती है?

दुनियाके चलनको क्या कहिये, जो चीज है फानी होती है।
बरसो जो हकीकत रहती है, इक रोज कहानी होती है॥
इक ठेस लगी, काँटा-सा चुभा, कुछ दर्द हुआ, आँसू टपके।
बरबाद मुहब्बतकी अक्सर ऐसी ही कहानी होती है॥
—आजकल उर्दू मार्च १९५३ ई०

रोशन देहलवी

तुम्हारे हुस्नकी महफिलमें आये इस तरह आशिक।
कुछ आये इनवीटेशनमें, कुछ आये एजीटेशनसे॥
वोह होगे और जिनको वस्ल इस मौसममें हासिल है।
यहाँ तो शग़ल सरदीमें रहा करता है लिपटनसे॥

रौनक दकनी

ग़मे-हयातको दुनियापै आशकार न कर।
यह एक राज है, जिक्र इसका बार-बार न कर॥
मुहब्बत और जफाओका जिक्र क्या माने?
कभी शुमार सितमहाये बेशुमार न कर॥
अमलकी राहमें होती है मुश्किलें पैदा।
किसीको अपने इरादेका राजदार न कर॥

लतीफ अनवर गुरुदासपुरी

मैं जानता हूँ तेरे गमकी मसलहत[1] लेकिन—
कभी-कभीकी मसर्रत[2] भी साजगार[3] नहीं॥

दिल मुजतरिब[4], निगाह परीशाँ, फिजा उदास।
गोया तेरा खयाल कयामतसे कम नहीं॥

---

[1]कारण, [2]खुशी, [3]शुभ, ठीक, [4]बेचैन,

हाय क्या शै है, वफाका जौक अहदे-इश्कमें।
ख़ुद समझता हूँ, मगर समझा नहीं सकता हूँ मैं॥

अब हमें कोई पूछता ही नहीं।
जैसे हम साहवे-वफा ही नहीं॥

हर नाला रफ़्ता-रफ्ता दुआतक पहुँच गया।
बन्देसे वास्ता था, ख़ुदा तक पहुँच गया॥

न कोई जादा,[1] न कोई मंजिल, न कोई रहबर[2] न कोई रहज़न[3]।
क़दम-कदमपर हजार खदशे[4] न जाने क्या है, न जाने क्या हो॥

फितरतका इशारा है, यहाँ गिरयये-शबनम[5]।
हँसते हुए फूलोको खिजाँ याद नहीं है॥

शायद गमे-हयात[6] ही था मकसदे-हयात।
क्यो वरना इम्बसातसे[7] महरूम[8] कर दिया॥

जमानेका शिकवा न कर रोनेवाले!
जमाना नहीं साथ देता किसीका॥

तुझे कबसे पुकारता हूँ मैं।
क्या तुझे फुर्सते-जवाब नहीं?

जिक्रे-बहार, फिक्रे-खिजाँ, रंजे-बेकसी।
तरतीबे-आशियाँका तकाजा नजरमें है॥

---

[1]पगडडी, [2]पथ-प्रदर्शक, [3]लुटेरा, [4]चिन्ता-भय, [5]ओसका रोना, [6]जीवन-दुःख, [7]खुशीसे, [8]रहित;, खाली।

कई परदे उठाये जा चुके हैं रूए-हस्तीसे ।
मगर हर एक परदा, एक परदेका तकाज़ा है ॥

इज़्तराबे-ग़म सिखाता जायगा ।
रफ़्ता-रफ़्ता दिलको आदाबे-हयात ॥
—शायर जनवरी १९४६ ई०

लुत्फी रिजवाई

कभी खयाल, कभी बनके बर्क़े-तूर आये ।
जब उनको याद किया सामने जरूर आये ॥

यह क्या कि सुबहको नाले हैं शामको आहे ।
कभी तो सब्र तुझे कल्बे-नासबूर आये ॥
निगाह-शौक न होनी थी मुतमइन न हुई ।
अगर्चे राहे-तलबमें हजार तूर आये ॥
अजीब हाल है कुछ तुमपै, मिटनेवालोंका ।
कि जितना सोज बढ़े उतना मुँहपै नूर आये ॥
नजर किसीकी नदामतसे क्या झुकी 'लुत्फी' !
कि याद मुझको खुद अपने ही सब कसूर आये ॥
—निगार सितम्बर १९४७ ई०

सिकन्दरअली वज्द

खुश-जमालोंकी याद आती है ।
बे-मिसालोकी याद आती है ॥
जिनकी आँखोमें था सरूरे-ग़ज़ाल ।
उन गज़ालोकी याद आती है ॥

सादगी लाजवाब है जिनकी।
उन सवालोंकी याद आती है॥
जानेवाले कभी नहीं आते।
जानेवालोंकी याद आती है॥
—निगार अप्रेल १९५३ ई०

धर्मपाल गुप्ता वफा

दुख-दर्द लिया है, गमे-ऐय्याम लिया है।
दिल देके मुहब्बतमें यह इनआम लिया है॥
जब याद किया है तो तुझे याद किया है।
जब नाम लिया है तो तेरा नाम लिया है॥

वफ़ा बराही

यूँ तड़प इश्कमें दिले-मुजतर।
सारी दुनिया तड़पके रह जायें॥

जान देनेका जब इरादा किया।
तुम मेरे सामने चले आये॥

निडर बादाकश हैं कुछ ऐसे कि जैसे—
गुनाहोंको यह बख़्शवाये हुए हैं॥

वसी

हमारे ख़्वाबकी ताबीर देखिये क्या हो?
चमनकी शक्लमें देखे हैं आज परवाने॥

शफ़क़ काजमी

राहते-दिलकी हर तलब, वजहे-मलाल हो गई।
तेरे बग़ैर जिन्दगी, मुझको वबाल हो गई॥

शफक्कत काजमी

मेरे बाद उनकी जफाकोशियोको ।
बहुत याद आई मेरी बेकुसूरी ।।

आहका ता-दरे तासीर पहुँचना मालूम ।
मुफ़्तमें थाम लिया तुमने कलेजा अपना ।।

मिटा दी कसरते-हिरमाँने उनकी याद भी दिलसे ।
मेरे ज़ौके-मुहब्बतकी तबाही और क्या होती ।।
गिरा उनकी निगाहोसे तो सबने फेर लीं आँखें ।
न होते वोह ख़फा मुझसे तो दुनिया क्यो ख़फा होती ।।

जब तक तेरे ख़यालने की रहनुमाइयाँ ।
मंजिलको हम भी ज़ेरे-क़दम देखते रहे ।।
—निगार जून १९४७ ई०
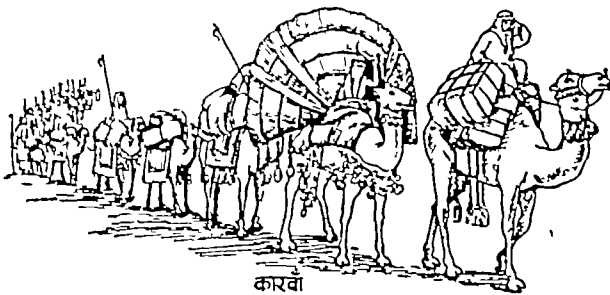
कारवाँ

शेर-ओ-सुख़न

पाँचवाँ भाग

शायरीमे परिवर्त्तनके कारण
नज़्म और गज़ल
गज़की उन्नतिके कारण
गजलपर एतराज़
गज़लका मर्म
गज़लके रूपक
गुलो-बुलबुल
साकी-ओ-मैख़ाना
हुस्नो-इश्क
रगे-तगज़्ज़ुल
पाक इश्क
महबूबका मर्त्तबा
महबूबका जमाल
रोना-बिसूरना बन्द
आशिक-ओ-माशूककी तसवीर
हिज्रे-यार
यास-ओ-हिरमान
रकाबत
सामयिक घटनाये
मुशायरोका प्रारम्भिक रूप
मुशायरोका विकसित रूप
मुराख़्ते
मुनाज़मे
तहरीरी मुशायरे
मौजूदा मुशायरे

मूल्य तीन रुपया